# अनुपम-बलिदान

—लेखक

चन्द्रमोहन 'हिमकर'



हिमकर-प्रकाशन अजमेर (राज.)

# अनुपम-बलिदान



लेखक : प्रो. चन्द्रमोहन 'हिमकर'

प्रथम संस्करण
23 दिसम्बर 1985

प्रकाशक : हिमकर प्रकाशन, अजमेर

व्यवस्थापिका : श्रीमती पार्वती देवी हाड़ा

प्रमुख वितरक

प्रभाकर प्रकाशन

H.N. 1284/32, तीन गुलराज क्वार्टर्स अजमेर (राज.)

मूल्य : रुपये साठ मात्र

---

ANUPAM BALIDAN

---

[GLORIOUS SACRIFICE]

(Novel)

---

मुद्रक :—केशव आर्ट प्रिण्टर्स, अजमेर-305001

अनुपम
बलिदान

# समर्पण

अग्रज साहित्यकार

यशस्वी उपन्यासकार

श्रद्धेय श्री अमृतलाल नागर

को

सादर एवं सस्नेह

'हिमकर'

# कृतिकार द्वारा संदर्भ—विवेचन

मानव समाज का अध्ययन करने के विभिन्न उद्देश्य तथा प्रयोजन होते हैं। मानव नृ-विज्ञान मे मानव उत्पत्ति विकास और विभिन्न प्रवृत्तियों के क्रमिक विकास का अध्ययन करते हैं, समाजशास्त्र के अन्तर्गत मानव की विभिन्न सामाजिक संस्थाओं, रीति रिवाजों, विवाह तथा परिवार की गतिविधियों का अध्ययन किया जाता है।

इतिहास का सामान्य अर्थ हम यही लेते हैं कि मानव द्वारा राज्य निर्माण उसका संचालन, क्रमबद्ध घटनाओं का संकलित विवरण, युद्ध और संधियां राज्य में सामाजिक, सांस्कृतिक योजनाओं, घटनाओं, कलाओं के विकास और मानव कल्याण में मानव का योगदान क्या और किस प्रकार रहा है।

मानव के जन्म और विकास में लाखों वर्ष का समय लगा है। मानव ने जीवित रहने के लिये 'संघर्ष ही जीवन है' इसका भलीभांति परिपालन किया है। प्रकृति के विभिन्न परिवर्तनों, प्रकोपों को सहन करते हुए, उनका प्रभाव वहन करते हुए मानव सदैव ही आगे बढा है। मानव का अदम्य साहस, बुद्धि का विकास, उसका विवेक, कठोर परिश्रम आदि ऐसे तथ्य हैं जो मानव के निरन्तर विकास का परिचायक हैं।

सतयुग में सत्यवादी हरिश्चन्द्र के समय सत्य और कर्म के सिद्धान्त, वचन का मूल्य वास्तविक आदर्श के रूप में पाया जाता था। त्रेतायुग के रामायण काल में उन आदर्शों की शत-प्रतिशत अनुपालना में कुछ शिथिलता पाई जाती है। द्वापर में श्री कृष्ण-बलराम महाभारत के समय में चतुराई, छल-कपट, षड्यंत्र, छद्म, अर्धसत्य, विश्वासघात, धोखेबाजी, अवज्ञा परिपाटी से हटकर सभ्यता और सामान्य परपाटी के विचलन को सफलता प्राप्ति के साधन के रूप में कुशलता मानने लगे। सद्गुणों का महत्व, आदर्श की ओर बढना, अडिग रहने को मानव के सद्गुणों का मापदण्ड मानते थे किन्तु उच्चवंश, उच्च जाति, मान्यता प्राप्त व्यक्ति, समूह की भयंकर त्रुटियों को लीला का आभूषण पहिनाकर उन पर परदा डाल दिया जाता था और साधारण व्यक्ति द्वारा सामान्य त्रुटि को आकार प्रकार में सैकड़ों गुना बढाकर उसे सक्षम एवं सशक्त व्यक्तियों द्वारा दण्डित किया जाता था।

महाभारत के महाविनाशक प्रभाव के पश्चात् भारतवर्ष के क्रमिक इतिहास की घटनाओं तथ्यों एवं प्रामाणिक घटनाक्रम के अभाव में लगभग तीन हजार

वर्षों के काल को हम विलुप्त अथवा अंधेरा युग कह सकते हैं हमें जो कुछ प्रामाणिक सामग्री प्राप्त होती है वह भारत पर यूनान के बादशाह सिकन्दर के आक्रमण से पुनः भूले बिसरे इतिहास की कड़ियों से फिर संबंधित करते हैं। भगवान बुद्ध, महावीर स्वामी, चन्द्रगुप्त मौर्य, से लेकर पृथ्वीराज चौहान तथा उनके आगे भी सम्पूर्ण इतिहास की कड़ियाँ जुड़ी हुई मिल जाती है।

भारतवर्ष मे वर्ण व्यवस्था के आधार पर ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और क्षुद्र चार वर्णों में सम्पूर्ण मानव समाज को कर्मव्यवस्था की आधार शिला पर संगठित किया गया। क्षत्रियों का दायित्व वीरता के कार्यों में संलग्न रहने के कारण देश की रक्षा, शासन व्यवस्था का कार्य उन्हें सौंपा गया। सैकड़ों वर्षों तक उन्होंने भारत की रक्षा मे विकास में उन्नति में बड़ा महत्वपूर्ण वीरता एवं न्यायपूर्ण योगदान दिया, किन्तु धीरे-धीरे उनकी शक्ति का, क्षमता का ह्रास होता गया। एक वीर वंश की कुछ पीढ़ियों के पश्चात् ही उसी वंश के लोग अत्यन्त निर्बल, क्षीण, दुर्बल चरित्र प्रामाणित हो गये यह इतिहास के पन्नों पर स्वयं सिद्ध है।

राजस्थान के दक्षिणी पश्चिमी भाग में अरावली पर्वतों की दुर्गम एवं सुगम श्रेणियो मे सैकड़ो वर्गमील मे विस्तृत गुहिलोत वंश मे वीर बाप्पा-रावल ने चित्तौड़गढ़ तथा इसके आसपास के विस्तृत भूभाग को अपनी भुजाओं की सैन्य बल की महान् शक्ति के आधार पर मेवाड़ राज्य की स्थापना की। उनके वंशजो ने क्रमिक विकास के आधार पर राज्य की सीमा का विस्तार किया। मालवा और गुजरात, उत्तर-प्रदेश के फतेहपुर सीकरी, राजस्थान के सवाई माधोपुर जिले में रणथम्भौर बयाना के पास खानवा के रणक्षेत्र तक अपनी सीमाओ का विस्तार किया। युद्ध, शक्ति, शान्ति, धन, साधनों के द्वारा बड़े-बड़े हिन्दू राजाओ, मुगलों, पठानों, अन्य मुसलमानो की सेनाओं द्वारा मेवाड राज्य की रक्षा की अपनी वीरता, गौरव, कला कौशल, धर्म रक्षा आदि में अभूतपूर्व सफलता प्राप्त की। मेवाड के राजवंश मे बाप्पारावल के पश्चात् महाराणा सागा, लाखा, महाराणा प्रताप, अमर-सिंह, राजसिंह तक का समय गौरव की सफलताओं से परिपूर्ण है।

इसके पश्चात् धीरे-धीरे राज्य की सीमा, शासन व्यवस्था, संगठन, सैन्य शक्ति में निरन्तर ह्रास होता गया, सिसोदिया वंश में ही चूण्डावत, शक्तावत अपना अलग अस्तित्व और महत्व समझने लगे, परस्पर की स्पर्द्धा ने, आपसी ईर्ष्या द्वेष के अग्नि मे संगठन शक्ति सैन्य शक्ति, शासन व्यवस्था इतनी क्षीण हो गई कि वंश की मर्यादा, महिलाओ की रक्षा, मन्दिरों तथा धार्मिक स्थलो, तीर्थों की पवित्रता को कायम रखना, मर्यादा की रक्षा करना भी कठिन हो गया।

प्रस्तुत उपन्यास मे कृष्णाकुमारी का संबंध पूर्णतया मेवाड़ के इसी सिसो-दिया राजवंश से ही है। सन् 1770 से 1820 के बीच लगभग 50 वर्ष के

मध्य की सामाजिक, ऐतिहासिक, क्षत्रिय जाति से संबधित घटनाओं पर आधारित उपन्यास की मूलाधार सामग्री को प्राप्त किया गया है। इसी युग के बीज का विकास करके यह वटवृक्ष निर्मित किया गया है।

उपन्यास की विषय सामग्री समझने हेतु आपके समक्ष महाराणा भीमसिंह तथा कृष्णा कुमारी से संबधित प्रमुख तिथियां तथा घटनाएं प्रस्तुत है—

सिसोदिया वंश के महाराणा प्रताप के वंशानुक्रम में महाराजा भीमसिंह के कुल 17 रानियां और 95 सन्तानें थी, किन्तु राजकुमारी कृष्णाकुमारी जो चावड़ी जी से उत्पन्न हुई थी, वह महाराणा को सर्वाधिक प्यारी थी।

(1) महाराणा भीमसिंह का जन्म 10 मार्च, 1768 में उदयपुर में ही हुआ।

(2) लगभग दस वर्ष की आयु में 7-1-1778 में मेवाड़ के राज्य सिंहासन पर महाराणा हमीरसिंह के पश्चात् आरूढ़ हुए।

(3) महाराणा भीमसिंह सन् 1793 मे ईडर राज्य के राजा भवानीसिंह की लड़की और गभीरसिंह की बहिन से तीसरी शादी करके जब लौट रहे थे, रास्ते में तत्कालीन रावल फतहसिंह डूंगरपुर राज्य के नरेश पर आक्रमण किया, किन्तु शीघ्र ही समझौता हो गया और महाराणा को 3 लाख रुपये भेंट स्वरूप प्रदान किये। इसी प्रकार महाराणा को बासवाड़ा नरेश से भी 3 लाख रुपये भेंट मे मिले।

(4) कृष्णाकुमारी का जन्म जनवरी -1795 के प्रारंभ मे हुआ था।

(5) सन् 1802 में यशवन्तराव होलकर इन्दौर नरेश मेवाड पर आक्रमण करने आया, नाथद्वारा मे श्रीनाथ मन्दिर के गोसाई से तीन लाख रुपये मागे अन्यथा मन्दिर को लूटने की धमकी दी किन्तु उसको सफलता नहीं मिली कुछ दिन बाद वह उदयपुर से पूर्व दिशा में चला गया।

(6) सन् 1803 में होलकर पुनः मेवाड़ में आया, 40 लाख रुपये महाराणा से मागे, नही देने पर मेवाड़ को हानि पहुँचाने की धमकी दी। महाराणा ने 18 लाख रुपये देकर सधि करली। फिर होलकर चला गया।

(7) सन् 1799 में ही कृष्णाकुमारी की सगाई का टीका जोधपुर भिजवाया- जिसको स्वीकार भी कर लिया। किन्तु परस्पर राजकुल के वर्गों के सघर्ष मे 19-10-1803 मे महाराजा भीमसिंह की मृत्यु हो गई।

(8) महाराणा भीमसिंह ने जोधपुर नरेश महाराजा भीमसिंह की मृत्यु के पश्चात् सिंहासन पर बैठे राजा मानसिंह को कृष्णाकुमारी से सगाई का सन्देश भिजवा दिया उन्होने स्वीकार भी कर लिया किन्तु कुछ महीने पश्चात् पाली जिले के ठाकुर घाणेराव (सादडी) के विरुद्ध

मानसिंह ने एक सेना भेजी और वहां के ठाकुर को निष्कासित कर दिया जो उदयपुर राजघराने का संबंधी था। उदयपुर महाराणा के कहने से भी मानसिंह नही माना तब महाराणा जोधपुर नरेश से अप्रसन्न हो गये और कृष्णा के जोधपुर में संबंध नही करने का निश्चय कर लिया।

(9) सन् 1805 में जयपुर के महाराजा जगतसिंह से कृष्णा की सगाई का सन्देश जयपुर (अम्बेर) भिजवाया, कृष्णा की सुन्दरता का वर्णन जगतसिंह सुन ही चुका था। अत: उसने सगाई का सन्देश स्वीकार कर लिया।

महाराणा भीमसिंह की बहिन चन्द्रकुंवर की सगाई महाराजा जगतसिंह के बड़े भाई प्रतापसिंह से हुई थी। लेकिन प्रतापसिंह की मृत्यु हो गई। चन्द्रकुंवर ने उसे ही अपना पति मान लिया और जीवन भर विवाह नही किया वह भी कृष्णाकुमारी का विवाह जगतसिंह से कराना चाहती थी इसलिये भीमसिंह ने जयपुर सगाई कर दी।

(10) महाराजा मानसिंह इससे अप्रसन्न हो गया उसने जगतसिंह के पास मंत्री भेजकर सगाई विवाह नहीं करने को कहा, पहले इसी राजकुमारी की की सगाई जोधपुर भीमसिंह तथा मानसिंह से हो चुकी है किन्तु महाराजा जगतसिंह ने जोधपुर की बात सुनने से बिलकुल मना कर दिया मानसिंह ने जयपुर में युद्ध करने धमकी दी।

(11) सन् 3-7-1806 को पोकरण के ठाकुर जो जोधपुर महाराज के विरूद्ध थे क्योंकि वह धोंकल स्व. भीमसिंह के पुत्र को जोधपुर का राजा बनाने के पक्ष में थे जयपुर के दरबार में रहते थे गीजगढ की जागीर इनकी ही थी। सवाईसिंह की कुशल कूटनीति से जगतसिंह की सैनिक सहायता के लिये बीकानेर के महाराजा सूरतसिंह से संधि करके उन्हें जोधपुर के विपक्ष में जयपुर की तरफ से लड़ने को तैयार कर लिया।

(12) सन् 14-4-1806 को महाराना भीमसिंह ने जयपुर नरेश जगतसिंह के लिये बहुमूल्य सामग्री सहित टीका भेजा। जब दस हजार सैनिक टीका लेकर जयपुर की ओर जा रहे थे तब जोधपुर नरेश के 30 हजार सैनिकों ने, उनके साथ अमीरखां और दौलतराव सिंधिया के सैनिकों ने भी शाहपुरा (भीलवाड़ा) के पास उसे लूटने का प्रयत्न किया। शाहपुरा नरेश के समझाने से बडा संघर्ष टल गया, किन्तु फिर अन्तत: सब सामान लूटने व सैंकड़ों सैनिको की मृत्यु दुर्घटना-वश हो गई।

(13) महाराजा जगतसिंह ने जोधपुर महाराज मानसिंह से क्रुद्ध होकर 1807 में अमीर खां की सहायता से परवतसर (गींगोली) के पक्ष

पास जोधपुर जयपुर का युद्ध हुआ इसमें जयपुर वालों की जीत हुई। मानसिंह भागकर जोधपुर के किले में छिप गया। अमीरखा ने धौंकल की भी हत्या इसी वर्ष की थी।

(14) 1807 में ही अमीरखां को 40 लाख रुपया देकर महाराजा मानसिंह ने अपनी तरफ मिला लिया। अमीरखा जयपुर के विरुद्ध हो गया।

(15) दौलतराव सिंधिया और होलकर ने 1805 मे भी मेवाड़ पर आक्रमण करने की धमकी दी, सिंधिया भी कृष्णाकुमारी से विवाह करना चाहता था। महाराणा ने मना कर दिया तब होलकर तो टोंक सवाई माधोपुर की तरफ चला गया फिर मेवाड़ मे नही आया, फिर इन्दौर चला गया। दौलतराव सिंधिया लाखो रुपये लेकर कभी जयपुर कभी जोधपुर महाराजा की ओर से लड़ने को तैयार रहता था कुछ वर्षों बाद अजमेर तथा ग्वालियर चला गया किन्तु जाते समय जयपुर के 30 हजार सैनिको को मेवाड़ से जयपुर भिजवा दिये।

(16) 1809 में अमीरखां महाराजा जोधपुर की ओर से कृष्णा का विवाह मानसिंह से करने को मजबूर करने तोपखाने सहित अपने 40 हजार सैनिक लेकर आया। जोधपुर नरेश से विवाह नही करने पर एकलिंगजी का मन्दिर तोड़ने की धमकी दी। दस लाख रुपये भी मांगे। महाराणा द्वारा नही दिये जाने और विवाह की शर्त नहीं मानने से एक साधारण युद्ध हुआ उस समय मेवाड़ की सैनिक स्थिति कमजोर थी किन्तु अमीरखां जयपुर के दबाव से लौट गया।

(17) सन् 1810 के मार्च मे अमीरखां फिर मेवाड़ में जोधपुर की सेना के साथ आया। अमीरखां जून 1810 मे मानसिंह की ओर से लड़ने तथा कृष्णा से मानसिंह का विवाह कराने हेतु उदयपुर आया।

(18) 1810 के जून में जयपुर नरेश जगतसिंह भी कृष्णाकुमारी से विवाह करने हेतु एक बड़ी फौज लेकर उदयपुर आ गये।

(19) संघर्ष को टालने और रक्तपात से बचने के लिये कृष्णाकुमारी को तीन बार तलवार से मारने का प्रयत्न किया, तीन बार कृष्णा को शर्बत में विष दिया गया जो व्यर्थ गया? किन्तु 21-7-1810 को स्वयं कृष्णा ने मेवाड़ की रक्षा और रक्तपात से बचने हेतु 16 वर्ष की आयु में ही अफीम के साथ तेज विष कुसुम्बा मिलवा कर स्वयं पी लिया और इससे अन्ततः उसकी मृत्यु हो गयी। जयपुर जोधपुर नरेश तथा अमीरखां लौट गये।

(20) महाराणा भीमसिंह ने अंग्रेजों से 1818 में संधि कर ली, मेवाड़ में शान्ति स्थापित हो गई और अक्टूबर 1828 में इनकी मृत्यु हो गई।

इस प्रकार जुलाई 1810 में जब कृष्णाकुमारी विषपान के द्वारा बलिदान हो गई। मेवाड़ पर आक्रमण हेतु आई हुई जयपुर, जोधपुर की सेनाएं अमीर खाँ की बड़ी पठानी की फौज तोपखाना, सिंधिया की गोरी फेंक सेना, बन्दूकों, रामचंगों, पिस्तौल, तोपों से सुसज्जित सेनाओं को बिना युद्ध किये लौट जाना पड़ा। बाद में जगतसिंह मानसिंह को भी कृष्णा की मृत्यु का दुःख हुआ। बाद में अमीर खाँ ने भी पश्चाताप किया।

इस प्रकार इस उपन्यास की प्रमुख घटनाओं को क्रमबद्ध रूप में प्रस्तुत करने का उद्देश्य पाठकों को सरलतापूर्वक कथा सामग्री को समझने में सहायता प्रदान करना है।

इतिहास में घटनाओं, सन्, संवत्, स्थानों तथा व्यक्तियों के नाम वर्णन आदि सत्य एवं तथ्यों पर आधारित होता है। उपन्यास में घटनाओं का विस्तार अथवा संकुचन पाठ्य सामग्री को प्रस्तुत करने, रोचक बनाने की सहायतार्थ किया जाता है। उपन्यास में कहीं-कहीं कल्पना का पुट देकर तत्कालीन समाज का वास्तविक वर्णन प्रस्तुत करने का प्रयत्न किया गया है। करुणाजनक, मार्मिक स्थलों का वर्णन करते हुए लेखक स्वयं भी अश्रुपूरित चक्षुओं के प्रवाह को रोकने में असमर्थ रहा है।

इस पुस्तक के लेखन में कर्नल टाड कृत 'राजस्थान का इतिहास' कविराज श्यामलदास द्वारा लिखित 'वीर विनोद भाग 1' तथा भाग 2,' जोधपुर के महाराजा मानसिंह और उनका काल डा० पद्मनाभ शर्मा का शोधग्रन्थ, प. गौरीशंकर हीराचन्द ओझा द्वारा लिखित विभिन्न राज्यों की इतिहास की पुस्तकों की सहायता एवं उनके तथ्यों के आधार पर अपने अध्ययन, मनन-चिन्तन के फलस्वरूप यह उपन्यास पाठकों के समक्ष में प्रस्तुत करता हूं। मैं इनका हृदय से आभारी रहूंगा, आशा है आप इसे पढ़ कर अवश्य लाभान्वित होंगे।

—चन्द्रमोहन हाड़ा 'हिमकर'
लेखक एवं प्राध्यापक

3, गुलराज क्वार्टर्स, हिमकर भवन
नसीराबाद रोड़,
अजमेर (राज.) 305001

# अनुपम बलिदान

# एक

ब्रह्म मुहूर्त में रनिवास में चहल-पहल हो रही थी। राजकुमारी की सब सहेलियां स्नान करके फूलों से सजी हुई थालियाँ अपने कोमल करों में सजाकर राजमहल से लगे उद्यान के द्वार पर एकत्रित हो रही थीं। प्रकृति में उल्लास था। चारों ओर विभिन्न प्रकार के पक्षी अपनी संगीत की स्वर लहरी से वातावरण में मधुरता की अमृत वर्षा कर रहे थे। उषा का यौवन मुखरित हो रहा था। पूर्व दिशा के सुदूर छोर पर ललित लालिमा द्वारा उषा का सौन्दर्य प्रस्फुटित हो रहा था।

सूर्य की प्रथम किरण ने प्रकृति नटी की सुन्दरता का चित्र चित्रित करना प्रारम्भ किया और बाल सूर्य की प्रथम किरण का सौन्दर्य स्वर्ग की अप्सराओं के मुख की आभा को लज्जित करने वाला था। इसका स्वागत उद्यान की कोमल कुसुमावलि के द्वारा हो रहा है। कलियां वधु के अवगुण्ठन की भांति खुल-खिल रही हैं। सुन्दर सुगंधित पुष्पों के द्वारा रस रंग-रूप का वितरण हो रहा है। शीतल मन्द सुगन्ध पवन चल रही है। भ्रमरों के झुण्ड पुष्पों तथा कलियों के रस का पान करने हेतु उधर घूम रहे है। मन्दिरों के स्वर्ण कलश सूर्य किरणों से चटक रहे हैं। शिशुओं के नयन खुल रहे है। नवयौवना अंगड़ाई लेकर द्रुतगति से घूम रही हैं। कवियों का हृदय प्रफुल्लित है। वे अपनी काव्य साधना में तल्लीन हैं। प्रातःकाल का वातावरण वास्तव में आनन्ददायक है।

उद्यान के मनमोहक प्राकृतिक अनुपम सौन्दर्य को देखकर कविवर 'चन्द्रेश' ने लिखा है—

> देश चंचल भ्रमर की अथक साधना,
> और मादक नयन की सरल भावना।
> रूप रंजित गगन प्यार बरसा रहा—
> रूप कलियां-खिली सुनकर आराधना।।

इस प्रातःकाल की मनोहर वेला में मेवाड़ की राजकमलिनी राजकुमारी कृष्णा अपनी सखियों के संग प्रसन्न मुद्रा में विभिन्न रंग बिरंगे

पुष्पों का चयन करती हुई उद्यान में घूम रही है। उसके एक हाथ में चंगेरी है जिसमें वह फूलों को एकत्रित कर रही है। एक हाथ में गुलाव का फूल है जिसे वह वार-वार गुलावी गालों पर स्पर्श कर अठखेलियां कर रही है। कृष्णा कुमारी ने अपने जीवन के सोलह वसन्त देखे हैं। उसका रूप अप्सराओं के रूप को भी लज्जित करने वाला है। रंग-विरंगे मादक पुष्पों की भांति उसके अगों में यौवन का उभार शोभायमान है। उसका मुखकमल सात्विकता, सरल-शालीनता लिये हुए, उसके नयन लज्जा से परिपूर्ण हैं। सुन्दर सुकुमार कंचन काया पर कुछ वहुमूल्य आभूषण उसके रूप को चार चांद लगा रहे है। सद्य: स्नान के पश्चात उसके स्वर्णिम वालों की शोभा मनमोहक है। वह अपनी सखियों के साथ मधुर स्वर में एक गीत गा रही है—मैं उपवन की नवल कली, अभी-अभी हैं आंखे खोली, टूट पड़ी अलियां की टोली, गूंज उठी उनकी मृदु वोली, मेरे मन को लगी भली, मैं उपवन की नवल कली।' गाते हुए सखियों के साथ मग्न हो रही थी।

अरुण किरण मेरे हृदय को प्रफुल्लित कर रही है, मलय समीर मेरे अंगों में यौवन का संचार कर रहा है। नव लतिकाएं अपने सपने में अंगड़ाइयाँ ले रही हैं। भगवान भुवन भास्कर मुझे स्वर्ग का सुख सौरभ प्रदान कर रहे हैं—हे भगवान मुझे संसार के ज्वाला मण्डित मार्ग पर चलने की शक्ति और क्षमता प्रदान करना।'

उद्यान के मध्य स्फटिक शिला पर शान्त बैठी कृष्णा को झकझोर कर कृष्णा से उसकी सुन्दर प्रमुख सखी रमा ने ध्यान भंग किया—कुमारीजी आप तो प्रात:काल के सुरम्य सौन्दर्य पान में तल्लीन हो रही है। आपको समय का भी ध्यान नहीं। अब महारानीजी राजमहल में हम सवको वुला रही है। सन्देश आ गया है।

कृष्णा-सखि! मुझे राजमहल एक सोने के पिंजरे के समान लगता है।

रमा-(हँसकर) पिंजरा! आपने भी मधुकर तोते को पिंजरे में वन्द कर रखा है। वह आपके मनोरंजन का प्रिय साधन है।

कृष्णा-मैं उसे पिंजरे से मुक्त कर दूंगी। अपने स्वार्थवश किसी को वन्दी वनाना अन्याय है।

रमा-हम उसे भोजन भी देते हैं अतः उसका रहना व मनोरंजन करना उसका दायित्व है।

कृष्णा-प्रत्येक प्राणी अपने परिश्रम से अर्जित भोजन करने का अधिकारी है। वही उसके लिये अधिक सुखदायक है। अपने लाभ के लिये किसी की स्वाधीनता छीन लेने को मैं उचित नही समझती।

रमा-हमें अब पर्याप्त विलम्ब हो गया है। शीघ्र महल में चलना चाहिये अन्यथा महारानीजो चिन्तित हो जाएंगी।

कृष्णा-माताजी का प्रेम ही मेरे लिये वरदान है वह मुझे अपनी आँखों से कुछ समय के लिये भी दूर रखना नहीं चाहती है। उद्यान में आती हूँ तो कहती हैं माली-मालिन ही तुम्हारे पुष्पों की टोकरी भरकर ले आवेंगे। फूलों के काँटे तुम्हारे कोमल हाथों को रक्त रंजित कर देंगे। कुसुमों में छिपे हुए सर्प कहीं तुझे डस लेंगे....विभिन्न प्रकार की आशंकाओं से वह दुखी रहती हैं। मैं युवा हो गई फिर भी मुझे वह नन्ही नादान बालिका ही समझती हैं। देख सखी रमा! क्या मैं दुधमुंही बालिका हूँ?

रमा एक विवाहिता नवयुवती है। वह सुन्दर सुशील गंभीर है। सभ्यता से परिपूर्ण है, कर्त्तव्य परायण है। उसने राजकुमारी जी से कहा-महारानी जी ममता भरी माँ है जब तुम भी माँ बनोगी तब माँ की ममता का महत्व एवं इसका रहस्य समझोगी।

कृष्णा-रमा मैं तो सदैव सुपुत्री ही बनी रहने की इच्छुक हूँ।

रमा-हमारे धर्म ग्रन्थों मे भी नारी जीवन की पूर्णता माँ बनने में ही बताई है। चाहे बालिका धनवान हो चाहे गरीब हो। वह सदा बेटी बनकर नहीं रह सकती है। नारी पहले बेटी फिर पत्नी, माँ और दादी बनकर ही अपने जीवन को श्रेयस्कर समझती है।

कृष्णा-वाह सखी रमा। अभी तेरा विवाह हुए एक वर्ष भी नहीं हुआ और तू विवाहित जीवन के आनन्द सौरभ का सुगान करने लगी, हमें भेड़ चाल नहीं चलना चाहिये। जीवन मे हमें कुछ ऐसे कार्य करना चाहिये जिससे अपने वंश का, समाज का और राज्य का कल्याण हो। हमारा क्षुद्र स्वार्थो के त्याग से जन कल्याण के कोमल कमल खिलें। इसी मे जीवन की सार्थकता है। इसी में हमारे राष्ट्र का कल्याण है।

इस प्रकार परस्पर बातें करते हुए राजकुमारी जी राजमहल के रनिवास में प्रविष्ट हुई। महारानी ने द्वार से आगे बढ़कर राजकुमारी के मस्तक को चूम लिया। बेटी ! आज उद्यान में बहुत देर लगाई।

कृष्णा-आज प्रकृति का सौन्दर्य चारों ओर कितना आनन्द बिखेर रहा है माँ ! मुझे पिछोला में नाव चलाना, बाग में घूमना, पुष्पों को चुनना, प्रकृति का आनन्द लेने में ही आत्मिक आनन्द आता है। वीर भूमि मेवाड़ का कण कण मेरे लिये स्फूर्ति प्राप्त करने का माध्यम है।

महारानी-बेटी ! तुम अपने जीवन में और क्या पसन्द करती हो ?

कृष्णा-वास्तव में माताजी, मेरा जी चाहता है मैं मधुर गीत बनकर आकाश में विचरण करते हुए वन उपवन में संगीत सरिता बनकर बहने लगूं। सागर की लहर बनकर जल तल पर नृत्य करूँ। सूर्य किरण बनकर फूलों का रसपान करूँ, चन्द्रकिरण बनकर चन्द्रिकायुक्त यामिनी में ज्योत्सना बनकर कवियों की प्रेरणा बनूं। मैं तो सदैव ही स्वतन्त्र और मुक्त रहने में आनन्द का अनुभव करती हूँ। आत्मिक आह्लाद ही स्वर्गिक आनन्द है।

महारानी-बेटी नारी हृदय का स्नेह, उसका सबसे बड़ा बन्धन है, इस संसार मे सभी प्राणी एक दूसरे से स्नेह शृंखलाओं से बंधे हुए है। सच्चा पारिवारिक सुख प्रेम के उलझे हुए धागों में सुगठित है।

कृष्णा-माँ ! बन्धन तो दुःखदायक होता है। मोह माया में सब व्यर्थ है। हमें इनसे किस प्रकार सुख प्राप्त हो सकता है ?

महारानी-बेटी ! संसार आशाओं पर आधारित है। बन्धन ही जीवन की ज्योति हैं। प्रकृति के कण कण में परमात्मा का सुन्दर खेल चल रहा है। प्रकृति प्रदत्त नियम है, सभ्यता है, राज है, समाज है।

कृष्णा-फिर नारी जीवन की सार्थकता, सफलता, सरसता और किन बातों में है।

महारानी-बेटी ! अपने कुल की मर्यादा, वंश का गौरव, राज्य का हित, राष्ट्र कल्याण और विश्व शान्ति में योगदान करना ही हमारे जीवन का परम ध्येय होना चाहिये। मानव का कल्याण ही हमारा महान् कर्त्तव्य है।

अच्छा बेटी ये बातें और कभी कर लेंगे—क्या तुम्हें याद नहीं रहा—आज अक्षय तृतीया है। हमें मिलकर देवी के मन्दिर में जाकर उसकी पूजा करना है। सब जल्दी तैयार हो जाओ। रमा! पूजा की सामग्री का शीघ्र प्रबन्ध करो।

कृष्णा-मां! देवी की पूजा से हमें क्या लाभ होता है?

महारानी-मेरी प्यारी बेटी, क्या यह भी समझाना आवश्यक है? अरे पगली! देवी की पूजा से उत्तम वर, अमर सुहाग, जीवन मे सुख शान्ति और समृद्धि प्राप्त होती हैं।

इस प्रकार राजमहलों की महिलाएं देवी पूजन के लिये सजधज कर गईं। वहां भक्ति भाव से देवी का पूजन किया और आनन्दित हों, वापस आ गईं।

# दो

सन्ध्या का समय है, पश्चिम दिशा में सूर्य अपनी ललित लालिमा से सुशोभित है। तीव्र गति से वह अस्ताचल की ओर गतिमान है। वीर भूमि मेवाड़ के परम शक्तावत और चूंडावत वंश के वीर-द्वय दौलतसिंह और संग्रामसिंह एक देहात की पगडंडी पर घूमते हुए परस्पर वार्तालाप करते हुए मन्दगति से चल रहे है। दोनों के सिर पर केसरिया रग का शानदार साफा बंधा हुआ है। उनकी कमर में तलवार, पीठ पर सुदृढ ढाल और हाथ में एक एक बल्लम (भाला) दृष्टिगोचर हो रहा है। दोनों का शरीर बलवान, चेहरे पर ओजस्विता है।

संग्रामसिंह-दौलतसिंह! बस इसी स्थान पर हमें अमीरखां की प्रतीक्षा करना चाहिये। इसी जगह पर अमीरखां ने मिलने का वचन दिया था।

दौलतसिंह-भाई संग्रामसिंहजी! मेरा विचार तो यह है कि हमें शीघ्र यहां से वापस चलना चाहिये। मेरी आत्मा अमीरखां से मिलने के विरुद्ध है।

संग्रामसिंह-अमीर खां से मिलने में अपनी कोई हानि नहीं है।

दौलतसिंह-आप जानते है मेरे परदादाजी ही मेवाड़ के पवित्र राजसिंहासन पर आसीन रहे थे। मेवाड़ की राजगद्दी पाने का मैं भी अधिकारी हूँ। जिस समय भीमसिंहजी का राजतिलक हुआ, वह बालक थे। उस समय भी शासन पर अधिकार करने व संचालित करने की क्षमता, बुद्धि एवं शक्ति मुझमें थी। वीरवर बापा रावल का पवित्र एवं तेजस्वी रक्त मेरी शिराओं में प्रवाहित हो रहा है। ऐसी स्थिति में भी मैंने गृह-युद्ध की ज्वाला प्रज्वलित करना अपना धर्म नहीं समझा। इसमें शासन और प्रजा दोनों का सर्वनाश होने की आशंका है। यह मार्ग कल्याणकारी नही है।

संग्रामसिंह-आपका विवेक, आपकी विचारधारा सराहनीय है, आप संयम और समन्वय के केन्द्र है।

दौलतसिंह-और संग्रामसिंहजी, आपकी नसों में भी वही रक्त प्रवाहित है जो मेवाड़ के महाराणा की नसों में है। हिन्दुओं की वीरता के सूर्य स्वर्णिम वीर शिरोमणि महाराणा प्रताप के सगे भाई वीरवर शक्तिसिंह की विख्यात वीरता, पराक्रम और साहस को क्या कोई भी मेवाड़ निवासी भूल सकता है? कभी नहीं, उनके वीर वंशज सदा ही हरावल में रहने के लिये चूण्डावतों से स्पर्धा करते रहे। उन्होने सदा ही मेवाड़ की रक्षा और समृद्धि में अपना यथाशक्ति योगदान प्रदान किया है, उनके प्रयत्न अमर रहेंगे।

संग्रामसिंह-वीरता की उन कहानियों और शक्तावतों की पौरुषपूर्ण सत्य-कथाओं को सुनकर हमारी नस नस में वीरता का संचार हो जाता है। हमारा साहस बढ़ता है। हम भी धरती माता की रक्षा में अपने प्राण न्यौछावर करने को सदैव तत्पर है।

दौलतसिंह-परन्तु अपनी जिस मेवाड़ भूमि के कण कण की रक्षा हेतु अपने पूर्वजों ने रक्त बहाया है हमारी आपसी फूट मूर्खतापूर्ण स्पर्धा के कारण उसके सम्मान और सुरक्षा के प्रयत्न पर्याप्त रूप से क्षीण हो गये हैं। मेवाड की रक्षा पर राजस्थान की और राजस्थान की रक्षा पर भारत माता की रक्षा निर्भर है। हम सब संगठित होकर विधर्मियों और विदेशियों को भारत के बाहर निकालने में सफलता प्राप्त करलें तभी सुख शान्ति, समृद्धि और आर्थिक उन्नति संभव है। मेवाड़ की आर्थिक दुर्दशा

और अपने राजवंश की, राज्य परिवार की सीमित शक्ति, सीमित साधनों को देखकर क्या आपको तनिक भी दुख नहीं होता है ? भाई संग्रामसिह ।

संग्रामसिह-अवश्य होता है। मेवाड़ की भूमि मुझे अपने प्राणों से भी प्यारी है। सिसोदिया राजपरिवार हमारी आँखों की ज्योति है। हमारे प्राणों का प्रकाश है, हमारी सांसों का सरगम है। हमारे गीतों का संगीत है।

दौलतसिह- फिर हम अपने व्यक्तिगत द्वेष के कारण, बाहरी शक्तियों को क्यों निमन्त्रित करें। विवादों को हल करने में उन्हें क्यों न्यायाधीश बनावें ?हम राजपुत्र है पर आपस में ही तलवार चलाकर व्यर्थ क्यों खून बहावे ? अपने भाइयों का नाश करना व्यर्थ है।

संग्रामसिह- जिन शक्तावतों ने स्वर्गीय महाराणा अमरसिहजी के दाहिने हाथे बनकर बादशाह जहाँगीर की विराट सेना का वीरतापूर्वक सामना करके उनको लोहे के चने चबवा दिये, जिन वीरों ने आगे बढ़कर महाराणा राजसिहजी के साथ सम्राट औरंगजेब की सेना के दाँत खट्टे कर दिये, देवारी के युद्धक्षेत्र से स्वयं औरंगजेब डरकर भागने पर विवश हो गया। जिन शक्तावतों ने अपनी मातृभूमि की रक्षा में अपने प्राणों का बलिदान कर दिया-आज मेवाड़ के राज दरबार में इस शाखा के वीरों के लिये सम्मानजनक स्थान सुरक्षित नहीं है। दौलतसिहजी ! महाराणाजी पर और मेवाड़ के प्रत्येक महत्वपूर्ण राज्य शासन के पद पर केवल चूण्डावतों का ही एकाधिकार स्थापित है। आप इसे हम पर अन्याय नहीं समझते है ?

दौलतसिह-मैं इसे न्याय नहीं समझता, संग्रामसिहजी ! लेकिन भाई, ताली दोनों हाथों से बजती है, जब शक्तावतों का भाग्योदय उत्कर्ष पर रहा, तब उन्होंने चूण्डावतों को अपमानित करने और सदैव उन्हें नष्ट करने का प्रयत्न किया। वे यह नही समझते थे कि हम अपने अंगों को काट कर फेंक रहे हैं। एक भाई होल्कर की सहायता लेता है, दूसरा सिंधिया को और तीसरा अमीर खां जैसे दुष्ट डाकू की सहायता प्राप्त कर अपने को धन्य और बलशाली समझता है। ये सहायक मेवाड़ के धन और भूमि पर अपना अधिकार स्थापित करते हैं। भाईजी ! इस बन्दर-बाँट

करने वाले लालची स्वार्थी पंजों से बचना चाहिये। ये लोग हमें झूठी सहानुभूति बताकर अपना स्वार्थ सिद्ध करने में ही लगे रहते हैं।

संग्रामसिंह-इसका अर्थ है कि हम अपमानित जीवन को चुपचाप जीते रहें। चूण्डावतों ने बाहर से सिंधी सैनिकों की सेना बनाकर हमें कुचलने का कुचक्र चलाया है, उसे आप नही जानते? ये वेतन भोगी सैनिक हमारे देश की धरती पर निर्दयतापूर्वक जन जीवन को हानि पहुँचा रहे हैं। हमारे देश का धन प्राप्त करके हमारा ही खून बहाते हैं। अब आप ही बताइये दौलतसिंहजी, इस परिस्थिति से छुटकारा पाने का क्या उपाय है?

दौलतसिंह-इसका यह उपाय नहीं है कि हम एक ओर बाहरी शक्ति को बुलवाकर उसके जमाने मे सहायता करें। हमें तो अब चाहिये कि सब प्रकार के भेदभाव, मान अपमान, स्वत्व स्वार्थों को भूलकर अपने देश के हित मे हम एक हो जायें। अगर हमें राष्ट्रहित में एक रास्ते पर चलना पड़े तो व्यक्तिगत स्वार्थ छोड़ देना चाहिये। यदि देश के हित में शक्तावतों की शाखा ही नष्ट हो जाय तो इसमें गौरव समझना चाहिये। परिवार की प्रतिष्ठा, जाति गौरव और एक वंश के अभिमान से देश का गौरव, राष्ट्र की सुरक्षा, स्वदेश की उन्नति परम आवश्यक एवं सर्वोत्तम है।

संग्रामसिंह-एक सच्चा राजपूत अपने स्वाभिमान को भूल जाय, यह वास्तव में कठिन कार्य है।

दौलतसिंह-जो स्वाभिमान देश के लिये हानिकारक हो, उसे भुला देना ही लाभदायक होगा, संग्रामसिंहजी! एक ओर स्वाभिमान मनुष्य का बड़ा बल है किन्तु कभी कभी यह उसकी कमजोरी बन जाता है। महाराणा प्रताप ने तैश में आकर शक्तिसिंहजी को मेवाड़ के बाहर निकाल दिया था, वह लाचारी में अकबर से जा मिले थे किन्तु हल्दीघाटी मे जब घायल चेतक पर सवार प्रताप का पीछा खुरासान और मुलतान मुगल सेना-प्रमुख कर रहे थे तब शक्तिसिंहजी का भातृप्रेम चट्टान तोड़कर निकलने वाली प्रबल जलधारा की तरह उमड़ पड़ा और उन्होंने उन दोनो मुगल सैनिकों को मौत के घाट उतार दिया। फिर महाराणा के चरणों मे झुक कर प्रणाम किया और चेतक के स्थान पर स्वय का घोडा देकर महाराणा प्रताप के प्राणों की रक्षा की। अपना अपमान भूल राष्ट्र-

हित में महाराणा का साथ दिया—सामंजस्य का क्या इससे बड़ा उदाहरण अन्यत्र इतिहास में प्राप्त है ?

संग्रामसिंह-इसमें महाराणा प्रताप की भी महान्ता तथा उदारता है कि उन्होंने शक्तिसिंह की सब भूलों को क्षमा करते हुए तत्परता से गले लगा लिया।

दौलतसिंह-इसीलिये भाई! मेरा तो यही विनम्र सुझाव है कि चूण्डावतों को तलवार से नहीं, प्रेम और त्याग से जीतने का प्रयत्न करना चाहिये। चूण्डावतों और शक्तावतों ने संगठित होकर देश के शत्रुओं से लोहा लिया है। आज भी हमें कंधे से कंधा लगाकर खड़े होने की नितान्त आवश्यकता है। अगर हम सब एक जुट हो जायं तो किसकी हिम्मत है कि वह मेवाड़ की ओर लालच भरी दृष्टि से देखे ?
संग्रामसिंह-यदि हमको सम्मानपूर्वक जीने का अधिकार मिले तो हम तैयार हैं.......

दौलतसिंह-अवश्य मिलेगा, संग्रामसिंहजी। जरा महाराणा भीमसिंहजी की स्थिति को भी देखना समझना हमारा कर्त्तव्य है। वह प्रचण्ड शक्ति जिसे हिन्दुओं का सूर्य कहते थे जिसने सम्राट अकबर के विशाल सैन्य बल के आगे अपना मस्तक नहीं झुकाया, आज वह शक्ति कितनी क्षीण हो चुकी है ? पारस्परिक संघर्ष ने बाहरी शक्तियों को लाखों नहीं, करोड़ों रुपये अर्पित कर दिये, इस बार महाराणा को रावलों की महिलाओं के आभूषणों को भी बेचने पर विवश होना पड़ा, अब मेवाड़ की राजकन्या कृष्णा के विवाह पर धनराशि कहाँ से प्राप्त होगी ? इसी चिन्ता ने महाराणाजी को परेशान कर रखा है। देश में सब ओर फसलें नष्ट हो रही हैं, वाणिज्य, शासन प्रबंध, कृषि, बागवानी चौपट हो रही है। सामन्तों की अनुशासन-हीनता से राज्य को भारी हानि हो रही है। रक्षा व्यवस्था भी कमजोर पड़ रही है।

संग्रामसिंह-आप ठीक कह रहे है, दौलतसिंहजी।

दौलतसिंह-राजकुमारी कृष्णा सभी सिसोदियों की आँखों की पुतली है। हमें चाहे कुछ भी करना पड़े, हमें बापा रावल की गद्दी के सम्मान की रक्षा करनी चाहिये। यदि कृष्णा कुमारी का विवाह राजवंश की

प्रतिष्ठा के अनुसार नहीं हुआ तो हम सब के लिये विषघूंट पीने के समान सिद्ध होगा। वह आपकी भी बेटी है, संग्रामसिंहजी।

संग्रामसिंह-भाई दौलतसिंहजी, मैं आपसे पूर्णतः सहमत हूं। राजकन्या के विवाह के लिये यदि मेरे शरीर का चमड़ा बेचने पर लाभ हो तो भी मैं तैयार हूं। आप जो कहें, वह सब कुछ करने को तैयार हूं, दौलतसिंहजी।

दौलतसिंह-अब हमें इस स्थान पर अमीरखां से मिलने का विचार छोड़ देना चाहिये। चलो! उठो! अब बाहरी शक्तियों को भी विदित होने दो कि मेवाड़ी केवल वीरता में ही श्रेष्ठ नहीं, किन्तु कूटनीति और बुद्धिमत्ता में भी किसी से कम नहीं हैं।

इस प्रकार दोनों वीर श्रेष्ठ बातचीत करते हुए एक रचनात्मक संकल्प करके अपने निवास स्थान पर आकर मेवाड़ को विषम संकटों से उबारने के उपाय सोचते हुए विश्राम करने चले गये।

# तीन

मेवाड़ के महाराणा भीमसिंह अपने सूर्य महल में अपने मंत्री अजीतसिंह के साथ गंभीर विचार विमर्श में व्यस्त हैं। प्रातःकाल का सुहावना समय है किन्तु महाराणा कुछ चिन्तातुर दृष्टिगोचर हो रहे हैं। मेवाड़ की सीमाओं पर मराठा सरदार दौलतसिंह ने लूटमार कर आतंक मचा रखा है। चारों ओर से प्रजा की तबाही और परेशानियों से भरे समाचार प्राप्त हो रहे हैं।

महाराणा - मंत्री प्रवर जी, क्या यह खबर सच है?

अजीतसिंह - बड़ो होकम। बिलकुल सच है।

मराठा सरदार दौलतराव सिंधिया ने मेवाड़ से सोलह लाख रुपयों की मांग की है। मराठा फौज के चुने हुए वीर यह राशि वसूल करने के लिये नीमच होकर आ रहे हैं। इधर राज्य की आर्थिक स्थिति कमजोर है। अकाल और उपद्रवों के कारण राजस्व वसूली में बाधायें उत्पन्न हो रही हैं।

म० भीमसिंह - मंत्रीवर, सिंधिया से मेवाड़ को संधि गत वर्ष ही सम्पन्न हुई थी—जितनी राशि उसने चाही थी, उसे राजकोष से पहले ही चुका दी गई है। उस समय उसने यह भी कहा था—कि अब रुपयों की मांग दुबारा नहीं की जायगी। इससे ऐसा विदित होता है कि मराठे धन के लालची हैं। संधि में एक शर्त यह भी थी कि वह आगामी पांच वर्ष तक कोई राशि वसूल नही करेगा। अब उसने मराठा सरदार द्वारा सोलह लाख रुपये की मांग का जो पत्र भेजा है, वह आश्चर्यजनक है। हमारे लिये चिन्ता का विषय है। इधर हमें राजकुमारी कृष्णा के विवाह के लिये भी धन की आवश्यकता है। तुम्हें मालूम होगा कि अभी दो महीने पहले ही हमने इन्दौर के राजा होल्कर को एक बड़ी राशि देकर उससे पीछा छुड़वाया है। राजनीति में नैतिकता का सर्वथा लोप हो गया है।

अजीतसिंह - अन्नदाता ! ऐसा सुनने में आया है कि सिन्धिया अंग्रेजों के विरुद्ध युद्ध की तैयारी कर रहा है अतः उसे अपनी सेना की वृद्धि और नये हथियारों के लिये बड़ी रकम इकट्ठी करनी है। सिंधिया के दूत को हुकुम ! अब क्या उत्तर देना है ?

म० भीमसिंह - राज्य की स्थिति और संधि की शर्त के अनुसार हम सोलह लाख रुपये देने में असमर्थ हैं। सिंधिया को दूत के द्वारा दृढ़तापूर्वक यह समाचार भिजवा दो।

अजीतसिंह - महाराणाजी, इस उत्तर का परिणाम मेवाड़ भूमि के लिये भयानक सिद्ध होगा। संभव है कि दौलतराव क्रुद्ध होकर शीघ्र ही मेवाड़ पर आक्रमण कर दे। इससे जन धन की हानि की संभावना है और फिर वह जितनी राशि की मांग करेगा, हमें विवशतापूर्वक देना पड़ेगा। यह भी नितान्त सत्य है।

म० भीमसिंह अत्यन्त दुख प्रकट करते हुए बोले—मंत्रीवर, आज मेवाड़ की स्थिति वास्तव में शोचनीय हो गई है। अब मेवाड़ के वीरों की गर्जना में दिल्ली आगरा के सिंहासन को दहलाने की शक्ति नहीं रही। मेवाड़ी वीरों की तलवारों की चमक अब धुंधली पड़ गई है। कैसा अद्भुत परिवर्तन हो गया ? एक समय था जब मेवाड़ की वीर भूमि की ललकार के सम्मुख सारा भारत श्रद्धा से सिर झुकाया करता

था, अरावली पर्वत आज भी मौजूद है परन्तु इसका रणबांकुरा सिंह महाराणा प्रताप नहीं है। उनके पुत्र महाराणा अमरसिंह ने अपने सुख सुविधा और विलास के साधनों की लालसा में मेवाड़ की स्वतंत्रता को बेच दिया। तब से मेवाड़ पुनः नहीं उठ सका। इसकी आर्थिक, सामरिक और सामाजिक स्थिति निरन्तर गिरती जा रही है। आज इसकी कमजोरी देखकर तुच्छ मराठे भी इसकी ओर गिद्धदृष्टि से देख रहे हैं।

अजीतसिंह - महाराणाजी, यह तो ठीक है कि महाराणा प्रताप नहीं रहे। लेकिन आपकी नसों में भी सिसोदिया वंश का पवित्र रक्त व्याप्त है। क्या आप साहस करके मराठों से युद्ध नहीं कर सकते ?
म. भीमसिंह - नहीं मंत्रीवर। हर व्यक्ति एक तरह का नहीं हो सकता। मेवाड़ का प्रत्येक शासक महाराणा प्रताप की भांति नहीं हो सकता। अगर हम अभी युद्ध करेंगे तो पराजय हो सकती है। मेवाड़ की रही सही प्रतिष्ठा भी नष्ट हो जायगी। सिंधिया से युद्ध करने के लिये हमें भी अधिक सुशिक्षित, संगठित और बड़ी सेना की आवश्यकता होगी। आज अपने ही लोगों में न तो वैसी एकता है, न युद्ध करने का जोश है। आर्थिक स्थिति भी राज्य की गंभीर है। हां एक उपाय है कि कुछ लोगों के प्रयत्नों से यदि राजस्थान के बड़े-बड़े तीन चार राजा भी संगठित होकर एकता स्थापित कर लें—एक दूसरे के प्रति पूर्ण विश्वास करे, अपने क्षुद्र स्वार्थों का त्याग करने को तत्पर हो जावें तो मैं दावे के साथ कह सकता हूँ कि ये मुट्ठी भर मराठे तो क्या अंग्रेज भी भारत छोड़कर चले जायेंगे।

महाराणा-किन्तु यह मेरी कल्पना है। मेरा दिवा स्वप्न है। वास्तविकता यह है कि हममें एकता नही है, व्यक्तिगत स्वार्थ ने, झूठे अभिमान ने और भेदभाव पूर्ण विविध विषमताओं ने देश की आन्तरिक स्थिति को जर्जर कर डाला है। एकता की बात सोचना ही व्यर्थ है।

मंत्रीजो, हमने निश्चय कर लिया है कि सिंधिया को हम किसी भी दशा में धनराशि नही देंगे। दूत के द्वारा शीघ्र उत्तर भेज दो।

यह सुनकर अजीत सिंह उठकर चले जाते हैं।

म. भीम सिंह अपने कक्ष में अकेले बैठे सोच रहे थे—"आठ वर्ष की आयु में हमें यह सिंहासन प्राप्त हुआ। तब से अभी तक दुर्भाग्य से

संघर्ष कर रहे हैं। विकट संकटों के मध्य बचपन बीता, जवानी भी विभिन्न प्रकार की दुःखदायी चिन्ताओं में बीत गई और अब बुढ़ापे में भी तनिक आराम नही, शान्ति नहीं, सुख नहीं। कभी होल्कर का आक्रमण, कभी मराठों का हमला, और कभी पारिवारिक संघर्ष। एक ओर युवा कन्या के विवाह की चिन्ता, धन की कमी। मेवाड़ भूमि के ऐश्वर्य को आततायियों ने बार बार पददलित करने की चेष्टा की, जन धन की निरन्तर हानि होती रही। दुर्भाग्यवश विवश होकर राजकुल की महिलाओं के आभूषणों को बेच बेच कर हम आक्रामकों को सन्तुष्ट करते रहे। येन केन प्रकारेण हमने अपनी प्रतिष्ठा को बनाये रखा है।

महारानी ने अचानक ही उस कक्ष में प्रवेश किया। महाराणा जी के पास बैठकर उनके चिन्तायुक्त चेहरे को देखकर कुछ जानकारी प्राप्त करना चाही किन्तु महाराणा ने कहा—'किसी भी राज्य का शासक बनना, काँटों के मुकुट को पहनना है। शासन व्यवस्था में धन की नितान्त आवश्यकता है, राज्य की आर्थिक स्थिति गंभीर है इसलिये मैं चिन्तातुर विचार-मग्न बैठा था।

महारानीजी से महाराणाजी ने कहा, आज पुरोहितजी के साथ कृष्णा की सगाई का टीका जोधपुर नरेश भीमसिंह के यहाँ भिजवा दिया है। फिर महारानी ने निवेदन किया और दोनों उठकर उस महल से अपने निवास स्थान की ओर भोजनार्थ चले गये।

× × ×

रात्रि का प्रथम प्रहर है। चारों ओर शान्ति का वातावरण है, महलों में स्थान-स्थान पर दीपक जल रहे हैं। मेवाड़ की महारानी के महल का प्रमुख कमरा है। दीवारों पर सन्तों, महात्माओं और वीर पुरुषों के चित्र टंगे हुए हैं। फर्श की सजावट पर राजसी ठाठ झलकता है, फिर भी सादगी और सुरुचिपूर्ण सजावट मन लुभावनी लगती है। मध्य में एक बड़ा मसनद लगा हुआ है। आस-पास भी कई मसनद लगे हुए हैं। एक बड़े मसनद से पीठ लगाकर महारानीजी आसीन हैं। उनके दाहिनी ओर एक मसनद के सहारे रमा बैठी हुई है।

महारानी - रमा ! तुम्हारे पिताजी तो घर पर नही होंगे ?

रमा - नहीं महारानीजी, संध्या समय ही घर पर आ गये थे।

महारानी - दोपहर में तो तुमने कहा था कि वह संग्रामसिहजी के साथ कहीं बाहर गये हैं और शीघ्र वापस नहीं आयेंगे।

रमा - महारानी—लेकिन वे लौट आये हैं। वे कह रहे थे कि अच्छा हुआ मेवाड़ एक राक्षस के पंजे में पड़ने से बच गया।

महारानी - ऐसा कौन सा भयकर राक्षस था यह ?

रमा - उन्होंने उस दुष्ट का नाम तो नहीं बताया, हाँ कह रहे थे कि यदि सब सरदारों में, विशेष रूप में चूण्डावतों और शक्तावतों में जिनका निकट का सम्बन्ध राजवंश के रक्त से है—मेल हो जाय, एकता हो जाय तो हमारे देश के अच्छे दिन आ सकते हैं। इसकी रूठी हुई समृद्धि पुन: लौटकर आ सकती है।

महारानी - लेकिन राजपूतों की सबसे बड़ी कमजोरी यही है कि वे एकता के सूत्र में बंध नहीं सकते। जैसे तराजू में दस सेर जीवित मेंढकों को तोलना असम्भव है वैसे ही उनमें संगठन करना असंभव है। राजपूत बिना लडे भिड़े रह नहीं सकते। यह उनका स्वभाव है। अगर कोई दूसरा लडने वाला शत्रु नही मिलेगा तो वे आपस में ही लड़ने लग जाते हैं। परस्पर तलवारें चलाने में उन्हें आनन्द आता है, ऐसी मुठभेड़ का फल चाहे कैसा भी हो ?

रमा-हां! हमारी जाति का यह बड़ा दुर्गुण है। इसीलिये हमारे देश में बाहरी लोग आकर शासक बन गये। स्थान स्थान पर धर्म परिवर्तन हो रहा है। चारों ओर अव्यवस्था है। अधर्म का विस्तार हो रहा है।

महारानी-अजीतसिहजी, और जवानदासजी अभी तक नही आये। कृष्णा के विवाह के विषय में उनसे परामर्श करना आवश्यक था।

रमा- महारानीजी ! मुझे आपकी बात काटने का कोई अधिकार तो नहीं है फिर भी आपकी हितैषिणी के नाते मुझे कहना पड़ता है कि व्यक्तिगत घर गृहस्थी और राज्य के कार्यों में आप और महाराणाजी स्वतंत्र रूप से निर्णय कर सकें तो अधिक लाभप्रद होगा।

महारानी- मैं यह सब जानती हूँ बेटी। लेकिन जैसे दबी हुई बिल्ली चूहों से कान कटाती है, परिस्थितियों का दुश्चक्र बड़े बड़ों को पीस देता है।

राज्य की आर्थिक विपन्नता, आपसी मनमुटाव ही इस स्थिति के लिए उत्तरदायी है। तुझे तो मालूम ही है कि गत वर्ष हमारी ननद के विवाह के अवसर पर सिंधिया से ऋण लेना पड़ा था और उसी वर्ष चूण्डावत सरदार ने भी अपनी पुत्री के विवाह में तीन लाख रुपये खर्च किये, उसका भार भी राज्य- कोष पर ही पड़ा। आज उनकी और हमारी आर्थिक स्थिति में कितना अन्तर हो गया है ?

रमा- मैं कहती हूँ इनको और क्यों मुँह लगाया जाता है ? उनसे दूर रहने का प्रयत्न करना क्या राज्य हित में नहीं होगा ?

महारानी- रमा ! क्या तुम्हें मालूम नहीं, चूण्डावत सरदार अजीतसिंह ने मेवाड़ के धन से एक विशाल सिंधी सेना का गठन कर रखा है ? उसकी शक्ति से वह छोटे छोटे सरदारों को अकारण ही कुचल रहा है। उसकी शक्ति के प्रभाव स्वरूप महाराणाजी को भी उसकी कृपा का पात्र बनना पड़ रहा है। हम भी विवश हैं। इस स्थिति से छुटकारा पाना कठिन लग रहा है। उधर देखो वे दोनों इधर ही आ रहे हैं। अजीतसिंह और जवानदास ने महारानीजी के निकट आ कर प्रणाम किया। महारानी ने भी उन्हें उचित सम्मान देते हुए कहा—पधारिये ! आपने बड़ी प्रतीक्षा कराई।

अजीतसिंह ने विनम्रता पूर्वक कहा, वास्तव में इतने विलम्ब के लिये क्षमाप्रार्थी हूँ। दोनों मसनद के सहारे आराम से बैठ गये। महारानीजी ने रमा से अमलपान भिजवाने की व्यवस्था करने को कहा। रमा वहाँ से इस व्यवस्था के लिये चली गई।

महारानी- आपकी इच्छानुकूल जोधपुर के महाराज भीमसिंह के लिए कृष्णा की सगाई का टीका भेजा जा चुका है।

जवानदास- इससे अच्छा वर हमारी राजकन्या के लिये और कौन मिल सकता है ? महारानीजी, हमारी कृष्णा राजस्थान के आकाश की चन्द्रिका है, वह शंकर के समान शक्तिशाली राजा के भाल की ही शोभा बन सकती है। हम सबने जोधपुर नरेश को ही इस सम्मान के योग्य समझा, इसीलिये टीका भिजवाया गया है।

अजीतसिंह-महारानीजी। हमारी कृष्णा सिसोदिया राजवंश क्षत्रिय

कुल का अभिमान है, वह रूप की निधि और गुणों का सागर है। उसके लिये राजरानी का पद भी छोटा है।

महारानी - राजकुमारी पर आप सब लोगों का अतुल स्नेह सराहनीय है। आप सब सरदारों और शुभ चिन्तकों की यही इच्छा है कि राजकन्या का विवाह बड़ी धूमधाम के साथ सम्पन्न हो किन्तु हमारी वर्तमान स्थिति मे यह सब कैसे संभव है ? राजवंश की प्रतिष्ठा, मेवाड़ के कीर्ति शिखर की यही अपेक्षा है किन्तु इस संकट की घड़ी में यह सब कैसे पूरा होगा ? इन बातों की लाज कैसे रहेगी, चूंडावत सरदार अजीतसिंहजी ?

अजीतसिंह - महारानीजी, चिन्ता नहीं करें। ईश्वर हमें ऐसी शक्ति क्षमता प्रदान करेगा जिससे हम राजकुल कमलिनी कृष्णा का विवाह धूमधाम से करेंगे, क्यों जवानदासजी आपका क्या विचार है ? जवानदास ने अजीतसिंह की भांति हां मे हां मिलाई।

हम सबको मिलकर अपनी कृष्णा का विवाह करके राजवंश की लाज की रक्षा करनी है। आप के सहयोग की हमे पूर्ण आशा और विश्वास है।

यह वार्तालाप चल ही रहा था कि यकायक महाराणाजी का प्रवेश हुआ। उनके अभिवादन हेतु सब लोग अपने अपने स्थान पर खड़े हो गये। महाराणा का शरीर बलशाली है। बड़ी बड़ी आंखें है किन्तु चेहरे पर कुछ उदासी के भाव झलक रहे हैं। गौर वर्ण चौड़े ललाट पर चिन्ता की कुछ रेखाएं है। महाराणा महारानी के पास ही मसनद के सहारे बैठ जाते है। उपस्थित व्यक्ति भी अपने स्थान पर बैठ जाते हैं। एक सादे किन्तु आकर्षक व्यक्तित्व वाली दासी एक स्वर्ण-पात्र में अमल और एक तश्तरी में पान रखकर लाती है।

महाराणा-महारानी जी के दरबार में किसके भाग्य विधान की रचना की जा रही है ?

महारानी-कृष्णा के विवाह के विषय में हम परस्पर विचार विमर्श कर रहे थे। कृष्णा अब युवावस्था के द्वार पर खड़ी है, आप तो इस विषय मे बिलकुल मौन है, आपको तो तनिक भी चिन्ता नहीं है पर मैं तो मां हूँ, मुझे ममता की लाज रखनी है।

महाराणा-पुरुष जब किसी विषय पर गंभीरता से सोचने लगते हैं तो उस कार्य को पूरा करके ही दम लेते हैं। अन्य महत्वपूर्ण समस्याओं पर भी ध्यान देना मेरा कर्त्तव्य है। महाराणा तथा अन्य सभी उपस्थित लोग अमल पान करते हैं। स्वयं महाराणा, अजीतसिंह और जवानदास की ओर पात्र बढ़ाते हैं। वे दोनों भी अमल पान ग्रहण करते हैं।

"इस दुनिया में सबसे श्रेष्ठ पदार्थ यह अमल है। इसके नशे में घर गृहस्थी, राज दरबार, सब कुछ रुई के बादलों की तरह उड़ जाते है। मनुष्य कल्पना के पंखों पर चढ़कर आनन्द लोक की सैर करने लगता है जहाँ अप्सराओं के नूपुर बजने लगते हैं। यह दुनिया एक अन्धकार के पर्दे में छिप जाती है।"

महारानी-संसार में समस्याएँ अनन्त है, एक एक को सावधानी, गंभीरता और युक्तिपूर्वक हल करने में मनुष्य की श्रेष्ठता है। समस्याओं की उपेक्षा से समस्याओं का अस्तित्व नष्ट नहीं होता बल्कि उलझन बढ़ जाती है।

महाराणा-वाह ! वाह ! तुम भी खूब कहती हो महारानी जी। इस संसार की तस्वीर इतनी विकृत हो गई है कि आँखें खोलकर उसे देखना भी कठिन हो गया है। मनुष्य की आकृति में हिंसक पशु बस्तियों में घुस गये हैं। वे आज राजा, महाराजा, सेठ, साहूकार, सरदार बन बैठे हैं। हमारे समाज की स्थिति बड़ी विचित्र है।

अजीतसिंह-महाराणा जी कृष्णा का विवाह करना अब अपना कर्त्तव्य है।

महाराणा-हाँ हाँ ! वह तो हो जायगा। आप लोगों का पूरा सहयोग प्राप्त है। हमारी चिन्ता आप सबकी चिन्ता है। कृष्णा हमारे वंश की राज-कमलिनी है।

जवानदास-विवाह के सम्पूर्ण प्रबन्ध की अपने को योजना बना लेना चाहिये। आपकी सम्मति भी कृपा कर बताने का कष्ट करें।

महाराणा - कुछ मतिभ्रम होकर कहने लगे—भाई मेरी सम्मति तो वही है जो आप सबकी है। मैं कृष्णा के विवाह को बड़ी धूमधाम से करना चाहता हूँ। मुझे सभी भाइयों, राजवंश के सभी व्यक्तियों का पूर्ण सहयोग मिलने में कुछ शंका है। मुझे आप इस कीचड़ में नही घसीटें तो उत्तम होगा।

महारानी ! कृष्णा कहाँ है ? मैं सोचता हूँ जब कृष्णा विवाह के पश्चात् चली जाएगी तो मेरे जीने का सहारा ही छिन जायगा। मेरा जीवन अधूरा रह जायगा, कौन मुझ परितप्त को विश्राम के पूर्व अपने गीतों की मधुर संगीत -ध्वनि से शान्ति प्रदान करेगा ? जब तक वह है, मैं उसके संगीत, उसकी चित्रकला की प्रतिभा का लाभ लेना चाहता हूँ। मेरी कृष्णा सर्वगुण सम्पन्न है।

महारानी-आपको मालूम नहीं कृष्णा स्वयं के कमरे में ही चित्रकला की साधना में तल्लीन है। वह मीरां के विषपान का चित्र बना रही है। कुछ दिनों पूर्व उसने भगवान नीलकण्ठ के विषपान का सुन्दर चित्र बहुत ही अच्छा और बड़े आकार का बनाया था।

महाराणा-इस दुनिया में चारों ओर विष की बेले फल फूल रही हैं। स्थिति यह है कि प्रत्येक भले आदमी को अपनी इज्जत बचाने के लिये विषपान करना पडता है। अच्छा, अब मैं जाकर कृष्णा के चित्रों को देखता हूँ। वह विषपान के ही चित्र क्यों बना रही है ? आश्चर्य है !

महाराणा जी वहाँ से उठकर कृष्णा की चित्रशाला की ओर चले जाते हैं। महारानीजी को भी वहां आने की बात कह जाते है।

अजीतसिंह-पता नही क्यों ? अनेक बार महाराणाजी कुछ बहकी बहकी बात करते है ?

जवानसिंह-राजा के हृदय में वैराग्य उत्पन्न होना राज्य व प्रजा के लिये हितकारी नही होता है।

अजीतसिंह-बैठिये न महारानीजी। हम विवाह सम्बन्धी योजना पर थोड़ा और विचार कर लेवें; ताकि किसी निर्णय पर पहुँच सकें।

महाराणी-नही अजीतसिंह जी, आज समय बहुत हो गया है। मुझे महाराणाजी के मानसिक स्वास्थ्य की चिन्ता है। मै अभी तो उनके पास: जाती हूँ। क्षमा कीजियेगा आपको इतना कष्ट दिया। यदि आप उचित समझें तो कल इसी समय यहाँ आने की कृपा करावें।

सभी लोग मंत्रणा भवन से चले जाते है।

---

# चार

मेवाड़ और मारवाड़ के सीमावर्ती एक ग्राम के बाहर शिवशंकर का बड़ा भव्य मन्दिर है। संध्या का समय है। भगवान भुवन भास्कर तीव्र गति से अस्ताचल की ओर बढ़ रहे हैं। एक धर्मशाला में मेवाड़ के राजपुरोहित जोधपुर जाते हुए विश्राम के लिये ठहर गये हैं। उस धर्मशाला में अन्य यात्री भी आकर ठहरते हैं। आसपास एक सुन्दर उद्यान है। घोड़ों के ठहरने के लिये थान बने हुए हैं। राजपुरोहित के साथ एक अन्य घोड़े पर बुधुआ नामक सेवक है जो विश्राम करने हेतु मन्दिर के पुजारी से ठहरने के स्थान की बातचीत करके अनुमति प्राप्त कर चुके हैं।

बुधुआ - पुरोहितजी ! ठहरने के लिये यही स्थान उत्तम है। यहाँ विश्राम करना ही उत्तम है। मैं घोड़े को दाना पानी देता हूँ। अपना सब सामान कमरे में रख दिया है।

राजपुरोहित - यहाँ बैठकर मन्दिर की मुंडेर से प्रकृति सौन्दर्य का अवलोकन करता हूँ। मुझे प्रकृति से बहुत प्रेम है। पुरोहितजी अपने मन ही मन कल्पना की उड़ान भर रहे हैं। मेवाड़ की सुन्दर पहाड़ियाँ अब यहाँ समाप्त हो रही हैं। मेरे सामने सुदूर पर मरुभूमि की झलक स्वरूप कुछ टीले बालू रेत के दिखाई दे रहे है। इस संसार में रूप-रग है, रस है, सौरभ है किन्तु मेरे जीवन में चारों ओर नीरवता है, जीवन में शुष्कता का वातावरण है। अपने जीवन का मूल्यवान भाग दूसरों के जीवन बनाने में ही लगा दिया। स्वयं की श्रीवृद्धि, मकान जायदाद के लिये कुछ नही किया। हम अमृत की खोज में दर-दर भटकते है पर हमें पद-पद पर विष ही प्राप्त हुआ। जब चारों ओर निराशा हो तो किसी मादक वस्तु के प्रयोग से ही चिन्ता दूर हो सकती है। अब समय भी हो गया है। जेब से एक डिबिया निकाल कर अफीम का सेवन करने लगता है। सूर्य की अन्तिम किरणें दृष्टिगोचर हो रही हैं। दूर-दूर तक जंगल और उससे भी आगे बहुत दूरी पर रेगिस्तान का मनमोहक दृश्य मन को लुभा रहा है।

खेतों और चरागाहों पर गये हुए किसान तथा ग्रामवासी गांव की ओर आ रहे हैं। कुछ लोग अपनी गाय, भैंस, भेड़ बकरियाँ ला रहे है। ग्रामवासी बालक-बालिकाएँ तथा नगर वधुएँ आ रही है। पानी भरने को कुछ ग्राम वालाएँ धर्मशाला के कुएँ पर आ रही है। आपस में वे बातें करती है।

रामी-कुए पर कोई आदमी घोड़ों को पानी पिला रहा है, हमें थोड़ी देर यहीं पर रुक जाना चाहिये।

श्यामा-हां-ठीक है, हम यहां पर ही ठहर जाते है।

रामी-क्या तुमने भी सुना है कि अपने मेवाड़ की राजकुमारी कृष्णा का विवाह होने वाला है।

श्यामा-वास्तव मे यदि यह सच है तो बड़ी प्रसन्नता की बात है।

रामी-हां बहुत खुशी की बात तो है ही, महाराणा साहब हमारे अन्नदाता हैं। पिता के समान हमारे रक्षक है। प्रजा के हितैषी है और हमारी राजकुमारी कृष्णा तो रूप में अप्सरा है। राजस्थान की रूपज्योति है, उसको देखकर हमारी आत्मा भी प्रसन्न होती है। हमे वास्तव में सुख का अनुभव होता है लेकिन। एक-लम्बी-साँस लेकर उदास हो जाती है। राजपुरोहितजी का ध्यान उनकी बातों की ओर लगा हुआ है।

श्यामा-बहिन तुम्हारे लेकिन का क्या अर्थ है ?

रामी-राजा महाराजाओं की सन्तानो के विवाह का आनन्द तो उन्हें प्राप्त होता है किन्तु उसमें अपार धन का खर्च आम जनता पर पड़ता है। क्या तुझे मालूम नही, जितनी भी राशि विवाह मे खर्च होती है उसे गरीब मजदूरों तथा किसानो से ही कर व लगान के रूप में वसूल किया जाता है ?

श्यामा-मान लो कोई इस राशि को नहीं दे तो क्या होता है ?

रामी-तू तो बिलकुल भोली बच्ची है। तुझे तो राज-काज का कुछ ज्ञान है ही नही। राजा को लड़की या लड़के के विवाह में खूब रोशनी होती है। मण्डप सजाये जाते है, खुलकर मास मदिरा का प्रयोग होता है। इन सबका खर्च आम जनता से डण्डे के जोर पर वसूल किया जाता है। यदि कोई निर्धारित राशि देने से किसी भी कारण इन्कार कर दे

तो उसे खोड़े में बन्द कर देते है । कोड़ों से पीटा जाता है, जनता का शोषण करने में ही वे अपनी सफलता मानते है । जनता का दोहन करना ही राजा महाराजाओं का काम है । उनके घर में घी के दीपक जलते हैं और गरीबों की झोंपड़ियों में अंधेरा रहता है । क्या यह अन्याय नहीं है ?

श्यामा-क्यों ? क्या महाराणाजी के पास धन की कमी है ?

रामी-वह महाराणा हैं ? दानवीर है ? हिन्दुओ के सूरज कहलाते है । क्या वे विवाह, उत्सव आदि मगलमय अवसरों पर लाखों रुपये व्यर्थ के कामों में व्यय करने मे ही वे अपने वश की प्रतिष्ठा समझते हैं ? अपनी गिरी हुई स्थिति में भी कम खर्च करना शान के विरुद्ध मानते है । राजवंश का बड़प्पन दिखाने का इसके सिवा और क्या तरीका है ? झूठे दिखावे और व्यर्थ के प्रदर्शन का ही फल है कि गरीब और भी गरीब बनते जाते है ।

श्याया-तो ये अमीर राजा, गरीबो को इतना क्यों तंग करते है? क्यों इनसे इतनी राशि वसूल करते है ?

रामी-धन संग्रह का काम मोटे-मोटे लोगों के हाथ में होता है । ये वड़े लोग गुलछर्रे उड़ाते है । शराब पीते है, जुआ खेलते है और वैश्यावृत्ति करते है । गरीबो पर ही जुलम करते है । श्यामा मेरी आत्मा तो कहती है कि अन्यायी राज्य अधिक समय नही चलता है । जनता मे जब चेतना आ जाएगी, ये प्रथाएं नष्ट हो जाएगी ।

श्यामा-अरे वहिन बातों में इतनी देर हो गई । अब पानी भरो और जल्दी घर चलो । दोनों पानी भर कर घर की ओर चली जाती है ।

राजपुरोहितजी ने उन दोनों महिलाओं की बातों को ध्यान से सुना था । उनके मन में उथल-पुथल हो रही थी । वे भी जीवन की विविध समस्याओं पर विचार कर रहे थे । इतने में एक सैनिक जो घोड़े पर दौड़-कर आ रहा था, उसने अपने एक अन्य साथी को पुकार कर रोका और जोर से हांपते हुए कहने लगा-भाई घासीराम! मै तो अब यह सिपाही की नौकरी छोड़ दूंगा । सैनिक का पेशा भी क्या अच्छा है, अरे यार इससे तो जंगल से लकड़ी और घास काटकर वेचना अच्छा होगा ।

घासीराम-आज तो सुखदेवसिंह वड़ी वहको-वहकी वातें कर रहा है ? सच सच वता क्या हो गया है ?

उन दोनों की बातें राजपुरोहित और बुधुआ दोनों ध्यान से सुन रहे थे।

सुखदेवसिंह-राजा महाराजा आपस में लड़ते हैं और सिपाहियों के सिर गाजर मूली की तरह कट जाते हैं। उनके बच्चे अनाथ हो जाते हैं किसी का क्या बिगड़ता है ?

भाई मैं अभी-अभी जोधपुर से आ रहा हूं। वहां महाराजा भीम सिंहजी ने अपने काका ताऊ भतीजे को पहले वीर सैनिकों की सहायता से पकड़ लिया, उनको निर्दयतापूर्वक मौत के घाट उतार दिया। केवल बचे रह गये-दासी-पुत्र कुंवर मानसिंह ?

घासीराम-फिर मानसिंहजी ने क्या किया ?

सुखदेवसिंह-घासीराम के कान में धीरे से कहता है-मनुष्य सपनों का महल बनाता है। अपने सुख के लिये दूसरों का विनाश करता है पर भगवान का न्याय बड़ा विचित्र होता है। जिन वीर सैनिकों ने भीमसिंहजी का साथ देकर सफलता प्राप्त की, उनमें से ही कुछ लोगों ने धन और जायदाद के लालच में पड़कर मानसिंहजी का साथ दिया। जब भीमसिंहजी अपने कुछ समर्थकों के साथ जालौर से जोधपुर की तरफ जा रहे थे-समदड़ी के निकट मानसिंह और उसके वीर साथियों सहित अमीर उमरावों ने मिलकर भीमसिंहजी और उनके साथियों को मौत के घाट उतार दिया। अब मानसिंहजी ही संभवत: जोधपुर के नये महाराजा बनेंगे।

घासीराम-यह तो बड़ी विचित्र घटना हुई। विधि का विधान अद्भुत है। अभी तो महाराजा भीमसिंहजी का पुत्र भी सात-आठ वर्ष का ही है।

राजपुरोहितजी और बुधुआ दोनों राठौर सैनिकों की बातें ध्यान से सुन रहे थे। उन्होंने उत्सुकतापूर्वक सुखदेवसिंह से पूछा-क्या भाई, यह सब सच है ? अभयसिंहजी अब कहां पर है ?

"पंडितजी आपको इससे क्या मतलब है ? यह तो हमारे जोधपुर राज्य का झगडा है-आप तो मेवाड़ी दिखाई देते है। आप तो भीमसिंहजी के विषय में ऐसे पूछ रहे हैं जैसे आप उनके लिये मेवाड़ की राजकन्या का टीका लेकर ही आये हों ?"

हां भाई-मुझे तो भीमसिंहजी के पास ही जोधपुर जाना है क्या वे यहां मिल जाएगे ?

घासीराम-आपको सचमुच जोधपुर दरबार से कुछ काम है ?

राजपुरोहित-मैं सच कहता हूँ मैं मेवाड़ के महाराणा भीमसिहजी की सुपुत्री राजकुमारी कृष्णा का जोधपुर के राजा भीमसिहजी स रिश्ता करने जा रहा था। विश्राम के लिये आज रात हम यहां ठहरे हुए है।

सुखदेवसिंहजी-पंडितजी-अब तो महाराजा भीमसिंह स्वर्ग सिधार गये हैं। अगर आपको मिलना हो तो गर्दन नीचे करो, मैं तलवार के एक ही वार में उनके पास स्वर्ग में पहुँचा दूंगा। फिर दोनों सैनिक चले जाते है।

राजपुरोहित-अगर यह बात सच है तो वास्तव में बड़े दुख की बात है। पुरोहित जी मन ही मन कुछ सोचते हुए दुविधा में पड़ गये। चिन्ता के कारण उदासी छा गई। भोजन के पश्चात आराम किया।

दूसरे दिन प्रातः शीघ्र उठकर दैनिक नित्य कर्मो से निवृत्त हो जोधपुर के लिये रवाना हो गये। तीन चार दिनों तक बहुत परिश्रम करके मार्ग के विभिन्न कष्टों को झेलते हुए जोधपुर पहुंचे।

वहां जाकर एक धर्मशाला में ठहर गये। भोजनादि के पश्चात् इधर उधर नगर में घूमने लगे। वहां के राजघराने की गतिविधियों का चुपचाप अध्ययन किया। फिर वहाँ के राजघराने के एक दो विश्वासपात्र राजपूतो से मिले। उन्हें अपने आने का उद्देश्य बताया। दीवानजी तथा नये राजा मानसिंहजी के समर्थक वीर सैनिकों एवं अधिकारियों को भी इस विषय मे समाचार विदित हुए। उन्होंने कुछ राज परिवार में बात-चीत भी की।

जब राज पुरोहित को पूर्ण विश्वास हो गया तो पुरोहितजी ने चुपचाप टीका वापस लेकर उदयपुर लौट जाने का निश्चय किया। प्रातः काल शीघ्र ही अपने घोडो को लेकर अन्य साथियों सहित जोधपुर नगर से निकल पड़े। लगभग एक सप्ताह पश्चात वे सब सकुशल उदयपुर वापस आ गये।

×

महाराणा भीमसिहजी राजसमन्द की पाल पर बने हुए राजमहलों में आठ दिन के लिये मनोरजन एव घूमने की दृष्टि से ठहरे हुए थे। राज्य के महत्वपूर्ण कार्यों की कार्यवाही के आदेश राजसमन्द से ही हो रहे थे, उनकी सुरक्षा का पूर्ण प्रबंध था। आमोद प्रमोद में महाराणा, महारानी कुमारी कृष्णा, सहेलियां, सेना अधिकारी तथा प्रमुख सरदार एवं महाराणा के अग -रक्षक आदि भी राजसमन्द तथा कांकरोली में ठहरे थे।

एक सेनाधिकारी तथा गुप्तचरो के विशेषाधिकारी ने महाराणा भीमसिहजी से आकर निवेदन किया कि जयपुर के महाराजा जगतसिहजी आपसे मिलना चाहते है। महाराजा जयपुर के एक प्रमुख सेनाधिकारी ने आकर सूचनार्थ निवेदन किया और मिलने का समय प्राप्त कर लिया। निर्धारित समय पर राजसमन्द के किनारे भव्य महल के बड़े कमरे में जहां महाराणा भीमसिह उच्च सिंहासन पर विराजमान थे, महाराजा जगतसिह को सम्मान पूर्वक लाया गया, युवा महाराजा जगतसिह ने महाराणा को आदरपूर्वक नमस्कार किया। महाराणा ने भी उनका स्वागत करते हुए उच्चासन पर बैठने का सकेत किया, आप प्रसन्न एवं दीर्घजीवी हों, ऐसी शुभ कामनाए भीमसिहजी ने प्रकट की और फिर शान्ति एवं खिन्न वदन बैठ गये।

म. जगतसिह-जान पड़ता है आज महाराणा साहब कुछ गंभीर एवं चिन्तित हैं। श्रीमान क्या कारण हो सकता है ?

म. भीमसिह- मेवाड का सिंहासन कुछ वर्षों से सुरक्षित नही है जगतसिहजी। मराठे बार-बार आक्रमण कर रहें है। खेतों में अच्छी पैदावार नही हो रही है। धरती सूखी एव शुष्क पडी है। वर्षा भी कभी अत्यन्त कम और कभी अत्यधिक हो जाने से पैदावार भी अनिश्चित है। अकाल, अरक्षा के भय के कारण लोग अपने घर छोड़ कर भाग रहे हैं। मराठों का भय चिन्ता का विषय है, ग्वालियर का दौलतराव सिंधिया और इन्दौर के यशवन्तराव होल्कर दोनों मेवाड़ तथा आसपास के राजाओं से लाखों रुपये प्रतिवर्ष की माग करते है।

जगतसिह-मेवाड़ ने विवशता से इनके आगे सिर झुकाया है अतः अब उनका साहस और भी हमें दबाने हेतु बढ गया है। अगर एक बार भी मेवाड़ अपनी सेनाओं को सगठित और आधुनिक हथियारों से

सुसज्जित एवं प्रशिक्षित कर सतर्क हो जाय तो मराठों को भी तनिक सोचना पड़ेगा। उनको अपनी लूट और शोषण की नीति को बदलने पर मजबूर होना पड़ेगा।

भीमसिंह-जगतसिंह। शायद आप नहीं जानते, आज मेवाड़ के पास न तो उपयुक्त हथियारों का भंडार है न शक्तिशाली और अधिक संख्या में प्रशिक्षित सेना है। आर्थिक स्थिति भी सम्पन्न नहीं है। ऐसी स्थिति में मराठों से युद्ध करना, उनसे लोहा लेना कोई हँसी खेल नहीं है। इस प्रकार मराठों ने मेवाड़ ही नहीं, राजस्थान के पूर्वी उत्तरी भाग के राज्यों पर अपना अधिकार जमा लिया है। उनसे मुसलमान और अंग्रेज भी घबराते हैं।

जगतसिंह- यदि आप की आज्ञा हो तो मेवाड़ की सुरक्षा के लिये जयपुर राज्य की सुशिक्षित सेना नये हथियारों सहित आ सकती है। राजस्थान में मेवाड़ का राजवंश परम पुनीत है और इसके गौरव की रक्षा करना हम लोगों का भी कर्तव्य है, महाराणाजी।

भीमसिंह- मेवाड़ की शक्ति बढ़े, इसके लिये हमने अपनी पुत्री कृष्णा कुमारी का विवाह जोधपुर नरेश भीमसिंहजी से निश्चित किया था पर दुर्भाग्य की बात है कि उनके पारिवारिक छल कपट और संघर्ष के कारण अभी भी मेरा संकल्प अधूरा ही है

जगतसिंह - हमारे विश्वस्त सूत्रों से तो यह भी पता लगा है कि मेवाड़ पर सिंधिया के आक्रमण करने का एक कारण और भी है।

भीमसिंह - वह कौनसा कारण है?

जगतसिंह - दौलतराव सिंधिया भी कृष्णाकुमारी से विवाह का इच्छुक है।

भीमसिंह - जगतसिंहजी। ऐसा कभी नहीं होगा। सिसोदिया वंश की राजकन्या का विवाह सिंधिया से नहीं होगा। हमारा उत्तर स्पष्ट है। मेवाड़ आज सैनिक और आर्थिक दृष्टि से कमजोर हो गया है परन्तु हमने आत्म-सम्मान तो नहीं बेचा है।

जगतसिंह - महाराणा साहब! जयपुर राज्य की ओर से प्रत्येक प्रकार की सहायतार्थ हम तन मन धन से तैयार हैं। आपकी इज्जत

हमारी इज्जत है। आप की आज्ञा पर हमारे सैनिक कट मरेंगे। आप तनिक भी चिन्ता नहीं करें।

भीमसिंह - वास्तव में आप धन्यवाद के पात्र हैं। इस संकट की वेला में आपने मुझे चिन्ताओं से छुटकारा दिलाया है। आप अम्बेर कब लौट रहे हैं ?

जगतसिंह - कल प्रभातकाल में ही चला जाऊँगा। आठ दिनों के अन्दर मेरी पचीस तीस हजार सेना मेवाड़ की रक्षा के लिये प्रस्थान करके यहां आ जावेगी। आप अब निश्चित हो विश्राम करें, महाराणाजी।

भीमसिंह - हमने भी अब कृष्णाकुमारी का विवाह आपके साथ करने का विचार किया है अतः शीघ्र हमारा राजपुरोहित जयपुर जाकर वह रस्म पूरी करेगा ऐसी आशा है, जगत सिंह जी। महाराणा भीमसिंह सोच विचार करते हुए वहां से चले गये।

जगतसिंह सोचने लगे-मेवाड़ के आकाश पर संकट के काले बादल छाये है। जान पड़ता है भयंकर आंधी आने वाली है। ऐसी विनाशकारी आंधी जिसका सारा राजस्थान के रजवाड़ों पर प्रभाव पड़ेगा। आज राजस्थान विनाश के कगार पर खड़ा है। उसके चारों तरफ लुटेरे और यमराज खड़े हैं। ईश्वर ही जाने राजस्थान कब इन संकटों से ऊपर उठ सकेगा ?

जगतसिंह वहां से चलने को तैयार ही हुए थे कि अचानक कृष्णा कुमारी अपनी दो सहेलियों के साथ उस महल में आ गई, वह जगतसिंह को देखने व मिलने के बहाने उस ओर आ गई।

कृष्णा - क्या तुम मुझे नहीं पहिचानते, जगत्।

जगत् - राजकुमारीजी ! कृष्णा कुमारी को कौन भूल सकता है ? सारे भारतवर्ष में जिसके अनुपम रूप और गुण की चर्चा है, वह कैसे भुलाई जा सकती है ?

कृष्णा - क्या तुम भी मुझे वैसी ही समझते हो, जगत ?

जगतसिंह - कृष्णे! मैं तुम्हे अपनी कल्पना की रानी समझता हूँ। तुम इस संसार से बहुत ऊपर हो। लोग तुम्हारे सौन्दर्य को, गुण के आगार को समझ नही पा रहे हैं। आकाश की एक स्वर्ण आभा हो तुम। एक

किरण स्वर्ग से धरती पर भूल से आ गई। सभी लोग अपनी विभिन्न दृष्टियों से तुम्हें देख रहे हैं। तुम्हारे सौन्दर्य का मूल्यांकन करना भी कठिन है। लोग इस गुत्थी को सुलझा भी नही सकेंगे और किरण खो जाएगी-क्षितिज के अदृश्य तल में छिप जायेगी। मैं ऐसा समझता हू। यह मेरी कल्पना है।

कृष्णा-कुछ हँसकर आश्चर्य करते हुए कहती है-आप तो एक सिद्धहस्त कवि भी हैं। आप तो तन्मय होकर कवि की भांति भावालोक की अभिव्यक्ति कर रहे हैं।

जगतसिंह - पहले तो मैं कवि नहीं था पर अब तुम्हारा रूप और सौन्दर्य देखकर मेरा मन रूपी भंवरा अपनी वाणी से आशुकवि की भांति वर्णन करने लगा है। पर पता नही, मैं वास्तव में कुछ कर सकूँगा या नही।

कृष्णा - आपकी बातें इतनी गूढ़ हैं कि कुछ समझ में नहीं आतीं। ऐसा आभास होता है कि आपसे मिलने के पश्चात् मुझ में भी कुछ परिवर्तन हो गया है। जब मेरी आपसे भेंट नही हुई थी, मेरा जीवन मन्थर गति से चल रहा था। यह मेवाड़ का सूर्यमहल, पिछोला सागर, नीला आकाश, सहेलियो की बाड़ी आदि मेरे जीवन के स्तम्भ थे किन्त आपसे मिलकर एक नया अनुभव, नई प्रेरणा प्राप्त हुई ऐसी भावना उत्पन्न होती है कि मेरे प्राणों का देवता जिसे मैं पहले जानती भी नहीं थी, मुझे अचानक मिल गया। मैं तो आपको प्राप्त करने की आकांक्षा से ही धन्य हो गई। क्या आप सचमुच कल वापस जयपुर जा रहे है?

जगतसिंह - हां राजकुमारी। जा रहा हूँ। मेवाड़ पर शीघ्र ही सिंधिया और होलकर का आक्रमण होने वाला है इसलिये जयपुर जाकर शीघ्र ही सेना भिजवाना आवश्यक हो गया है।

कृष्णा-जगत, क्या कोई ऐसी युक्ति नही है जिससे यह विनाशकारी युद्ध होवे ही नही।

जगतसिंह- सिंधिया ने मेवाड़ को कमजोर समझकर बार-बार इसका रक्त चूसा है। यदि मेवाड़ सदैव सुख शान्ति और सम्मान पूर्वक जीना चाहता है तो उसको दुश्मनों का वीरता पूर्वक मुकाबला करना पड़ेगा। कभी-कभी शान्ति के लिये युद्ध करना आवश्यक हो जाता है कृष्णे!

कृष्णा-युद्ध की विध्वंसकारी तस्वीर से ही मैं सिहर उठती हूँ। अच्छा यह बताओ आप मेवाड़ कब वापस आ रहे हैं ?

जगतसिंह- मैं शीघ्रातिशीघ्र वापस आऊंगा।

कृष्णा-अधिक दिन बीतने पर मुझे भूल तो नहीं जाओगे जगत! बोलो।

जगतसिंह- कैसे भूल सकता हूँ कृष्णा ? तुम्हारे रूप लावण्य की सच्ची तस्वीर मेरे मन मन्दिर में बस गई है। जीवन में प्रेरणा का दीप जल गया है। आशा के आकाश का विस्तार असीम हो गया है। मेरा हृदय तुम्हारी पूजा करने लगा है। अच्छा कृष्णा, अभी तो आज्ञा दो, मुझे शीघ्र ही जयपुर जाना अनिवार्य हो गया है।

जगतसिंह वहाँ से चले जाते हैं। जयपुर पहुँच कर एक सप्ताह में ही तीस हजार सैनिकों का जमघट लग जाता है। जब सिंधिया को यह समाचार विदित होते हैं तो वे मेवाड़ के महाराणा पर दबाव डालते हैं कि जयपुर की सेना को मेवाड़ के बाहर निकाल दो, किन्तु महाराणा भीमसिंह ऐसा नहीं कर पाते हैं। सिंधिया और जोधपुर की सेना का तोपखाने से आक्रमण मेवाड़ पर होता है। मेवाड़ और जयपुर की सेना उनसे लड़ती है किन्तु भारी हानि होने के कारण जयपुर की सेना मारवाड़ पुष्कर होती हुई वापस जयपुर लौट जाती है। उन्हें जन धन की भारी हानि उठानी पड़ती है। सिंधिया ने जयपुर महाराज से धन मांगा था। धन नहीं देने पर वह महाराजा जयपुर से नाराज था अतः वह जोधपुर नरेश से मिलकर जयपुर को हानि पहुँचाने में सफल हुआ। इस युद्ध में मेवाड़ के सैनिकों को भी बहुत क्षति उठानी पड़ी। महाराणा भीमसिंह को वापस अपनी सीमा मे ही शान्ति संधि करने पर लाचार होना पड़ा।

सिंधिया एक महीने तक उदयपुर को चारों ओर अपनी सेना द्वारा घेरे रहा। इस बात पर जोर देता रहा कि कृष्णाकुमारी का विवाह किसी भी हालत में जगतसिंह से नही हो।

मेवाड़ के महाराणा पर सिंधिया इस विषय में बराबर दबाव डालता रहा। अन्ततः तंग आकर मेवाड़ के दरबार में जयपुर के एक राजदूत का अपमान किया गया। जब महाराजा जगतसिंह को यह समाचार मिला तो वह बहुत नाराज हुआ और मेवाड़ से अपने अपमान का बदला लेने का उपाय सोचने लगा। बहुत बड़े पैमाने पर वह सेनाएं

तैयार करने व नये हथियार एकत्रित करने लगा। वह अपनी सेनाओं को उच्च कोटि का प्रशिक्षण दिलवा रहे थे। उनकी तैयारी भी वास्तव में उच्च स्तर की थी। महाराजा जयपुर ने एक लाख बीस हजार सैनिकों की सेना तैयार करली और उसे जयपुर की रक्षा हेतु सदैव तैयार रहने का आदेश मिल गया था। ऐसा भी कहते हैं कि महाराजा जगतसिंह द्वारा जितनी वड़ी सेना का संगठन उस समय किया गया, कछवाहो मे उतनी बड़ी संख्या में पहले कभी शायद ही ऐसा अवसर आया हो। युद्ध का अभ्यास करना भी जारी था।

आज उदयपुर के राजमहल में महाराज जगतसिंह तथा जयपुर के कुछ सरदारों की महाराणा भीमसिंह से मेवाड़ की सम्मिलित सुरक्षा विषय पर प्रातःकाल से ही विचार विमर्श हो रहा है। मेवाड़ की उत्तरी पश्चिमी सीमा पर मारवाड़ के आक्रमण की शंका बनी रहती है। दोनों राज्यों के प्रमुख अधिकारियों की पहले विचार सभा के निष्कर्षों को महाराणा तथा महाराजा जयपुर के समक्ष प्रस्तुत करके उनकी अनुमति प्राप्त करने का कार्य आज सम्पूर्ण हो गया। अब मेवाड़ किसी भी संभावित आक्रमण के लिये तैयार है।

आज महाराजा के स्वागत में सूर्यमहल में विशेष भोज का आयोजन किया गया है। मेवाड़ के शासनाधिकारी बड़े बड़े ठाकुर, जागीरदार राव, उमराव सभी उपस्थित है। महाराजा जयपुर के सेनाधिकारी, मंत्री तथा प्रमुख परामर्शदाता भी भोज में सम्मिलित हैं।

भोजन के पश्चात् दोपहर में सभी लोग विश्राम के लिये अपने स्थानों पर जाते है। महाराजा जयपुर महल के जिस भाग में ठहरे हुए थे, उसके सामने ही शीशमहल और कलाभवन था। कला भवन में राजकुमारी कृष्णा अपनी सहेलियों के साथ संगीत और चित्रकला का अभ्यास करती थी।

विश्राम के पश्चात जब महाराजा जगतसिंह उठे तो खिड़की में से उनकी दृष्टि कृष्णा कुमारी की सहेली रमा पर पड़ी। रमा अपने हाथों में तीन चित्र लेकर जा रही थी। कुछ देर बाद महाराजा जगतसिंह टहलते-हुए सामने के कमरे में चले गये। वहाँ जाकर चुपचाप उन्होंने देखा कि

कृष्णा कुमारी महाराजा जगतसिंह के एक सुन्दर चित्र के समक्ष पुष्पमाला लेकर चित्र को पहना रही है। उसके पास स्वयं कृष्णा कुमारी का एक सुन्दर चित्र भी लगा हुआ है। दूर से ही जगतसिंह ने कहा, जिस चित्र को अभी माला पहिनाई है, क्या उस व्यक्ति के गले में वरमाला डालने का अभ्यास कर रही हो ? राजकुमारी कृष्णा का ध्यान आवाज देने वाले की ओर गया। फिर कृष्णा ने अपने सुन्दर मुख पर आंचल को आगे खीच लिया और जगतसिंह की ओर उन्मुख होकर विनम्रता एवं लज्जा पूर्वक कहने लगी, जीवन धन ! आपने मेरे शून्य हृदय में प्रवेश करके एक नया भाव, नई प्रेरणा भर दी है। मुझे प्रेम का पाठ पढ़ाया है, मेरी कल्पना को नया जीवन दिया है। तुम मेरे प्राण-पपीहे हो, मन के मयूर हो, तुम्हारे संसर्ग ने मेरे जीवन को नये रंग में रंग डाला है। मेरे ही कारण आपके राज्य पर संकट के बादल मंडरा रहे हैं। मारवाड़ की सेना ने पर्याप्त हानि भी आपको पहुंचाई है लेकिन आप वास्तव में स्थित-प्रज्ञ हैं, प्रणवीर हैं। आप सदैव मेरे हैं और जीवन भर रहेंगे। इसमें तनिक भी सन्देह नही है।

जगतसिंह - राजनन्दिनी तुम्हें इस रूप में देखकर मेरे हृदय की कलियां खिल गई हैं।

कृष्णा-आपने बहुत प्रतीक्षा करवाई। युद्ध और राजनीति में ही आपका अधिक समय व्यतीत होता है।

जगतसिंह-मेरे अन्तर्मन में तुम्हारे मनमोहक चित्र और स्वप्नो में बोलती हुई तस्वीर से अभी तो मन बहला लेता हूँ परन्तु अधिक दिनों तक दूर रहना कठिन लगता है।

कृष्णा - मैं भी सदैव तुम्हारा ध्यान करती हूँ। तुम्हारी अनुपस्थिति में भी तुम्हारी पूजा करती हूँ। उसी से हँसती, बोलती गाती हूँ। आप भी मेरे स्वप्नो के राजा हैं, मेरी आशा के चन्द्रमा है। मैं आपको कैसे भूल सकती हूँ। आप मेरे प्राणाधार है महाराज !

जगत - प्रिय कृष्णा ! मैं तुम्हें अभी तक भी पूर्ण रूप से पहिचान नहीं सका। तुम वास्तव में देवी गुणों से परिपूर्ण हो। तुम में कितनी महानता है, मैं अपने लघु हृदय के मापदण्ड से तुम्हारी महानता को नापने में असमर्थ हूँ। तुम्हारे शरीर में सारे ब्रह्मांड का सौन्दर्य विधाता ने भर दिया है। तुम पुण्य की सजीव प्रतिमा हो। तुम धरती पर स्वर्ग की.

उर्वशी हो। तुम स्वर्गिक सौन्दर्य से अलंकृत हो। पृथ्वी से तुम्हारा कोई सम्बन्ध नहीं है। तुम एक विचित्र प्रकृति की प्रतिमा हो-सर्वदा सौन्दर्य उमड़ता यौवन, लहराती लज्जा और प्रफुल्लता और पवित्रता से परिपूर्ण जीवन ज्योति।

कृष्णा - ऐसा लगता है कि इन दिनों कविता करने की तुम्हारी बीमारी बढ़ती जा रही है। यह क्यों?

जगतसिंह - कृष्णे। यह कविता नहीं, यह शब्दों का जाल नहीं। यह हृदय से स्वतः निकलने वाली प्रणय-गंगा का अविरल प्रवाह है। जीवन के सत्य की अमृत वर्षा है।

कृष्णा - सुना है कि मारवाड़ के मानसिंह का कोई सन्देश वाहक आया है।

जगतसिंह - हां कृष्णा! सिंधिया को मैंने बीस लाख रुपये नहीं दिये अतः वह मारवाड़ नरेश से जा मिला और अमीर खां भी उनकी मदद पर है। उनकी सैनिक शक्ति के सहारे एक दूत को यहां भेजा है। महाराणा भीमसिंहजी को कहलाया है कि कृष्णाकुमारी का विवाह मानसिंह से शीघ्र करने की स्वीकृति दी जाये वरना युद्ध के लिए तैयार हो जाओ। मेवाड़ का विनाश अवश्य हो जाएगा।

अजीतसिंह की शह पर मारवाड़ वालों की इतनी हिम्मत हो रही है कि वे महाराणा प्रताप की भूमि का, वीरों का विनाश करने की धमकी देते हैं।

कृष्णा - फिर पिताजी ने क्या उत्तर दिया?

जगतसिंह - महाराणाजी विचित्र स्थिति में हैं। उन्होंने तो मेरे साथ ही तुम्हारे विवाह का निश्चय किया है। जब मानसिंह के लिये सगाई का नारियल भेजा ही नहीं था तो नैतिकता और मानवीय सामाजिक परम्परा के अनुसार विवाह की बात करना सर्वथा अनुचित है। फिर भी यदि युद्ध हुआ तो परिणाम सभी के लिये घातक एवं विध्वंसकारी होगा। इसमें क्या सन्देह है? सिंधिया और अमीरखां राजपूतों को लड़ाकर अपना वर्चस्व स्थापित करना चाहते है। महाराणा इस स्थिति में डर रहे है कि क्या करे?

कृष्णा - इसका सार यही है कि इस अकल्याण की जड़ मैं ही हूँ। मेरी सुन्दरता राज्य के लिये अभिशाप है। मेरा जन्म मेवाड़ राजकुल में न

होकर साधारण घराने में होता तो उत्तम रहता। मेवाड़ राज्य को तो बुरे दिन नहीं देखने पड़ते। तुम्हीं बताओ जगत! यह समस्या कैसे सुलझेगी ?

जगत - उसका एक उपाय हो सकता है।

कृष्णा - क्या ? शीघ्र बताओ जगत।

जगतसिंह - यदि मैं मेवाड़ से विवाह का सम्बन्ध स्थापित नहीं करूं तो मेवाड़ भयंकर रक्तपात से बच जायगा। मानसिंह तुम्हें प्राप्त करके सन्तुष्ट हो जायगा। फिर मारवाड़ मेवाड़ और जयपुर की सम्मिलित सेनाएं मिलकर अमीरखां व सिंधिया को राजपुताने के बाहर कर देंगे और यदि संभव हुआ तो अंग्रेजों को भी भारत के बाहर निकालने की ओर ठोस कार्यवाही की जा सकती है।

कृष्णा - यह मैं सहन नही कर सकती जगत।

जगतसिंह - समय का सन्देश ऐसा ही लगता है। मारवाड़ एक शक्तिशाली राज्य है। मानसिंह स्वयं बड़ा कठोर, वीर, कूटनीतिक और षड्यंत्री है। उसने अपने भतीजे को कैद कर लिया है और बलपूर्वक शासक बन गया है। अमीरखां की फौजी शक्ति से वह और भी शक्तिशाली बन गया है।

कृष्णा - क्या मानसिंह की शक्ति से तुम भयभीत हो ? सच-सच बताओ।

जगतसिंह - नही, नही, मैं डरता नहीं राजनन्दिनी, लेकिन व्यर्थ का रक्तपात नही हो, उसका एकमात्र यही मार्ग है।

कृष्णा - मुझे तो अब भी विश्वास नही होता कि एक वीर राजपूत रक्तपात के डर से अपनी होने वाली पत्नी को त्यागने का विचार भी कर लेगा। जिसे प्राण प्रिय, सपनों की रानी माना हो, जिसे अपना मन वचन प्राण देने का संकल्प कर लिया हो, वह उसे अपने ही शत्रु को इतनी सरलता एव सहजता से देने की बात कह सकता है—बड़ा आश्चर्य है जगत!

जगतसिंह - कृष्णा तुम्हें मेवाड़ की वर्तमान शक्ति का पूर्ण ज्ञान ही नही है। अजीतसिंह ने राज्य को अन्दर से खोखला कर दिया है। राजपूत नरेश आपसी द्वेष की भट्टी मे पतंगों की तरह जलकर नष्ट हो रहे हैं। अमीरखां स्वयं यमराज बनकर हानि पहुँचा रहा है। वह धन का लालची और अविश्वसनीय है, डाकू है। सिंधिया भी एक प्रकार से लुटेरा ही

है। वह हिन्दू होते हुए भी हिन्दुओं का दुश्मन है। यदि हम विना सोचे समझे कूद पड़ें तो भी परिणाम विनाश के अतिरिक्त क्या होगा, यह तो स्पष्ट ही दीखता है। मेवाड़ की रही सही मान-मर्यादा भी नष्ट हो जाएगी। सारे राजस्थान की भूमि खून से लाल हो जायगी।

कृष्णा - जगतसिंहजी ! क्या आपने गीता नहीं पढ़ी ? भगवान कृष्ण का सन्देश याद नहीं है ? कर्म करते रहो, अन्याय का सदा विरोध करो।

जगतसिंह - गीता खूब पढ़ी है लेकिन कृष्णा यह धर्मयुद्ध का युग नहीं है। इस युग में छल कपट ही राजनीति है। शक्ति के वल पर हम विजयी हो सकते है परन्तु राजपूतों की परस्पर की फूट ही विनाश की जड़ है।

कृष्णा - आप चिन्ता न करें, सच्चे मन से जितनी भी शक्ति है, उसको संगठित करके डाकू अमीरखाँ, लुटेरे सिंधिया और कुल कलंक मानसिंह का डटकर मुकाबला करना अपना कर्त्तव्य है। जो मेरा हरण करना चाहते हैं, क्या आप उसका विरोध नहीं करोगे ? क्षत्रिय सिद्धान्त और कर्त्तव्य पर ही अपने प्राणों को न्यौछावर करते हैं। वीरों के रक्त-वर्षण से ही राजस्थान की भूमि उर्वरा बनेगी। अन्याय का विरोध करना मानव का सच्चा धर्म है। मानसिंह को भी मेवाड़ की ओर से पहले उचित उत्तर भेजा जायगा। अगर वह फिर भी अपनी जिद पर डटा रहा तो उससे डटकर लोहा लिया जाएगा। मैं सिसोदिया वीरवंश की राजकन्या हूँ। मैं अपने हाथों में तलवार लेकर रणभूमि में लड़ूँगी लेकिन मानसिंह से कभी भी विवाह नहीं करूंगी। मैं अपनी वंश-मर्यादा की रक्षा करूंगी। सुनो जगतसिंह यदि विवाह होगा तो केवल तुम्हारे साथ, अन्यथा किसी के साथ नहीं होगा, यह मेरी प्रतिज्ञा भी ध्यान से सुन लो। यह मेरा अन्तिम निर्णय है। तुम वीर पुरुष हो। तुम्हारा निर्णय अब तुम्हारे पास है। अब तुम्हारा मार्ग, तुम्हारा कार्य क्या होगा-यह तुम जानो। अत्यन्त जोश में धाराप्रवाह कहते हुए राजकुमारी अपनी सहेलियों के साथ कक्ष से बाहर जाने को तैयार हो रही थी।

जगतसिंह - राजकुमारी ! धन्य हो ! तुम वास्तव में मेवाड़ की वीर बाला हो। वंश के गौरव के अनुकूल वीरता और सौन्दर्य की विपुल राशि प्राप्त की है। तुम एक नारी होकर ऐसा दृढ निश्चय कर सकती हो तो क्या मैं पुरुष होकर भी कायरता दिखाऊंगा ? मैं तुम्हें विश्वास दिलाता हूँ, ऐसा कभी नहीं होगा। यदि युद्ध अवश्यम्भावी है तो वीरतापूर्वक

आनन्द को और बढ़ाने के लिये बेटी कृष्णा तुम अपनी वीणा लेकर शीघ्र आ जाओ और इस चाँदनी रात को अपनी स्वर लहरी से मुखरित कर दो तो उत्तम रहेगा।

कृष्णा अपनी वीणा लेने के लिये शीघ्रता से चली जाती है। उसके जाते ही महारानीजी स्वयं महाराणा के पास आ जाती है। महाराणाजी अपनी स्वगत वार्ता में बिना इधर उधर देखे कहते हैं, हां, हां, सुनता हूँ-बेटी गाओ-तुम्हारे संगीत से मेरी आत्मा आनन्दित हो उठती है।

महारानी - महाराणाजी-आप अकेले ही शून्य से बातें कर रहे है? यहां तो कोई भी नहीं है।

महाराणा - अरे अभी तो कृष्णा यहीं थी, वह कहां चली गई? ओहो-तो तुम कब आ गई? मैं समझा कृष्णा अपनी वीणा लेकर आई है। मुझे तो इस चांदनी रात का दूर-दूर बिखरा यौवन देखने में आनन्द आ रहा है। आओ बैठो-तुम भी झील में बिखरी शरद चन्द्रिका की सौन्दर्य राशि का अवलोकन करो-देवी।

महारानी - आपको तो कृष्णा के विवाह की·······

महाराणा - महारानी! उधर देखो-चारों ओर कैसी मदमाती चांदनी बिखरी हुई है। प्रकृति मनुष्यों को आलिंगन करने को आमंत्रित कर रही है। चलो-रानी हम झील की लहरों पर राधा कृष्ण बनकर नृत्य करें। कुछ समय समस्त चिन्ताओं को छोड़कर नाचें, गावें, हँसी और आमोद में झूम उठें। बोलो महारानी, क्या हम अपने को इतना हल्का बना सकते है कि बिना नाव के भी हम पानी पर नृत्य कर सकें? उधर देखो महा-रानी, पानी में चन्द्रमा का रूप लहरों से आंख-मिचौनी कर थिरक रहा है।

महारानी - आप तो दुनियादारी से बहुत दूर चले जाते हैं। मेरी आव-श्यक बात भी सुनने का तनिक कष्ट कीजिये ना।

महाराणा - हां-हां-कहो-क्या बात है?

महारानी - कल दोपहर के समय राजजोहरी आने वाले हैं। अपनी कृष्णा के विवाह हेतु कुछ बहुमूल्य आभूषण ले लेना उत्तम रहेगा। हमें अभी से विवाह की तैयारी करनी चाहिये।

महाराणा - प्रिय तुम, इस चांदनी का आनन्द लूटो। कहां तुम घर गृहस्थी और राजकाज की चिन्ताओं के अंधकूप में मुझे भी घसीट रही हो। आकाश में देखो असंख्य नक्षत्र अपनी चमक से आनन्द बिखेर रहे हैं। उपवन में सैंकड़ों पुष्प खिले हैं। भगवान के खजाने में लाखों हीरे जवाहरात बिखरे पड़े हैं-इस जोहरी के अमूल्य हीरों का हमें कुछ भी मोल नहीं देना पड़ता। जिसके पास भावुक हृदय है, कवि की कल्पना है, जो सौन्दर्य राशि मे तिरोहित है, उसे प्रकृति के इन गहनों का कोई भी मूल्य नहीं चुकाना पड़ता है। जी खोलकर प्रकृति प्रदत्त इन गहनों से शृंगार करो। इस संसार में तुम्हें कोई रोकने वाला नही है।

महारानी – आप तो मेरी बात सुनते ही नहीं हैं। अच्छा अब मैं जाती हूं।

महाराणा - महारानी उधर देखो-आकाश के सुदूर छोर पर एक बादल का काला सा टुकड़ा दिखाई दे रहा है। कहीं वह बिखर कर आकाश में चारों ओर न छा जाय, अन्यथा मेरा चन्द्रमा ओझल हो जायगा। स्वर्गिक संगीत की आनन्द ध्वनि रुक जाएगी। मेरा सुखी संसार विलुप्त हो जायगा।

महारानी तनिक झुंझला कर तेज आवाज में कहती है, क्या मुझे अकेले ही इस संसार के कष्टों के सागर में डूबना पड़ेगा? मेरी बात सुनते ही नहीं हैं। प्रकृति प्रेम में इतने दत्त-चित हो गये हैं कि अपने पारिवारिक दायित्व की ओर से बिलकुल ही निश्चित हो गये हैं। महारानीजी वहां से चली जाती हैं। उनके जाते ही कृष्णा अपने हाथों में वीणा लेकर पिताजी के पास आ जाती है। फिर कृष्णा महाराणाजी से कहती है— सुनिये। महाराणाजी अपनी तल्लीनता में मगन थे बिना सोचे ही बोल पड़े-अभी नही-अभी नही।

कृष्णा - पिताजी, मैं हूं आपकी कृष्णा। तो क्या मैं अपनी वीणा वापस रख आऊं पिताजी?

महाराणा - (कृष्णा की ओर देखकर) ओह तू है मेरी प्यारी बेटी। मैंने समझा महारानी है। हां हां बेटी। गाओ। तुम इस अंधकार की फैली कालिमा को संगीत की माधुरी से, रूप की ज्योति से, ज्ञान के प्रकाश से, उसका काया कल्प करने की क्षमता रखती हो। कांटों के जंगल में विकसित होने वाला गुलाब का फूल हो बेटी! अब तुम अपनी वीणा से,

अपने मधुर गान से संगीत के सागर में हमारी आत्मा को तिरोहित कर दो। इससे मुझे बहुत आनन्द प्राप्त होगा, बेटी।

कृष्णा ने वीणा के तारों को झंकृत कर दिया। वह मधुर राग में गाने लगी। नीलगगन पर मैं चन्द्रमा की चांदनी हूँ। मैं गगन पथ से नृत्य करती आ रही हूँ। मधुर चांदनी रात में अपने जीवन के क्षणों को आनन्द के सागर में डुबो रही हूँ। यहां ससार मे चारों ओर दुख-दर्द और निराशा है। मैं उसको सुन्दर, मरस लुभावना बनाने के लिये आ गई हूँ। सारे संसार के लोगों को आत्मिक आनन्द की प्राप्ति हो सकती है। यदि वे अपनी आत्मा के संगीत की ध्वनि को सुनें, अपने मन में भगवान का दर्शन करें, अपने हृदय में पवित्रता की सरिता को बहने दें। उधर देखो। बादलों के झुण्ड के झुण्ड चन्द्रमा की रूप ज्योति पर भवरों की तरह मंडरा रहे हैं। ऐसा मालूम होता है कि ये सब तारे बिलकुल प्यासे हैं-सुधाकर की सुधा का पान करने के लिये दौड़ रहे हैं। उनमें प्रतियोगिता हो रही है कि पहले कौन अमृत का पान करता है और अपने हृदय की प्यास को प्रेम जल से तृप्त करता है। प्रत्येक मानव के मन में असंख्य सपने होते हैं। मधुर स्वप्नों की कल्पना में, जीवन की सरस घड़ियों में, इस मधुयामिनी में उनकी कल्पना की नौकाएँ चल रही है। चन्द्रमा की किरणों के द्वारा वे अपनी नौकाएं चला रहे हैं। मैं इस चन्द्रमा की चांदनी हूँ। मैं इस संसार की समस्त आनन्दराशि का रसपान करना चाहती हूं-हे भगवान-मुझे ऐसी शक्ति दो। मैं आपसे ससार के मंगलमय भविष्य की प्रार्थना करती हूँ। अचानक ही वीणा का तार टूट जाता है।

महाराणा - जो संगीत के सागर में, आनन्द की गंगा में तल्लीन हो गये थे यकायक जोर से बोल पड़े-बेटी और गाओ तुमने गाना क्यों बन्द कर दिया। मुझे तो ऐसा लगा-जैसे किसी ने स्वर्ग से उठाकर रसातल में डाल दिया हो। और गाओ बेटी, वीणा को बन्द मत करो।

कृष्णा - पिताजी। वीणा का तार टूट गया, इसलिये गाना कठिन है।

इसी समय महारानी पुनः उसी कक्ष में खिड़की के पास आकर महाराणाजी को सम्बोधन करते हुए कहती है-क्या आज सारी रात इस खिड़की के पास खड़े हुए बितानी है? अब आपको विश्राम की आवश्यकता है।

महाराणा - इसी के समान यदि मेरे जीवन का तार टूट जाता तो यह जीवनरूपी वीणा बेकार हो जाती है। यह जीवन एक वीणा है। सहसा एक दासी मुजरा करते हुए वहां कुछ ध्वनि द्वारा सचेत करती हुई कक्ष में प्रविष्ट होती है। हाथ जोड़कर महाराणा और महारानी की ओर उन्मुख होकर राज पुरोहितजी के महलों में आने की सूचना निवेदन करती हैं, अन्नदाता राजपुरोहित पधारे हैं।

महाराणा - कुछ शंकित और चिन्तित भाव से इधर उधर देखते हैं। पुरोहितजी को इतनी रात बीते आने का क्या अभिप्राय है? वे तो जोधपुर गये थे? फिर दासी से कहा, पुरोहितजी को इस समय यही पर भिजवा दो। फिर मन में सोचने लगे, जोधपुर से इतनी जल्दी कैसे आ गये? क्या बात हुई?

राजपुरोहित उस स्थान पर धीरे धीरे आकर महाराणाजी का अभिवादन करते हैं। जय हो महाराणाजी की।

महाराणा - पुरोहितजी आप इतनी जल्दी जोधपुर से कैसे आ गये? क्या रास्ते से ही लौट आये?

महारानी - भगवान को धन्य है कि आपको चेतना तो आयी। आप होश में तो आ गये, यह बहुत अच्छा हुआ।

महाराणा - बेहोश व्यक्ति को होश में लाने के लिये उसे जबरदस्त धक्के की आवश्यकता होती है।

पुरोहितजी की ओर देखकर महाराणाजी ने प्रणाम निवेदन किया।

पुरोहित जी ने हाथ बढाकर उन्हें चिरंजीवी होने का आशीर्वाद दिया, अन्नदाता! दीर्घायु हों-चिरंजीव रहें।

महारानी - पालागन पुरोहितजी।

कृष्णा आगे बढ़कर राजपुरोहितजी के चरणों को छूती है और आशीर्वाद प्राप्त करती है।

पुरोहित-मेवाड़ के राजवंश का यश बढ़े। इसकी कीर्ति-सुगन्ध चारों दिशाओं में फैले। जनता में आपका गुणगान शतगुण बढ़े।

महारानी-पुरोहितजी! आप जोधपुर से बहुत जल्दी वापस आ गये। क्या इतने समय में ही टीका झेलने की रस्म पूरी हो गई?

पुरोहित - नहीं महारानीजी, टीके की रस्म पूरी नहीं हो सकी, इसका मुझे बहुत दु:ख है ।

महाराणा - आश्चर्य एवं दु:ख से कहते हैं-क्यों पुरोहितजी ऐसी क्या बात हो गई ?

पुरोहित - अन्नदाता मैं टीका वापस ले आया हूँ ।

महाराणा को अचानक ही क्रोध आ गया । उन्होंने आवेश में आकर तेज आवाज में कहा, किस की आज्ञा से आप टीका वापस लाये ? ब्राह्मण होने के कारण राजा की आज्ञा की अवहेलना और अपमान करने के अपराध में उचित दण्ड से बच नही सकते है । आपने हमारे सब सुखद सपनों को मिट्टी में मिला दिया । आपने ऐसा क्यों किया ?

पुरोहित ने हाथ जोड़कर विनम्रता पूर्वक कहा-अन्नदाता । इसमें मेरा कोई भी दोप नहीं । मेरा कोई अपराध नही ।

महाराणा पुन: जोश में आ गये, क्या उन्होंने टीका अस्वीकार किया ? मैं यह अपमान नहीं सहन कर सकता । क्रोध में विह्वल होकर जाने लगते हैं फिर चिल्लाते हुए कहते है-क्या बापारावल का शोणित पानी हो गया ? क्या महाराणा प्रताप का प्रताप क्षीण हो गया ? क्या राणा राजसिंहजी की तलवार को जग लग गया ? क्या....? वे वहां से जाने लगते है ।

राजपुरोहित - अन्नदाता ! कुछ मेरी अर्ज भी तो सुन लीजिये । क्या महाराणा भीमसिंहजी पागल हो गये हैं ? पूरी बात सुनते ही नही है । महाराणाजी के पीछे पीछे महारानी भी जाती है । राजकुमारी कृष्णा यह दृश्य देखकर दु:खी होकर पुरोहितजी से पूछती है—

कृष्णा - एक पुत्री माता पिता के लिए कितनी चिन्ताओं का कारण बन जाती है पुरोहितजी ?

पुरोहित - चिंता किस बात की है राजकुमारीजी । हमारी चन्द्रमा सी बेटी के लिये वर का क्या अभाव है ? इसी समय संग्रामसिंहजी भी-वहां आ जाते हैं, महारानी और संग्रामसिंहजी महाराणाजी को पकड़े हुए पुन: एक आसन पर बैठाते है । उन्हें सान्त्वना देते है ।

संग्रामसिंह - इस समय आप बहुत परेशान हैं, उसका मूल कारण क्या है?
महाराणा - मैं कृष्णा का अपमान सहन नहीं कर सकता। जोधपुर नरेश की यह हिम्मत कैसे हुई कि टीके को बिना झेले हुए ही लौटा दिया?
संग्रामसिंह (गुस्से में आकर)-यह आपका ही नहीं, सपूर्ण सिसोदिया वंश का अपमान है।

पुरोहित-"अन्नदाता! आप मेरी पूरी बात तो सुन लेने की कृपा करावें। महाराणाजी जोधपुर नरेश महाराज भीमसिंहजी ने टीका वापस नहीं किया बल्कि महाराजा भीमसिंहजी घरेलू संघर्ष के कारण अब इस संसार में नहीं रहे। यह सुनते ही राजकुमारी कृष्णा अपनी टूटी वीणा लेकर शीघ्रता से उस कमरे के बाहर होकर अपने कक्ष में चली जाती है। जाते समय उसका टूटा हुआ तार भी झनझना उठता है।

महाराणा - ओह! तो यह बात है। बहुत बुरा हुआ, पुरोहित जी।

महारानी - इस टीके का लौटना अपशकुन है। परमात्मा की क्या लीला है? क्या होनहार है? ईश्वर ही जाने क्या भविष्य है?

संग्रामसिंह - महारानीजी, शकाशील होना महिलाओं का स्वभाव है। कुछ लोग स्वयं कल्पना का भूत बनाकर उसके भय से डरने लगते हैं। हमारी कृष्णा किसी बड़े राज्य की राजरानी बनेगी, इसमें तनिक भी सन्देह नहीं है।

पुरोहित - मारवाड़ के अन्य सरदारों ने मुझे कहा है कि महाराजा भीमसिंहजी के पश्चात् मानसिंहजी जो राजगद्दी पर आसीन हुए हैं, उनको ही यह टीका दिया जाय तो उत्तम रहेगा।

महारानी - नहीं-जहां से एक बार टीका लौट आया है वहां दुबारा कभी नहीं भिजवाना चाहिये।

सग्रामसिंह - मेरी सम्मत्ति मैं अब यह टीका अंबर नरेश महाराज जगतसिंहजी को भेज देना चाहिये। यह सर्वथा उपयुक्त है।

महाराणा - हां, सग्रामसिंहजी की राय बिल्कुल ठीक है। मैं उसे उत्तम समझता हूँ।

पुरोहितजी अब यह टीका महाराज जगतसिंहजी के यहां जयपुर ले जाना ही उपयुक्त होगा।

राजपुरोहित - बड़ो हुकम अन्नदाता । मैं यह टीका लेकर कल प्रातःकाल ही जयपुर के लिये प्रस्थान कर जाऊंगा ।

मध्य रात्रि होने से सब अपने अपने स्थान पर विश्राम करने चले गये ।

## छः

प्रातः काल का समय था, लगभग नौ बजे थे, महाराणाजी ने रात्रि को पूर्ण विश्राम किया, प्रातः महारानी ने स्वयं जाकर उनके नित्य के कार्यक्रमों में सहायता दी, महारानी कल रात महाराणा की चिन्तायुक्त मनः स्थिति, विक्षिप्त-से विचित्र व्यवहार के कारण उनके स्वास्थ्य का ध्यान रखने हेतु स्वयं हर वस्तु की देखभाल और उनके कार्यो में सहायक थी । दोनों ने बैठकर गीता का पाठ किया । पूजा पाठ किया । पूजा पाठ के पश्चात् अपने निजी विचार विमर्श कक्ष में बैठ गये । महारानीजी भी उनके पास बैठी उनके मन-बहलाव की बातें कर रही थी । एक दासी ने अपने प्रवेश करने के संकेतवश गले से कुछ आवाज उत्पन्न की और खम्मा-अन्नदाता अर्ज करके प्रणाम किया । महाराणाजी आराम कर रहे थे । महारानी की ओर किशोरी ने देखा और मधुर स्वर में निवेदन किया कि श्री संग्रामसिंहजी आपसे मिलने पधारे हैं । यदि आज्ञा हो तो उन्हें इस कक्ष में लिवा लाऊं ?

महारानीजी ने महाराणा की ओर देखा और उनके स्वीकारोक्ति सूचक नयन-संकेत के आधार पर किशोरी से कहा, हां, हां किशोरी संग्रामसिंहजी को आदरपूर्वक भीतर लिवा लाओ । किशोरी ने पुनः झुक कर नमस्कार किया और बाहर जाकर सम्माननीय संग्रामसिंहजी को महाराणाजी के कक्ष में बुलाकर साथ आई और उन्हें मसनद के सहारे बैठने का निवेदन किया । संग्रामसिंह भी अभिवादन करके मेवाड़ के महाराणा की जय हो कहकर बैठ गये ।

महारानी ने कुशल क्षेम पूछने के पश्चात् संग्रामसिंह से कहा, रात को आप ठीक समय पधार गये थे अन्यथा उस व्याकुलता की अवस्था

में महाराणा को मेरे लिये संभालना कठिन हो जाता। दो तीन दिनों से हम वास्तव में मानसिक दृष्टि से पर्याप्त परेशान हैं।

संग्रामसिंह-मैं महाराणा साहब और आपके उत्तम स्वास्थ्य के लिये ईश्वर से सदैव प्रार्थना करता हूँ।

महारानी - आज आपके प्रातः काल पधारने का क्या कोई विशेष मन्तव्य है ?

संग्रामसिंह - मैं आपको एक विशेष सूचना देने स्वयं उपस्थित हुआ हूँ। यह निवेदन करते हुए अत्यन्त खेद है कि मैं कल अपनी प्राणों से प्यारी भूमि को सदा के लिये छोड़कर जा रहा हूँ। मेरे हृदय में विचार आया कि मेवाड़ राज्य के संस्थापक वीरवर बाप्पारावल के राजसिंहासन के वर्तमान स्वामी महाराणा भीमसिंह और महारानीजी के अन्तिम दर्शन कर मेवाड़ भूमि से कहीं दूर चला जाऊं। मार्ग में भगवान एकलिंगजी की पूजा व दर्शन करके चला जाऊंगा।

महाराणा - संग्रामसिंहजी ? आपने यह भीष्म प्रतिज्ञा किन किन कारणों से की ?

महारानी - शक्तावतजी ! सैकड़ों विपत्ति आने पर भी कोई क्या अपनी जन्मभूमि को छोड़ देता है ?

संग्रामसिंह - इन बातों को मैं अच्छी तरह समझता हूँ, महारानीजी। यह मोह मुझे किसी पाप के रास्ते पर ले जाता इसलिये मैंने अपने हृदय पर पत्थर रखकर अन्य राज्य में जाने का निश्चय किया है।

महाराणा - आपको अमंगल सूचक विचार नही करना चाहिये।

संग्रामसिंह - हम को अगर भिखारी बनकर भी मेवाड़ भूमि में रहने का अवसर मिल सके तो इस भूमि को नही छोड़ता, जिन चूण्डावतों के हाथ में शासन की शक्ति है, वे हम शक्तावतों को स्वत्वहीन बनाकर हमें नष्ट करना चाहते हैं। उन्होंने हमें इस संसार से उठा देने की ठान रखी है। क्या आप इस तथ्य से अवगत नही है ?

महाराणा - यह मत समझो संग्रामसिंह कि मैं अंधा हूँ। रात दिन मेरे हृदय में ज्वाला जलती है। मस्तिष्क में तूफान और बवण्डर उठते हैं। मैं तन मन से चाहता हूं कि मेवाड़ में न्याय का शासन हो, अनुशासन

हो, चारों ओर प्रेम का शासन होना चाहिये। राज्य में कुछ वातावरण ही ऐसा हो रहा है कि अकेला कोई बड़ा परिवर्तन लाने में असमर्थ हूँ।

महारानी - क्या हम अमीरखां, सिंधिया या होल्कर से सहायता लेकर इन चूण्डावतों का मान-मर्दन नही कर सकते ?

संग्रामसिंह - ऐसा कुविचार एक बार मुझे भी सूझा था महारानीजी, किन्तु उस दिन दौलतसिंहजी से हुई लम्बी बातचीत ने मेरी विचारधारा को मोड़ दिया। सदाशयता से हमने सोचा कि जिन चूण्डावतों ने मेवाड़ की मान रक्षा के लिये अपने प्राणों को तुच्छ समझ कर बलिदान कर दिया, उनमें भी वही रक्त प्रवाहित हो रहा है जो हम शक्तावतों के शरीर में है, तो उनके एक दो कुबुद्धि सरदारों के मूर्खतापूर्ण कुकृत्यों का दण्ड संपूर्ण शाखा को देना भी न्यायसंगत नहीं है। मेवाड़ भूमि की संकट के समय रक्षा करने वाले वीर योद्धाओं को विधर्मियों और मराठों की सहायता से व्यर्थ मौत के घाट उतारना अशोभनीय होगा।

महारानी - न्याय और उत्तम शासन में दया का कोई भी स्थान नहीं होना चाहिये।

संग्रामसिंह - महारानीजी, किन्तु राजनीति न्याय से भिन्न वस्तु है। शक्तावतों को नष्ट करने के लिये चूण्डावतों ने बाहरी शक्तियों का उपयोग किया है। उसके बदले में मेवाड़ की भूमि का भाग और लाखों रुपये दिये हैं, सोना उपजाने वाली भूमि मराठों को दी है। वे जब इससे ही सन्तुष्ट नही हुए तो आपके महलों में रहने वाली महिलाओं के बहुमूल्य आभूषणों को कौडियों के भाव बेच कर उनका कर्ज चुकाया है। और···· और ····क्या मुझे कहते हुए अत्यन्त दुःख है, स्थिति इतनी शोचनीय है कि राजकुमारी कृष्णा के विवाह के लिये पर्याप्त धन भी आपके पास सुरक्षित नही है····।

महाराणा - आपने सत्य कहा संग्रामसिंहजी, परन्तु अन्याय को चुपचाप सहन करना भी कायरता है। भाई भाई से न्याय के लिये संघर्ष करने का संदेश भगवान कृष्ण ने गीता में दिया है।

संग्रामसिंह - आदर्श और वास्तविक क्रिया में बहुत अन्तर है। भारतीय जीवन का यह भी एक संदेश है कि किसी बड़े हित के लिये छोटे हित का बलिदान उचित है। राजवंश की विभिन्न शाखाओं के पारस्परिक संघर्ष

का परिणाम मेवाड़ का सर्वनाश हो, ऐसा मैं नहीं चाहता हूँ। चूण्डावत अजीतसिंह को सत्ता की भूख है, शासन का स्वाद है, प्रशंसा की प्यास है, प्रभुता का लालच है। ईश्वर उसकी सब कामनाएं पूर्ण करे। उसके मार्ग के कांटे शक्तावत यहां से दूर चले जायेंगे। हमारी तो यही इच्छा है कि बाप्पारावल की गद्दी का सम्मान रहना चाहिये।

महाराणा की आंखों से अश्रुधारा वह निकली। महारानी भी द्रवित हो गई। वे अपनी विवशता पर भी रो रहे थे। महाराणा ने साहसपूर्वक कहा, नहीं भाई संग्रामसिंहजी! आप नहीं जाएंगे। अगर आप चले गये तो मैं राजगद्दी छोड़ दूंगा।

संग्रामसिंह - नही महाराणाजी! मुझे मेवाड़ में फिर सुख सुविधाओं के सुनहरे प्रभात की पूर्ण आशा है। निराशाओं का अन्धकार अवश्य दूर होगा। मैं जाते जाते आपकी सेवा में कुछ भेंट करना चाहता हूं। मैंने सुना है कि अजीतसिंहजी कृष्णा के विवाह के लिये सिंधिया को मेवाड़ के कुछ गाव गिरवी रखकर दो लाख रुपये ऋण के रूप में उधार ले रहे है। कृष्णा मेरी भी तो बेटी है। उसके विवाह में यदि मैं भी कुछ खर्च करूं तो क्या कोई आपत्ति है? आपकी सेवा में यह दो लाख रुपयों की हुण्डी प्रस्तुत कर रहा हू। कल सेठ सांवलदास से इसे भुनवा कर नकद राशि प्राप्त कर लेना। महाराणा ने अपने हाथ में जब हुण्डी प्राप्त की, उनकी आँखों से अश्रुधारा चट्टान तोड़ कर झरने की भाँति वह निकली।

महारानी - संग्रामसिंहजी आप मनुष्य के रूप में देवता हैं। इस संकट के समय आपने इतनी बड़ी राशि कहां से प्राप्त की?
संग्रामसिंह - मैं भी मनुष्य हू। अपने राजवंश की, अपने राजकुल की प्रतिष्ठा की रक्षा के लिये घर की मूल्यवान वस्तुओं को मैने स्वयं बेच दिया। मुझे अब कुछ नही चाहिये। मै मेवाड़ की रक्षा चाहता हूं।
महाराणा - आप यह हुण्डी वापस लेने का कष्ट कीजिये। मै आपको हर तरह से निर्धन नही बनाना चाहता।

सग्रामसिंह-मेरे प्रेम का, मेरी ममता का अपमान नही करें महाराणाजी। मेरा सबसे बड़ा धन बाप्पारावल की गद्दी की सुरक्षा और सम्मान है। संसार मे इसका यश गौरव बढ़ता रहे, यही मेरी अन्तिम इच्छा है। वह बना रहना चाहिये। लक्ष्मी (धन) तो हाथों का मैल है। भगवान एक-

लिंगजी की कृपा से मेवाड़ के फिर अच्छे दिन आएंगे। भाभी! मुझे अपने चरणों की रज लेने दो और राणा भाई मुझे आशीर्वाद दो कि मै हर एक भावी विपत्ति को सहन करने की शक्ति प्राप्त कर सकूँ। वह आगे बढ़कर दोनो के चरण छूते है। महाराणा स्वय अश्रु विह्वल होकर संग्रामसिंहजी को गले लगा लेते हैं। महारानी भी आँखों मे अश्रु भरे हुए कहती है, राजपूतों का आत्म-त्याग अभी मरा नही है, इसका आप उज्ज्वल उदाहरण हैं शक्तावतजी। तुम्हारी सद्वृत्तियां ही तुम्हारे भावी जीवन का प्रकाश बनेंगी, इसमें कोई सन्देह नहीं है। आपने मेवाड़ वंश को डूबती हुई प्रतिष्ठा की रक्षा की है।
आपका यश सदा सूर्य चन्द्रमा के समान अमर रहेगा।

संग्रामसिंह - आओ भाई भीमसिंहजी दोनों प्रेमपूर्वक गले मिलते है। भाई हम दो नीर भरी नदियो के समान आज मिल लें। इसी समय वहां पर कृष्णा भी आ जाती है। संग्रामसिंहजी कृष्णा के सिर पर हाथ फेर कर आशीर्वाद देते हैं। फिर सग्रामसिंहजी महलों से वाहर चले जाते है।

# सात

मेवाड़ के महाराणा भीमसिंह की राजकन्या राजस्थान सुन्दरी कृष्णा का विवाह संबंधी टीका लेकर राजपुरोहितजी लगभग एक सप्ताह तक यात्रा करके जयपुर पहुँचे। मार्ग में कई प्रकार की कठिनाइयो, जंगली जानवरों के भयंकर खतरों से बचते हुए अपने सात साथियों सहित जयपुर के महाराजा जगतसिंह के राजमहलों मे पहुंच गये। उन्हे वहां के अधिकारियो द्वारा सम्मान-पूर्वक अतिथि-कक्ष में ठहराने का प्रवंध कर दिया गया। भोजन, शयन आदि की व्यवस्था सराहनीय थी। राज-पुरोहितजी ने अपने आने की सूचना तथा उद्देश्य दीवान (प्रधानमंत्री) जी द्वारा महाराणा जगतसिह के पास निवेदित कर दिया। रात्रि को समुचित विश्राम के पश्चात् प्रातः राजपुरोहितजी ने प्रमुख दरबारी गण तथा राज्य के अधिकारियों की एक सभा में मंगल गान के साथ मंत्रोच्चारण करते हुए महाराजा जगतसिहजी को टीका झिलवाने की रस्म पूरी की।

राज दरबार, महलों व रनिवासों में खुशियाँ मनाई गई। स्थान स्थान पर नाच-गान तथा समारोहों का आयोजन किया गया। एक सप्ताह तक मेवाड के राजपुरोहितजी तथा उनके साथियों का उत्तम प्रकार से आतिथ्य सत्कार किया गया। जयपुर नगर तथा राज्य की मुख्य वस्तुओं का अवलोकन कराया गया। राजपुरोहितजी ने प्रसन्नता पूर्वक सब कार्यो से निवृत्त हो पुन: मेवाड़ की ओर प्रस्थान किया। महाराजा जगतसिंह ने पुरोहितजी व उनके साथियों को बहुमूल्य भेंट आदि प्रस्तुत की, विभिन्न प्रकार की मिठाइयां तथा बहुमूल्य मेवा साथ में बंधवाकर भिजवाया। और उनके साथ ही संदेश भिजवाया कि आने वाली सावन की तीज पर वे सगाई का दस्तूर करने हेतु वस्त्र आभूषण आदि अपने प्रमुख व्यक्तियों एवं अधिकारियों के साथ उदयपुर भिजवाने की व्यवस्था करेंगे। अभी सावन की तीज के दो महीने शेष हैं।

राजपुरोहितजी पुष्कर, अजमेर, भीम, चारभुजाजी, नाथद्वारा होते हुए लगभग एक सप्ताह में उदयपुर पहुच गये। महाराणा भीमसिंह-जी तथा महारानीजी की सेवा में टीका झिलाने की कार्यवाही का विस्तृत विवरण सुनाया। जयपुर के सौन्दर्य और उत्तम व्यवहार, साज-बाज की पूर्ण जानकारी प्रदान की। उदयपुर के राजघराने में सब सन्तुष्ट हो गये। सब का विचार यही था कि कृष्णाकुमारी का सम्बन्ध महाराजा जगतसिंह के साथ उत्तम रहेगा। महाराणा भीमसिंह, महारानीजी और परिवार के सभी लोग सन्तुष्ट हो गये किन्तु राजमहलों मे कुछ ऐसे प्राणी भी थे जो मारवाड़ के महाराजा से कृष्णाकुमारी का सम्बन्ध कराके अपने स्वार्थो की पूर्ति मे अपने पक्ष को प्रबल करने की चेष्टा कर रहे थे। गीली लकड़िया जलती हैं। कभी कभी बुझी बुझी सी प्रतीत होती है। अग्नि के ऊपर राख जम जाती है। ज्वाला का दाहक तत्व क्षीण दृष्टिगोचर होता है। सज्जन और उच्च वंश के आदमियों में सहन शक्ति और उदा-रता अधिक मानी गई है। साधारण वर्ग, नीच कुल, कलुषित संस्कारों के व्यक्ति अपनी हीन गतिविधियों से अधम कार्यो का प्रमाण समय-समय पर देते रहते हैं। यदि हम समाज पर दृष्टि डाले तो अच्छे और बुरे कर्मों के विभिन्न उदाहरण मिल जाएंगे।

महाराणा भीमसिंहजी के भाई जवानसिंहजी जो दासीपुत्र हैं, उनके शयन कक्ष की सजावट देखने योग्य है। एक शानदार पलग बिछा हुआ

है। रेशम के गद्दी तकिये लगे हुए हैं। पलंग के पास हाथीदांत की तिपाई है। जिस पर चांदी की झारी रखी है। केसरिया शराब भरी हुई है। उसके पास एक प्याला रखा है। सहसा जवानसिंह कमरे में प्रवेश करते है। आते ही वे अपनी पगड़ी, अंगरखा आदि कपड़े उतार कर खूंटी पर टांगते हैं और अंगड़ाई लेते हुए पलग पर बैठते है। सम्पूर्ण कमरे में विलासिता का वातावरण है। विभिन्न नारियों के नग्न और अर्ध-नग्न चित्र दीवारो पर टगे हुए है। शयन कक्ष की खिड़की के बाहर की ओर राधा खड़ी हुई है। अपने नयनों से जवानदास को प्रेमपूर्वक निहार रही है।

जवानदास - मनुष्य के भाग्य में क्या लिखा है, यह कोई नहीं जानता। जब कोई घटना घटित हो जाती है तब कहते है उसके भाग्य मे ऐसा ही लिखा था। मनुष्य जैसे जैसे ऊंचा उठने की इच्छा करता है, वह दिन दिन नीचे गिरता जाता है। आकांक्षा की अग्नि से प्राण जल रहे है। हम अपनी इच्छाओं की पूर्ति का जितना प्रयास करते है, नई इच्छाएं फिर उठती है और प्यास और भी बढ़ जाती है।

राधा धीमी गति से कमरे में प्रवेश करती है। जवानदास का ध्यान उसकी ओर जाता है। वह राधा की प्यासे नयनों से देखता है, उसे अपने पास आकर बैठने का संकेत करता है, राधा का हाथ पकड़ कर अपने वक्ष की ओर खीचने का प्रयास करता है। पर राधा विद्युत् गति से अपना हाथ छुड़ा लेती है। कुछ दूर पड़ी हुई एक आराम कुर्सी पर बैठ जाती है।

जवानदासजी को राधा ने कहा, मैं अभी महारानीजी की सेवा में नियुक्त हूं। कुछ समय प्राप्त हुआ तो मैं आपके दर्शन करने चली आई। मैं एक सेविका हूं। अपने भाग्य की महारानी नहीं हूं जो स्वतन्त्र होकर आपके साथ आमोद प्रमोद में अपना समय व्यतीत कर सकूं। दास तो सदैव दास ही रहता है। मुझे शीघ्र ही रावला पहुंचना है।

जवानदास - मुझे भाग्य की यही विडम्बना बुरी लगती है। मेरे अन्तर में प्रबल ज्वाला धधकने लगती है। प्राणों में विद्रोह की आंधी चलने लगती है। एक औरत तो राजमहलों का सर्व प्रकार का सुखभोग करने वाली है, दूसरी तुच्छ व नीच कर्म करने वाली दासी बनती है। मैं सोचता

हूँ, उच्च कुल में ही जन्म लेने वाले व्यक्ति को सम्मान तथा सब प्रकार की सुख सुविधा का उपभोग करने का अधिकारी क्यों माना जाता है ?

राधा - यही तो विधाता का विधान है। जो हमारे भाग्य में लिखा है, वही तो मिलता है। हमने पूर्व जन्म में जो कर्म किये हैं, उन्हीं का फल इस जन्म में मिलेगा। विधि के लेख को बदलना असंभव है।

जवानदास - राधा, असंभव शब्द केवल मूर्खों के शब्दकोष में ही पाया जाता है। मनुष्य यदि प्रयत्न करे तो वह स्वयं के भाग्य का निर्माता बन सकता है। केवल कायर और निकम्मे व्यक्ति ही भाग्य के भरोसे रह-कर निष्क्रिय हो जाते हैं। वे सब व्यक्ति जिनको समाज घृणा से देखता है, यदि अपनी शक्तियों को सगठित करलें तो इन उच्च वंशाभिमानी तथा-कथित महाप्रभुओं का अभिमान ध्वस्त हो सकता है। शोषण का भीषण चक्र धर्म के नाम पर युग-युग से चल रहा है जिसमें हमारी इच्छाएं गेहू में घुन की तरह रात दिन पिस रही है। धर्म का नशा मानव के दु.खों का कारण भी बन सकता है।

राधा - मनुष्य अधिकतर सुख के सपने देखता है। जो शोषित व्यक्ति रात दिन अपनी दो रोटी कमाने के चक्कर में बाहर नहीं निकल सकते, वे कब कैसे सामूहिक रूप से सगठित हो सकते हैं। समाज का विधान ही ऐसा है कि एक शासक वर्ग है, दूसरा शासित वर्ग। एक वर्ग शोषणकर्ता है, दूसरा अपना शोषण करवाने पर लाचार है। हमें तो उच्च वर्ग की सेवा करनी ही पड़ती है।

जवानदास - मैं अपनी भाग्य रेखाओं का दास नहीं बनूंगा। मैं अपनी शक्ति से विधि के विधान को बदल दूंगा। मैं कुछ ही समय में तुम्हे मेवाड़ की राजरानी बनाऊंगा राधा। हमारे भाग्य में क्या लिखा है इसको कौन जानता है ? इस संसार में वही जीवित रहता है जो उत्साह से संघर्ष करता है। संघर्ष ही जीवन है। यही हमारा आदर्श होना चाहिये। कायर व्यक्ति ही भाग्य के हाथों की कटपुतली होता है। परि-वर्तन जीवन का प्राण रस है। राधा"""मैं" मैं।

राधा शराब का एक प्याला डालकर जवानदासजी के हाथ में देती है। वह पीने लगता है।

जवानदास - राधा तुम्हारे हाथ से जब मैं मदिरापान करता हूं, सच बताऊं इसका नशा दुगना हो जाता है। तुम्हारे मादक यौवन की मादकता भी इसमें घुल जाती है। जब मदिरा अपने पूर्ण यौवन का प्रभाव मेरे मस्तिष्क एवं शरीर के विभिन्न अंगों पर करती है तो मैं अपने आपको ही मेवाड़ का असली महाराणा समझने लगता हूं। तुम मेरे साथ राजसिंहासन पर बैठी हुई महारानी-सी शोभायमान हो जाती हो। राजदरबारी मुजरा करते हैं। चारण अपने वचनों से हमारा गुणगान करते हैं। वास्तव में यह आनन्द हमारे लिये स्वर्गीय आनन्द से भी बढ़कर है। राधा आओ, आगे आओ। तुम मेरे हृदय की स्वामिनी हो-आओ हमारा तुम्हारा प्यार अमर होगा।

राधा - शराब के नशे में वास्तविकता को पहिचानना कठिन है। तुम पुरुष सपनों की दुनिया में जीवित रह सकते हो। महिलाओं को घर गृहस्थी चलानी पड़ती है। आर्थिक कठिनाइयों का जितना ज्ञान हमको है, आपको कुछ नहीं। हमारे समाज में व्याप्त विषमता को क्या कोई समाप्त कर सकता है ? मुझे तो कोई आशा नहीं है। राजा और रईसों, सेठों और साहूकारों के उच्च अधिकारियों के कुत्तों को दूध, मक्खन और हलुआ मिलता है। सैकड़ों रुपये उनके ऐशोआराम पर खर्च होते है। दूसरी ओर समाज में अधिकांश गरीबों के बच्चों को भरपेट भोजन भी नही मिलता। दूध, दही तो क्या, उन्हें आवश्यक भोजन व कपड़ों तक का अभाव है। ईश्वर के घर से सब समान आते हैं, पर यह हमारी शासन-व्यवस्था और सरकार के अधिकारियों और पूंजीपतियों की मिली भगत और मुनाफाखोरी का परिणाम है कि आर्थिक विषमता दिनवदिन बढती जा रही है। पर अब समझो, बस क्रान्ति होने वाली है। ये बातें अधिक समय चलना कठिन है।

शराब का नशा अधिक समय नही टिकता। ऐसी स्थिति में यदि आपके प्रयत्न सफल भी हो गये तो आप अधिक समय तक शासक नहीं रह सकते है।

जवानदास - क्यों ? क्या मैं योग्य शासक नही बन सकता ?

राधा - मेवाड़ के उच्च वश के अभिमानी राजपूतों को आप जैसे दरोगन के पुत्र को महाराणा और मुझ जैसी कहारिन की पुत्री को महारानी के

रूप में कौन स्वीकार करेगा ? बड़े बड़े भयंकर कुचक्रों और जालसाजियों की सहायता से हम यदि सत्ता-शासन प्राप्त भी कर लें तो वह इतनी जहरीली और विनाशकारी होगी कि हम अधिक समय उसका उपभोग नही कर सकेगे । मुझे तो इसमे भी सन्देह है कि हम अधिक समय जीवित भी रह सकेंगे ।

जवानदास - राधा तुम्हारी कुछ बातें सत्य हैं लेकिन तुम्हें यह तो मालूम है कि मेरे शरीर में भी वही रक्त है जो मेवाड़ के महाराणा के शरीर में है । मै उसी राजवश का एक अंग हूं ।

राधा - किन्तु, आपकी माता"" ।

जवानदास - राजपूतनी नही थी ।

राधा - और सामाजिक नियमों के अनुसार महाराणा की विवाहिता भी नहीं थी ।

जवानदास - राधा अब समय बदल गया है । अब जाति पांति, उच्चवंश और असलो का जमाना चला गया । कुछ समय पश्चात् जाति पांति सब मिट जाएंगे । मानव मानव सब समान हैं । इसी आधार पर, गुणों के आधार पर शासक बना करेंगे । ऊंच नीच की दीवारें टूट जाएंगी । मैं तो प्रेम और विवाह को भिन्न नहीं समझता । केवल अग्नि के चारों ओर सात फेरे करने से ही विवाह नहीं हो जाता । दो हृदयों का सच्चा मिलन होना ही विवाह है ।

राधा - किन्तु ये शासक, ये पूंजीपति, ये राजा आदि तो हम गरीबों को अपनी वासना पूर्ति का साधन ही मानते है । इस प्रकार के मिलन से जो वासना-सन्तान उत्पन्न होती, है समाज उसे घृणा की दृष्टि से देखता है । वह अवैध मानी जाती है ।

जवानदास-राधा, तुम कटु सत्य कह रही हो । मुझे भी पग पग पर अपमानित होना पड़ता है । ये सरदार लोग मुझे व्यंग्यभरी दृष्टि से देखते हैं । महाराणा भी मेरी सहायतार्थ जो कुछ करते हैं, उसमें उनका कृपाभाव, एहसान करने की अभिलाषा छिपी रहती है । ये दान के टुकड़े ये दया के भाव, मुझे जहर बुझे तीर के समान लगते है । ये विष घूंट हमें पग पग पर पीने पड़ते हैं । यह सत्य है । वास्तविकता है ।

राधा - समाज व्यवस्था ही ऐसी है कि हमें यह जहर चुपचाप पी लेना होगा। इसको नकारना कोई हँसी खेल नहीं है। परिवर्तन करने वाले विरले ही होते हैं। क्रान्ति करने के लिए फौलाद के हाथ और चट्टान सी हिम्मत चाहिये।

जवानदास - अब भविष्य में अन्याय सहना असंभव है राधा। मैं ऐसी आग लगाऊंगा जिसमें मेवाड़ की सम्पूर्ण गन्दगी नष्ट हो जाएगी। चूंडावतों को शक्तावतों के विरुद्ध भिड़ाकर मैंने शक्तावतों की शक्ति को नष्ट कर दिया है। अब चूण्डावतों को नष्ट करने के लिये मैं ऐसा षड्यन्त्र करूंगा, ऐसे घृणित और क्रूर कार्यो का सहारा लूंगा, जिससे मेवाड़ की साधारण प्रजा वर्तमान शासकों के विरुद्ध हो जाय। उस समय बस राधा, हम घी के दीपक जलाएंगे। फिर मेवाड़ पर अपना ही राज्य होगा, यह निश्चित है।

राधा - प्रियवर! वास्तव में आप क्रान्तिदूत है। आपकी अभिलाषा उच्च कोटि की है। क्या आपको अनुमान है कि इस महान परिवर्तन में भयंकर रक्तपात होगा। खून की नदियां बह जाएगी। हो सकता है इससे बड़ों को कम और छोटों को अधिक हानि उठानी पड़े। परिवर्तन का मार्ग खूनी क्रान्ति का मार्ग है। हमारा समाज सशक्त संघर्ष के बाद ही शिक्षा लेता है। क्रान्ति में विजयी को मालाएं पहिनाई जाती हैं, स्वागत होता है फिर मान्यता भी मिल जाती हैं। शक्ति की विजय निश्चित होती है।

जवानदास - मेरे हृदय में भड़कने वाले प्रतिहिंसा के अंगारे तभी शांत होंगे, राधा! लोग मुझे मेवाड़ का पांचवा पूत कहते हैं ? मुझे दूसरी श्रेणी के सरदारों से भी नीचा स्थान देते हैं। यदि मेरी मां राजपूतनी नही थी तो इसमें मेरा क्या अपराध है ? निरन्तर असम्मान, प्रबल घृणा और तीखे व्यंग्य-बाणों से मेरा हृदय छलनी हो गया है, राधा! और इसीलिये मैं मेवाड़ में सर्वनाश का एक भयंकर ताण्डव करने की विस्तृत योजना बना रहा हूं।

राधा - भगवान की इस दुनिया में दरोगन होना कोई अपराध नही है। मनुष्य जन्म से नहीं, अपने कर्म से महान गिना जाना चाहिये। अगर कोई ब्राह्मण के घर में जन्म लेकर भी शराब पीए, वेश्यावृत्ति करे तो

क्या वह नीच नही है ? क्षत्रीय कुल में जन्म लेकर किसी अछूत के साथ यौन सम्बन्ध रखे, क्या वह अपराधी नहीं है ?

जवानसिंह - राधा बताओ, मेरे जन्मग्रहण करने में मेरी मां का क्या अपराध था ? महाराणा अपने उच्च कुल की मर्यादा को छोड़कर एक नीच कही जाने वाली नारी के रूप के यौवन के भिखारी क्यो बने ? उन्हें क्या उस समय लज्जा का अनुभव नही हुआ ?

राधा - उच्च कुल के लोगों तथा पूंजीपतियों के पास धन और अधिकार दो सफल शस्त्र है। धन, प्रभुता और अधिकार के बल पर ये हमें अपना गुलाम बनाते है और हमारी निर्धनता, हमारी वेबसी का लाभ उठाकर हमें अपनी वासना का शिकार बनाते हैं। क्या यह असत्य है प्रियवर ?

जवानदास - नीच कुल की उस रानी की इस वेबसी को लोग पाप कहते हैं। इस विवशता की सन्तान को घृणा और व्यंग्य-वर्षा सहनी पड़ती है। लो राधा, इस प्याले की शराब समाप्त हो गई, तुम एक प्याला और बनाकर शीघ्र देने का कष्ट करो।

राधा फिर एक प्याला बनाकर देती है।

जवानदास - शराब की चुस्की लेते हुए फिर कहता है, प्रतिहिंसा हमें उन मार्गों पर ले जाती है जो मनुष्यता के विरुद्ध हो सकते हैं। हमारे पास वे साधन नही है जिनसे हम सभ्य समाज में बराबर का सम्मानपूर्ण स्थान प्राप्त कर सकें।

राधा - जब सभ्य, धनी समाज के लोग हमे मनुष्य नही समझते तो हमसे सद्कार्यों की आशा क्यों करते है ?

जवानदास - क्योंकि इसमें ही उनका स्वार्थ निहित होता है। वे इसी में अपनी भलाई समझते है कि हम अपमानित प्रताड़ित होकर समाज के अत्याचारों को सहन करते रहे। ये तलवारें, ये कटारियां, ये पैनी लेखनियों वाले हमें दास बनाये रखने मे ही अपनी सफलता समझते है। नहीं राधा इस जन्मगत जातीय अभिमान को मिट्टी में मिला देना चाहिये। इसके लिये हमें अत्यन्त शक्तिशाली साधन अपनाने होंगे जैसे हत्या, षड्यन्त्र विभेद, झूठी अफवाहें आदि। लोहे को लोहे से काटना होगा, तभी इनका

शक्तिशाली संगठन नष्ट हो सकता है। हमें भी संगठित होकर इनसे टकराना होगा। प्याला खाली होते ही वह मेज पर रख देता है और आवेश में इधर उधर घूमने लगता है।

राधा - रात के अंधकार में कार्य करने वाले को बहुत सावधान रहने की आवश्यकता है। यदि आपकी योजनाओं का तनिक पता लग गया तो आपके सुख सपनों का भावी महल समूल नष्ट हो जायगा। हां, एक खास बात जो कहने आई थी-अभी मैं कह नही सकी।

जवानसिंह - हां! हां! जल्दी कहो राधा-क्या बात है?

राधा - शक्तावत सरदार संग्रामसिंहजी की राय से राजकुमारी कृष्णा का टीका अम्बर नरेश जगतसिंह को भेजा गया था। राजपुरोहितजी टीका झिला कर वापस आ गये है और शक्तावत सरदार अपने कुछ साथी सरदारों के साथ मेवाड़ भूमि छोड़कर चले गये हैं।

जवानसिंह - अच्छा, क्या ये दोनों बातें सच है? यदि यह बिलकुल सच है तो मुझे अपनी योजना में कुचक्र के षड्यंत्र का बीज इसी घटना से मिल गया है। अब मैं वह कार्य करके बताऊंगा जिसके द्वारा सब लोग मेरा चमत्कार देखकर आश्चर्य चकित हो जाएंगे।

वाह! राधा!! मुझे वह कुंजी (चाबी) दे दी तुमने जिससे मै इन उच्च वंशाभिमानियों, अन्यायियों को यमराज के पास पहुंचा दूंगा और स्वयं तुझे साथ लेकर मेवाड़ के सिंहासन पर महाराणा बन कर इतिहास में अपना नाम अमर कर जाऊंगा। धन्य है मेरी प्यारी राधा, धन्य है।

राधा स्वयं बढ़कर जवानसिंह के गले लगकर आलिंगनपाश में बंध जाती है। दोनों अपने स्वप्नों की दुनिया में कुछ समय के लिये तल्लीन हो जाते है।

कुछ समय के बाद राधा अपने कपड़ों को सुव्यवस्थित करके दर्पण में अपनी रूप-सज्जा को पुनः ठीक करके भावी सपनों का ससार लिये जवानसिंह के महल से वापस अपने निवास-स्थान की ओर चली जाती है। जवानसिंह भी कुछ भावी योजना पर विचार करते हैं। गीत की धुन में मस्ती से कुछ गाते है। फिर आधी रात हो जाने से अपने बिस्तर पर विश्राम करने हेतु चले जाते हैं।

# आठ

उदयपुर के राजमहल के पीछे विशाल सुन्दर झील पिछोला है, संध्या का समय है। महलों की सीढ़ियों से नीचे उतरते ही जल तट पर विभिन्न रंगों की कई नावें खड़ी हैं। कुछ नावें साधारण जनता के लिये सुरक्षित हैं जो महलों से कुछ दूर पीपल और वट वृक्ष के नीचे बने घाटों से सैलानियों को घुमाने ले जाती हैं। जलमहल (जगनिवास) तथा जगमन्दिर झील के मध्य में दो टापुओं पर बने दो महल हैं। घाट से जो महल निकट है वह जगनिवास कहलाता है। जगमन्दिर लगभग एक मील दूर है जिसमें सुन्दर बगीचा और एक मस्जिद है। वह महल भी दर्शनीय है।

एक धीमर लड़का तट की सीढियों पर बैठा हुआ मधुर स्वर में गा रहा है। राजकुमारी कृष्णा भी अपनी सहेलियों के साथ नौका विहार हेतु आई है। आज शरद पूर्णिमा है। विस्तृत जल राशि पर बिखरे पुष्प, बतखें, जल-मुर्गियां अपनी सुन्दरता से झील की शोभा बढ़ा रहे हैं। धीमर लड़का गा रहा है-वह कहता है-मेरी छोटी सी नाव है। छोटी-छोटी पतवारें हैं। यह बजरा मेवाड़ की महारानी का है, जिसमें रेशम का पाल बना हुआ है। इस की डोरियाँ भी रेशम की बनी हैं। इसको चलाने वाले धीमर बड़े चतुर हैं, जो अपनी कार्य-कुशलता में दक्ष हैं। छोटी नौका (बजरा) बड़ी मस्तानी चाल से चलती है। जब राजकन्या, सहेलियां, महारानीजी इसमें बैठते हैं तो ऐसा विदित होता है कि स्वर्ग के जलाशय में कुछ अप्सरा नौका-विहार कर रही है। कभी कभी बजरा छोटा होने के कारण दौड़ में पीछे रह जाता है। सुरक्षा की दृष्टि से कुछ धीरे चलाना पड़ता है, तब बड़ी नाव महलों के किनारे शीघ्र पहुंच जाती है। मेरी छोटी सी नैया और छोटी सी पतवार अपनी शोभा में अद्वितीय है। इस बजरे में बैठने वाली महारानीजी रत्नों से जड़े हुए मूल्यवान आभूषण पहिनती हैं वह अपनी शारीरिक शोभा को विभिन्न

प्रकार के सौन्दर्य प्रसाधनों से सुसज्जित करती है। फिर भी राजा साहब को उनसे प्यार करने का समय नही मिलता है। मैं एक गरीब नौजवान हूँ। राजा महाराजाओं के यहां प्राप्त जेवर, मूल्यवान हीरे जवाहरात हमें कहां प्राप्त है। किन्तु मैं अपनी नवयुवती सुन्दर सुशील पत्नी को फूलों की रंगीन मालाएं पहनाता हूँ। वह इन्ही से सन्तुष्ट होकर मेरे प्रति पूर्णतया समर्पण करती है। हमारी जोड़ी बड़ी, प्रसन्न, स्वस्थ, आनन्दवर्द्धक है। जब मेरी मेहरी प्रसन्नचित्त हो हँसने लगती है तो ऐसा मालूम पड़ता है कि सारा संसार प्रसन्नता से झूम उठता है। चारों ओर आनन्द का राज्य बिखर रहा है। प्रसन्नता के शलभ, चमकते हुए सितारे शीतल मन्द पवन द्वारा मेरा परिवार स्वर्ग के आनन्द का लाभ प्राप्त करता है। मेरा छोटा-सा संसार स्वर्गिक शोभा सौन्दर्य और सुख साधनों से होड़ लगाता है। मेरी छोटी सी नौका और पतवार मे जादुई शक्ति भरी हुई है। वह अपनी संगीत-लहरी की तन्मयता में जब बिलकुल तल्लीन हो गया था-उस समय बहुत देर तक संगीत सुनने के पश्चात् राजकुमारी कृष्णा अपनी सहेलियों के साथ घूमने के लिये जल तट पर आई, उस गायक धीमर नवयुवक के संगीत की बड़ी प्रशसा की, साथ ही राजकुमारी कृष्णा ने पूछा-यह गीत गाना तुमने किससे सीखा है ?

धीमर नवयुवक ने कहा-मै अपने आप ही गाना सीख गया, जिस प्रकार हमारे जातीय कार्य के आधार पर मछली पकड़ना अपने आप आ जाता है, उसी प्रकार दूसरे धीमर युवकों को गाते देखकर मैने स्वय ही सीख लिया है।

कृष्णा - अच्छा भाई ! एक बार और एक मधुर गीत सुनाओ। तुम्हारा स्वर बहुत मधुर है।

धीमर युवक - मैं आपको एक गीत क्यों सुनाऊं जी ? मुझे घर जाने में देर हो जाएगी । धीमर नवयुवक ने राजकुमारी को नहीं पहचाना। उसको युवक ने एक साधारण लड़की समझा।

कृष्णा - तुम्हारा घर उस पार कहां है ?

नवयुवक - घर नही, पहले मुझे महाराणा साहब के राजमहलों मे यह मछलियों का टोकरा लेकर जाना है। कल हमारी मेवाड़ की राजकन्या जी की जन्मगांठ है। राज्य के तथा अन्य राज्यों के राजदूतों, राज्य

अधिकारियों को भोज दिया जाएगा। विशेष इच्छुक व्यक्तियों के लिये मछलियों को पकाकर परोसा जाएगा।

रमा - तब तो भाई चांदी ही चांदी है। इन मछलियों के बहुत से रुपये मिलेंगे तुम्हें।

नवयुवक - रुपये कैसे ? दीवानजी हमारे अन्नदाता हैं।

रमा - दीवानजी कौन ? नवयुवक ने कहा-क्या आपको यह भी मालूम नहीं कि मेवाड़ का राज्य एकलिंगजी का ही राज्य है। एकलिंगजी (शिवलिंग) ही राज्य के मालिक हैं। राजगद्दी पर बैठने वाले महाराणाजी अपने आपको शिवजी का दीवान (सेवक) मानते हैं। उनसे मैं इन मछलियों के लिये रुपये नहीं लूंगा। हम धीमर लोग गरीब हैं तो क्या हुआ ? हमारी मेवाड की राजकुमारी की सोलहवीं वर्षगांठ है। इस खुशी के अवसर पर क्या हमें कुछ भेंट करने का कोई अधिकार नहीं है ?

राजकुमारी कृष्णा - अपनी नाव में हमे कुछ देर सैर करा लाओ न। देखो चन्द्रमा अपने पूर्ण यौवन पर चमक रहा है, शरद चन्द्रिका की शोभा कितनी दर्शनीय और अनुभव करने को अनुपम निधि है, रूपराशि हैं, हृदय को आनन्दित करने वाली है।

नवयुवक - नही बाबा ! नही ! ऐसा मैं नही कर सकता। मेरी नाव छोटी सी है। आप 6-7 सुन्दर सवारियां हैं। उस झील मे बड़े बड़े मगर हैं, तनिक असावधानी अथवा अधिक बोझ के कारण मान लो मेरा बजरा डूब जाये तो बड़ा अनर्थ हो जाएगा। सेठानीजी, आप तथा आपकी सहेलियां यदि इस सागर में डूब गई तो मुझे जेल में जाना पड़ेगा। मुझे तो डर लगता है।

रमा - अरे अनाड़ी ? सेठानीजी किसे कहता है ? यहां हम में से कौन सेठानी दिखती है ?

नवयुवक – ये बहुमूल्य गहने, झिलमिलाते हुए कीमती कपड़े, चमकते हुए सुन्दर रत्न-जटित आभूषण, ये चमकती हुई यौवन में मादक आंखें जिसकी हों, वह सेठानी नही तो मुझे क्या पता आप कौन हैं ?

रमा - हम सब राजपूतनी है।

नवयुवक - अच्छा तो आप राजपूतनी हैं। ठकुरानीजी हैं। मुझे तो आप से डर लगता है। कही किसी ठाकुर साहब ने आपसे मुझे बातें करते देख लिया तो मेरा सिर धड़ से अलग कर देंगे।

रा. कृष्णा - हँसते हुए कहने लगी, डरो मत युवक। मेरा कोई ठाकुर नही है।

रमा - अरे बुद्धू, तुझे यह भी मालूम नहीं है कि यह अपनी राजकन्या कृष्णा कुमारी है।

नवयुवक - इतनी बड़ी हो गई, फिर भी अभी यह कुमारी कन्या ही है।
कृष्णा - तू बड़ा चालाक है रे। ऐसा मालूम होता है कि तू कभी बड़े व सभ्य आदमियों के बीच में नही रहा है।

नवयुवक - नही राजकुमारीजी, हम लोगों में कोई भी शिक्षित नही है। हम तो अनपढ़ है, अछूत है, गवार हैं। हम में कोई भी भला आदमी आपको दिखाई नही देगा। क्योकि भला आदमी होने का ठेका तो केवल बनिये, महाजन, ब्राह्मण और ठाकुरों ने ही ले रखा है। भले आदमी हमें कमीना और नीच कह कर पुकारते हैं इसलिये जब भले आदमियो के बीच में रहेंगे ही नही तो हममें सभ्यता आ कैसे सकती है?

कृष्णा - तुम्हारा नाम क्या है?

युवक - मुझे कालिया कहते है।

रमा - इनमें अच्छे नाम रखने की भी कमी है। कैसा बुरा नाम रखा है तुम्हारा?

युवक - मेरा नाम भी बुरा है तो काम भी बुरा है।

कृष्णा - कालिया! काम कोई भी बुरा नहीं होता है। न नाम ही बुरा होता है। कोई भी व्यक्ति चाहे कुछ भी काम करे, पर उस काम को निष्ठापूर्वक लगन से अच्छी तरह सम्पन्न करे, इसी में व्यक्ति की प्रशसा है। नाम भी चाहे कैसा ही हो, अच्छे कार्यो की दुनिया सराहना करेगी। यदि कोई ब्राह्मण होकर कसाई का काम करे तो उसे कौन अच्छा कहेगा? यदि कोई उत्तम नाम वाला नीच काम करे तो लोग उसको बुरा ही कहेंगे। हमारे समाज में ऊंच-नीच, छूत-अछूत, ये सक्रामक रोग है जो समाज और राज्य को कमजोर बनाते हैं। हमारी सामाजिक तथा राष्ट्रीय एकता को भी कमजोर बनाते हैं।

युवक - इधर इस टोकरी की तरफ जरा देखिये। इतने जीवों की हत्या प्रतिदिन करता हूं। बड़े बड़ों के पेट की भूख इन मछलियो से शान्त

होती है, तब मुझे तथा मेरे परिवार को दो समय खाने को सूखी रोटियाँ मिलती है।

रा. कृष्णा - और हम क्षत्रिय लोग हजारों मनुष्यों के प्राणों का बलिदान करते है। हजारों स्त्रियों को विधवा बनाते हैं। युद्ध में हजारों बच्चों को अनाथ बनाते है, तब हमारे राज्य की विजय होती है। हजारों लाशों के अम्बार पर हम खुशियां मनाते है। अपने राज्य की सीमा को सुरक्षित या विस्तार करने हेतु हत्याओं द्वारा राज्य तथा राजवंश की नीव को सुदृढ़ करते है।

नवयुवक - लेकिन राजपूत लोग देश की रक्षा के लिये जनता की उन्नति के लिये अपने प्राणों की बलि देते है।

कृष्णा - नही भाई कालिया! वह जमाना अब चला गया। अब तो लोग कुछ टकों के लालच में अपना ईमान बेच देते है। थोड़ी सी भूमि, थोड़े से धन के बदले में कुछ लोग अपने देश के साथ गद्दारी करते है। हमारे राष्ट्र के गोपनीय समाचार, भूमि के मानचित्र, बहुमूल्य अन्यत्र अप्राप्य सांस्कृतिक धरोहर की वस्तुओं को आततायियों, दुश्मनों तथा विदेशी व्यापारियों को बेच देते है। अब देश भक्ति की भावना लोप होती जा रही है। स्वार्थी मनुष्य अन्य लोगों की आवश्यकता, अच्छाइयों का खिलौना बनाकर समाज को, राज्य को हानि पहुंचाने में तनिक भी लज्जा का अनुभव नही करते है। आजकल मानवता की भावना, राष्ट्र की आराधना, निष्ठा पाप हो गई है। तुम्हारे जैसे लोगों में फिर भी कुछ अच्छे गुण शेष है। किन्तु बड़े बड़े कहलाने वाले कुछ लोग तो बड़े अशोभनीय, मक्कार और देशद्रोही है, समाजद्रोही हैं, देश के लिये अभिशाप हैं। इन दुष्टों की अपेक्षा तो तुम्हारा काम बहुत अच्छा है।

कालिया - सो कैसे राजकुमारीजी?

राजकुमारी - भाई तुम अपना ईमान तो नही बेचते हो। तुम्हारी गतिविधियों का समाज और राज्य पर बुरा और विपरीत प्रभाव तो नही पड़ता है। तुम जीव-हत्या इसलिये करते हो कि तुम्हारे पास इस काम के अतिरिक्त दूसरा कोई भी साधन नही है। दूसरा रोजगार मिल जाय तो इसे छोड़ सकते हो।

रमा - जब तक मछलिया खाने वाले है तब तक मछलियां बेचने वाले भी अवश्य रहेंगे। हम बड़े कहलाने वाले लोग ही पैसे देकर जीवों की

हत्या करवाते हैं, मछलियां तो क्या, आवश्यकता होने पर मनुष्यों को भी हथियारों से, षड्यन्त्रों द्वारा मौत के घाट उतार देते हैं।

कृष्णा - ठीक है न यह बात कालिया ?

कालिया - आप भी क्या मेरी बुद्धि की परीक्षा ले रही हैं ? मुझे वाद-विवाद के कांटों भरी गलियों में क्यों घसीट रही हैं ? मेरी क्या मजाल जो बड़े आदमियों की तौहीन करने वाली बातें कहूं। मैं तो एक साधारण तुच्छ धीवर युवक हूँ।

कृष्णा - सत्य को सत्य कहने में क्या डर है ?

कालिया - राजकुमारीजी। आप भी कमाल की बात कहती हैं। बिलकुल सच बोलने वाले के पास सवा सेर का कलेजा चाहिये। आप लोग अमीर है, राज्य परिवार के है, मालदार हैं। आप चाहे जो कर सकते हैं। समाज में आपको कोई भी बुरा कहने की हिम्मत नही कर सकता है। परन्तु हम गरीब हैं, साधनहीन है, अशिक्षित है इसलिये सच्ची बातें हमारे हृदय के अंधकार में घुट घुट कर रह जाती हैं। हम समाज के कर्णधारों से इतना डरते हैं कि आपस में भी ऐसी बातें कभी करने का साहस नही करते हैं।

रमा - क्यों ? इतना डरने का क्या कारण है ?

कालिया - हमें तो बड़ा डर लगता है क्योंकि सत्य बात कहने वाला अपराधी, विद्रोही और अशान्ति फैलाने वाला कहलाता है। उसे राज के द्वारा सख्त सजा मिलती है। यह बातें हर एक युग में होती आयी हैं।

कृष्णा - मुझे बड़ा आश्चर्य होता है कि तुम अनपढ़ होकर भी इतनी बातें कैसे सोच सकते हो ?

धीवर युवक - आप जरा अपने कीमती कपड़े और जेवर देखिये। और मेरे कपड़े भी देखिये। धीवर कन्याओं के वस्त्र भी देखे होंगे। कितना अन्तर है ? हम गंवार हैं, हम गरीब हैं, हम अनपढ़ हैं इसलिये असभ्य कहलाते हैं। हमारी आंखें तो खुली हैं। हम संसार की सभी वस्तुओं को देखते हैं। दु:ख सुख का अनुभव करते हैं। आखिर हम भी इन्सान हैं। जो कुछ हम देखते हैं उन बातों का हमारे दिमाग पर पूरा असर होता है। एक तरफ ऊंचे ऊंचे सम्पन्न राजमहल, दूसरी ओर गरीबों की

अभावग्रस्त झोंपड़ियां । एक तरफ रूप रस आनन्द की वर्षा होती है, दूसरी ओर मानव जीवन एक रेगिस्तान के समान है । एक तरफ अच्छे खाने की चीजों का उपभोग करते है, दूसरी ओर गरीबों के बच्चे भूख से तड़पते हैं । हमारी यह समाज व्यवस्था कितनी अन्याय पूर्ण है ? गरीबों के दिलों में तूफान की आग बनकर उन्हें विद्रोह करने को मजबूर करती है किन्तु असहाय अवस्था में वे चुप रह जाते हैं ।

रमा - नहीं, तुम लोग ये बातें खुद नहीं सोच सकते । तुमको अवश्य कोई बहकाता है और अमीर लोगो व राजघराने के विरुद्ध तुम्हें अवश्य कोई भड़काता है । तुम उन्हीं की विद्रोही भाषा में बोल रहे हो ।

कालिया - हां हां ! आप सच कहती हैं । हम असहाय गरीब लोगों के पेट की भयंकर आग हमें बहकाती है । हमारी स्त्रियों के भूखे पेट और फटे हुए कपड़े हमें बहकाते है । हमारी तरह रात दिन पसीना बहाकर रोजी रोटी कमानी पड़े तब आपको सच्चाई का पता लग जायगा । आज देखने में आता है कि घोर परिश्रम करके ईमानदारी से जीने वाला व्यक्ति अपने बच्चों का, परिवार का सम्मानपूर्वक पेट भी भर नही सकता । दूसरी ओर समाज का एक बड़ा वर्ग अपने छल, कपट, झूठ और चतुराई के द्वारा अटूट धन प्राप्त करता है और भोग विलास का जीवन बिताता है । गरीब आदमी पूरे परिश्रम के पश्चात् भी सदा अभावग्रस्त रहता है । समाज की जोंकें जिन्हें कर्ज देने वाले कहते हैं, कहने को धर्मात्मा है जबकि वे पानी तो छानकर पीते है किन्तु गरीबों का ब्याज रूपी रक्त बिना छाने ही पी जाते है । धनवानों की चारों ओर जय जयकार होती है और गरीबो को जीवन के हर एक क्षेत्र मे शोषण और अपमान की ज्वाला मे ही जलना पड़ता है । असन्तोष की आग धधकती ज्वाला बनकर जलती है बस बस और क्या कहूँ राजकुमारीजी, यह जमीन आसमान का अन्तर ही हमें बहकाता है ।

कृष्णा-वाह भाई कालिया ! तुम तो पढ़े लिखे और सभ्य आदमियों से भी अधिक बुद्धिमान हो । तुम्हारे हृदय के उद्‌गार सच्चे है । तुम्हारे अनुभव में क्रान्ति के बीज छिपे है । आज नही तो भविष्य में, अवश्य भेदभाव की दीवारें टूट जाएंगी । ईश्वर ने तो सब मनुष्यों को समान बनाया है । जो भी जन्म लेता है, कुछ साथ नही लाता है । मरने पर कुछ साथ नही ले

जाता है। जन्म और मृत्यु के बीच जीवन को राज्य, समाज और शासन ही अमीर और गरीब बनाने का उत्तरदायी है। मैंने आज वास्तव में तुमसे कई नई बातें सीखी है, कालिया।

इतने में अचानक राधा वहां पर आ जाती है। राजकुमारीजी की ओर देखकर कहती है, आप बहुत देर से यहां पर बातचीत कर रही है। महारानी जी आपकी एक घण्टे से प्रतीक्षा कर रही है। आप शीघ्र चलिए अन्यथा महारानीजी अप्रसन्न हो जाएंगी। शीघ्रता कीजिये, राज-कुमारीजी।

राजकुमारी-कैसी मुसीबत है। हमें दो घड़ी घूमने की स्वतन्त्रता भी नहीं है। हम भी महलों में बन्दी है। रमा और राधा कृष्णा को साथ लेकर महलो में चली जाती है।

कालिया-राजकुमारी! तो यह सचमुच में राजकुमारी थी! जैसा सुना था, वैसी ही सुन्दरता। बिल्कुल अप्सरा लगती है, दयावान भी है और बुद्धिमान भी है। गरीबों के लिए उसके हृदय में कितनी सहानुभूति है। जब बोलती है तो विनम्रता के, सुन्दरता के जैसे फूल खिलते हैं। वास्तव में राजकुमारी और उसकी सहेलियों को देखकर मेरा जीवन भी धन्य हो गया। मुझे भी कई बातों का नया ज्ञान हो गया। मैंने भी दिल खोल कर वे सभी सच्ची बातें सुना दी जो विचार मेरे मन में बरसों से दबे हुए थे। फिर धीवर युवक को अपने कर्तव्य में विलम्ब होने का अनुभव हुआ। एक चद्दर से ढका हुआ टोकरा उठाया और वहां से अपने घर की ओर चला गया। दूसरे दिन प्रातः काल ही कालिया मछलियों को महाराणा साहब के महलो के रसोई घर में पहुँचा कर वापस आ गया। और अपना समय आनन्द से अन्य दिनों की भाँति व्यतीत करने लगा।

कालिया के मन में सम्भवतः ऐसे विचार उठ रहे थे-कविवर चन्द्रेश जी के शब्दों में—

"धन धरती का सम वितरण, चिर संघर्षो का अन्त है,<br>
युग युग से मानव जीवन का अब तब छिपा बसन्त है।<br>
प्रलय प्रणय के नीर क्षीर में मानव मोती ढूंढ़ता-<br>
किन्तु शान्ति है मन मन्दिर में, जीवन ज्योति अनन्त है॥

———

# नौ

अजमेर जिले में मांगलियावास के निकट कल्प वृक्ष के नीचे मराठा शिविर के बाहर दौलतराव सिंधिया क्रुद्ध चिंतित एवं व्यग्र भाव से टहल रहे हैं। रात्रि का समय है। चलते हुए वह स्वयं से बातचीत करते हुए तनिक तेज स्वर में बोलते है, 'अम्बेर (जयपुर) का राजकुमार जगतसिंह अपनी तीस हजार सेना लेकर मेवाड़ में पहुँच चुका है। मैंने इस अवसर को अपने हाथ से खो दिया है। इस अवसर का लाभ उठाने के लिए मुझे उससे पहले ही पहुँच जाना चाहिए था। खैर! मेवाड़ के महाराणा भीमसिंह को उसकी धृष्टता की सजा तो देनी ही पड़ेगी। वह धन, साधन और बुद्धि से भी हीन दृष्टिगोचर होता है। उसमें कूटनीति, सूझ-बूझ का भी नितान्त अभाव है अन्यथा मुझे यह नही कहलवाता कि मेवाड़ से १६ लाख रुपये वसूल करने वाले मराठे कौन होते हैं? मुझे भी अपनी सैन्य शक्ति के द्वारा अब सिद्ध करना है कि मराठे तलवार के बल पर रुपये अवश्य वसूल करेंगे। मेवाड़ की गरीब और पीड़ित जनता पर पहले दया करके मैने खून खराबी नही की थी। किन्तु इस बार मैं मेवाड़ की धरती की चप्पा चप्पा भूमि को खून से लाल कर दूंगा। उदयपुर का सूर्यमहल और शीशमहल मिट्टी में मिला दिया जायेगा।'

शिविर के पास दाहिनी ओर के मार्ग से सहसा पठानों के सरदार अमीरखां ने दौलतराव सिंधिया का अभिवादन किया और कहने लगा, मराठा सरदार यह खबर बिलकुल ठीक है कि जगतसिंह अपनी फौज लेकर मेवाड़ मे पहुंच गया है। एक खास खबर और है .... .... ....।

दौलतराव सिंधिया-वह कौन सा विशेष समाचार है?

अमीरखां-मेवाड़ के महाराणा भीमसिंह की लड़की कृष्णाकुमारी से जयपुर के राजकुमार जगतसिंह का विवाह होने वाला है।

दौलतराव-यह शादी नही हो सकती।

अमीरखां-मैं आपका मतलब नही समझा सिंधियाजी।

दौलतराव-मैंने जोधपुर के राजा मानसिंह को यहां बुला भेजा है। वे आते ही होंगे। उनके आने पर तुम्हें सारी बातों की जानकारी हो जायेगी। लेकिन अमीरखां इस बार हमें तुम्हारी सैनिक शक्ति की मदद की खास जरूरत है।

अमीरखां-मेरी पूरी फौज की ताकत आपके साथ है। यह मेरी वही फौज है जिसकी प्रबल शक्ति से ईस्ट इण्डिया कम्पनी के लोग भी घबराते हैं।

दौलतराव-भाई अमीरखां। मेरा खास उद्देश्य भी यही है कि गोरों को भारत भूमि से दूर भगाना है। इसी काम को पूरा करने के लिए मैंने मेवाड़ के महाराणा मे रुपये मांगे थे लेकिन वह इन्कार हो गया। उधर जयपुर महाराज भी आर्थिक सहायता देने के लिए तैयार नहीं है। इन बातों का सारांश यही है कि अंग्रेजों से पहले हमें मिलकर मेवाड़ और जयपुर राजा से ही टक्कर लेकर उनके घमण्ड को चूर करना पड़ेगा। मैं आपसी लड़ाई के विरुद्ध हूँ पर कभी-कभी लाचारी में हमे ऐसा करना पड़ता है।

अमीरखां-मराठा सरदार, इस काम में मैं और मेरी फौज आपकी मदद के लिए तैयार है। मेरी बातों और वायदे की कीमत आप मुसीबत के वक्त ही पहिचान सकेंगे। अच्छा, सरदार दौलतरावजी-अभी तो मै अपनी फौज में जा रहा हूँ। मेरा शिविर भी अभी गगवाना के पास जंगल में है, मै ख्वाजा साहब की जियारत करने आया था। आप का सन्देश प्राप्त होने पर आपसे मिलने आ गया।

दौलतराव स्वगत कथन द्वारा हृदय की बात प्रकट करते है। अमीरखां को इस काम में सहायता लेना वीर मराठों के लिए कोई सम्मान की बात नहीं है। लेकिन हमे भी कभी-कभी मजबूरी में कुछ ऐसे काम करने पड़ते है जिन्हे प्रशिक्षित सैनिक नहीं कर सकते। पर ये शैतान बातों ही बातों मे असम्भव काम भी कर दिखाते हैं। यह अमीरखां तो दौलत (रुपयों) का गुलाम है। जो व्यक्ति इसे रुपये, सोना-चांदी देता है, यह शैतान उसी की मदद करता है।

मराठा सरदार दौलतराव विचारमग्न इधर उधर टहल रहा उसी समय अचानक दो सैनिकों ने झुक कर नवागन्तुक ... ओर से कहा, 'जोधपुर महाराजा मानसिंह की ...

दौलतराव- ऐसा मालूम होता है कि जोधपुर नरेश मानसिंहजी शिविर सीमा में आ गये हैं। आगे बढ़कर मुझे उनका स्वागत करना चाहिये। स्वयं सिंधिया सरदार ने मानसिंहजी का स्वागत किया और बैठकर मानसिंह से बातचीत शुरू हुई।

मानसिंह - दौलतरावजी ! आपको मालूम है कि अनेक संघर्षों और कठिनाइयों के बाद मैंने जोधपुर का राज्य-शासन प्राप्त किया है। अपने बड़े भाई की एक संघर्ष में मृत्यु के बाद उनके पुत्र अमरसिंह (धोकल) को कैद कर लिया। प्रजा का एक बड़ा वर्ग जयपुर के राजकुमार जगतसिंह की शह पर उसे राजा बनाना चाहता है। इसी कारण प्रजा में फूट और विद्रोह की ज्वाला फूट पड़ी। परस्पर संघर्ष होने लगा, सरदार लोग गुट बनाकर एक दूसरे पर आक्रमण करने लगे। मैंने स्वयं जालोर के किले में घुसकर सोनगरा राजपूतों की सहायता से अपने प्राणों की रक्षा की। मेरे बड़े भाई भीमसिंह की मृत्यु के पश्चात् सेना के एक बड़े वर्ग की सहायता से मैंने राज्य शासन प्राप्त किया, किन्तु मेरे जीवित भतीजे के कारण अभी भी मैं शान्तिपूर्वक राज्य नहीं कर सकता हूं।

दौलतराव - मैं आपकी प्रखर बुद्धि, सैनिक बल और संगठन शक्ति की स्वयं प्रशंसा करता हूं। जोधपुर राज्य को इस समय आप जैसे शक्तिशाली शासक की ही आवश्यकता है। यदि कभी भी आपको मराठों की शक्तिशाली वाहिनी की आवश्यकता पड़े तो हम आपकी मित्र रूप में सहायता के लिये सदैव तैयार हैं। हम पर विश्वास कीजिये, राजा साहब।

मानसिंह - आपने बड़े आग्रह के साथ मुझसे भेंट करने के लिये लिखा था। कोई विशेष कारण हो तो कृपया स्पष्ट कीजिये मराठा सरदार।

दौलतराव - हम दोनों की मित्रता और सुदृढ़ हो, यही प्रयोजन था।

मानसिंह - बहुत सुन्दर। मराठों की सैन्य शक्ति की सहायता संकट के समय पर बहुमूल्य सिद्ध होगी। दौलतरावजी, मुझे इसका पूर्ण विश्वास है।

दौलतराव - सुना था कि मेवाड़ की राजकन्या कृष्णाकुमारी से आपके भाई महाराजा भीमसिंह से सगाई संबंध तय हुआ था। क्या यह सच है?

मानसिंह - यह बात बिलकुल सच है कि सगाई का नारियल और सामान लेकर एक पुरोहित और उसके साथी जोधपुर आये थे। राज-परिवार

से मिले भी थे। किन्तु उसी समय चल रहे आपसी संघर्ष में मेरे वड़े भाई भीमसिंह की मृत्यु हो गई। फिर वे लोग शीघ्रता से वचकर वापस उदयपुर चले गये।

दौलतराव - और मुझे कुछ दिनों पूर्व मालूम हुआ कि अव उसी सौन्दर्य की प्रतिमा कृष्णा की सगाई जयपुर के राजकुमार जगतसिंह से पक्की हो गई है।

मानसिंह - हो सकता है। अपनी तो वातचीत पहले ही टूट गई। अव हमें उनसे क्या लेना देना है ?

दौलतराव - आप बड़ी भूल करते हैं। वातचीत टूटने का प्रश्न ही कहां उठता है ?

मानसिंह - आपका क्या मतलव है, मैं नही समझ सका।

दौलतराव - मतलब स्पष्ट है। कृष्णाकुमारी का विवाह जोधपुर के राजा के साथ तय हुआ था। उस समय वहां के राजा आपके वड़े भाई थे, आज आप हैं। कृष्णाकुमारी का विवाह अब आपके साथ ही होना चाहिये। आप तो स्वर्गीय राजा के भाई भी हैं। रूप, गुण और वीरता में आपके समान जोधपुर राज्य में और कोई भी नही है ?

मानसिंह - हँस कर वोले, यह तो मेवाड़ के महाराणा के लिये विचारणीय वात है कि वह अपनी कन्या का विवाह किसके साथ तय करना चाहते हैं। यदि महाराणा जयपुर नरेश जगतसिंह से कृष्णा का विवाह करना चाहते हैं तो उसमें मुझे क्या आपत्ति है। यह उनका व्यक्तिगत मामला है।

दौलतराव - आप नहीं समझे महाराज। इसमें राणा की मान है। कृष्णाकुमारी राजस्थान की सर्वोत्तम सुन्दर कन्या है। यह अनुपम सुन्दरी और सौभाग्य लक्ष्मी है। जो उससे विवाह करेगा, वह भाग्यवान होगा। भारतवर्ष में ऐसा कौन वीर राजा है जो मेवाड़ की अप्सरा से विवाह करने का इच्छुक नही हो ?

मुस्कराते हुए मानसिंह वोला, दौलतरायजी, यदि तो क्या आप भी तैयार हैं ?

दौलतराव - मैं आपसे क्या छिपाऊं। आपका सोचना भी सही है लेकिन मेरे लिये कई बाधाएं हैं। मेरे कई मराठा सरदारों ने मेवाड़ को कई बार लूटा है। मैंने भी सोलह लाख रुपयों की मांग की है। यदि मैं कृष्णा की मांग करूंगा तो लोग यही समझेंगे कि मराठों के आक्रमण का यह भी एक बहाना है अतः मेरे विचार से कृष्णाकुमारी हर प्रकार से जोधपुर की महारानी होने के योग्य है।

मानसिंह - मेरी प्रजा मुझसे असन्तुष्ट है। मेरा सिंहासन भी अधिक समय के लिये सुरक्षित नही है। ऐसी स्थिति में एक और संकट मोल ले लेना बुद्धिमानी नही होगी।

दौलतराव - महाराजा साहब ! आप जोधपुर के प्रधान शासक हैं, महाराज हैं। आपकी सहायता के लिये मराठों की महान शक्ति प्रस्तुत है। हम दोनों वीर यदि मिलकर एक हो जाएं तो हम महानतम कार्य कर सकते हैं। आप पुनः कृष्णा से विवाह करने का विचार पक्का कर लीजिये। ईश्वर सहायता करेगा।

मानसिंह-यदि आप सचमुच में सक्रिय सैनिक सहायता का वचन देते हैं तो विचार करूंगा।

दौलतराव-केवल वचन ही नही, मैं शत्रु मानमर्दिनी मां भवानी की तलवार की सौगन्ध खाकर प्रण करता हूं कि मैं और मेरी विशाल वीर वाहिनी हर प्रकार की सहायता करेंगे। हम आपस में मिलकर एक दूसरे को बड़ा बना सकते हैं। हम एक दूसरे को लाभान्वित कर सकते हैं। महाराज साहब क्या आप अमीरखां को जानते हैं ?

मानसिंह-हां नाम तो सुना है किन्तु पूर्ण परिचय नहीं है।

दौलतराव-उसके जैसा भयानक आदमी इस देश में शायद ही कोई हो। उसके हृदय में न तो प्रेम है न ममता। वह पूरा यमराज जैसा है। जिस काम को अपने हाथ में ले लेता है, उसे अपनी विशाल शक्तिशाली पठानों और मुसलमानों की फौज से जान की बाजी लगाकर भी पूरा करता है।

मानसिंह-किन्तु इस प्रकार का भयानक और धन का लालची आदमी विश्वासघात भी कर सकता है।

दौलतराव-एक बार आप उससे मिल लीजिए। वह यहां पास ही आया हुआ है। मुझ से मिलने के लिये अभी आया था। पास के शिविर में ही

वह विश्राम कर रहा है। मैं उसे अभी आपसे मिलने के लिये बुलाता हूँ। अमीरखां अचानक ही बुलाने पर पास के शिविर से निकलकर दौलतराव जी के पास आ गया। उसने आते ही कहा, आपके बुलाने की कोई जरूरत नहीं है। मैं खुद ही महाराज मानसिहजी से मिलने की तमन्ना रखता था। चलो अच्छा हुआ, यह खुद ही यहां मिलने के लिये आ गये।

दौलतराव-सरदार अमीरखां, यही हैं जोधपुर के महाराजा मानसिंहजी।

अमीरखां(ध्यान से देखते हुए)सचमुच में ऐसे खूबसूरत और बहादुर ही मेवाड़ की शाहजादी से शादी के लायक है।

मानसिंह-आपका क्या खयाल है, अमीरखांजी ?

अमीरखां-महाराज साहब। आप ही वास्तव में कृष्णाकुमारी के लायक है। अगर आप उससे शादी का पक्का इरादा कर लें और आपको कुछ भी दिक्कत हो तो बन्दा आपकी खिदमत में हमेशा हाजिर है। मैं जिसकी मदद का वादा करता हूँ, दिलोजान से, पूरी ताकत से उसे पूरा करता हूँ। आपको मैं यकीन दिलाता हूँ कि आपने मुझे अगर कोई काम सौंपा तो मैं जरूर पूरा करूंगा-चाहे उसमें मेरी जान क्यों न चली जावे।

दौलतराव-शाबाश अमीर खां। महाराजा साहब, आप अमीरखां को एक बार आजमाकर तो देखें। यह आदमी बड़े काम का है। जो काम बड़ी-बड़ी फौजें नहीं कर सकतीं, उसे वह अकेला ही पूरा कर लेता है।

अमीरखां-मेरे खतरनाक नाम से और मेरी फौज की बिजली-सी ताकत से अंग्रेजों की फौज भी कांपती है। मेरा चारों तरफ दबदबा है।

मानसिंह-तुम्हारी पूरी तारीफ मैं दौलतराव सिंधिया से सुन चुका हूँ।

अमीरखां-आपके हुकम के लिए बन्दा हमेशा तैयार है। आप एक बार मुझे खिदमत करने का मौका तो दीजिए।

दौलतराव-महाराजा कहना नहीं चाहते। इनकी राह का सबसे बड़ा कांटा जयपुर नरेश जगतसिंह है। उसे दूर करना जरूरी है।

अमीरखां-आपका इशारा मैं समझ गया। अब मैं जयपुर जाकर या जहां भी मौका मिलेगा, जगतसिंह की शक्ति को नष्ट करूंगा।

मानसिंह-अमीर खां जी। जगतसिंह से तो निपटना और उसे सबक सिखाना ही है लेकिन जोधपुर में भी आप के लायक एक काम है। अगली

बार जब भी अपना कहीं मिलना होगा, वह आवश्यक काम आपको बताऊंगा। उसको करने में आप और आपकी फौज के साथियों का जो भी खर्च होगा, वह आपको दिया जायेगा और इनाम भी।

अमीरखां-वाह महाराज साहब, नेकी और पूछ-पूछ। चुपड़ी और दो-दो। मैं आपका बड़ा शुक्रगुजार होऊंगा, अगर आपने मुझे किसी खास काम के लिए चुना है। मैं आपके हुकम की पूरी ताकत और नफासत से तामील करूंगा। क्या मुझे थोड़ा इशारा कर सकते हैं कि वह खास काम किस प्रकार का है?

*मानसिंह अमीर खां को अन्य उपस्थित लोगों से थोड़ा दूर ले जाते हैं और उन्हें कान में कुछ कहते है जिसका सारांश यह था कि उनके भाई स्वर्गीय महाराजा भीमसिंह के पुत्र अमरसिंह को किसी तरह मौत के घाट उतारना है।*

अमीर खां-इस काम के लिए तथा जगतसिंह से टक्कर के लिए तैयार हूँ। साथ ही अमरसिंह के समर्थक राजपूतों से भी मुझे अपनी फौज की मदद से टक्कर लेनी पड़ेगी। इसलिए इस काम के लिए बीस लाख रुपये की रकम नगद अग्रिम देनी पड़ेगी।

मानसिंह-मैं तैयार हूँ। यह रकम आपको जरूर जरूर मिल जायेगी लेकिन पहले आपको जयपुर के राजा जगतसिंह की तबियत ठीक करनी है। वह किसी भी हालत में कृष्णाकुमारी से विवाह नही कर सके, अपने को यह कोशिश जी जान लगाकर करनी है।

अमीरखां-महाराजा साहब आप इन दोनों कामों को बस पूरा हुआ ही समझें। पहले मैं जगतसिंह से निपट लूं फिर दूसरे काम के लिये मैं आपसे दो महीने बाद ही मिलूंगा।

मानसिंह-पहले काम को करके उसकी पूरी सच्ची जानकारी जिम्मेदार आदमी के साथ मुझे भिजवादें। मैं उसका इन्तजार करूंगा। लो यह चौथाई रकम आपको पेशगी देता हूँ। दूसरे काम के लिए मैं आपके साथी को योजना समझा दूंगा। उसके अनुसार फिर दूसरा काम भी करना होगा।

अमीर खां महाराजा साहब से पांच लाख रुपये ले लेता है। और फिर पहले काम का पूरा विश्वास दिलाता है।

मानसिंह-मेरे गुप्तचरों के द्वारा मुझे मालूम हुआ है कि सावन की तीज पर जगतसिंह के लगभग डेढ सौ आदमी कपड़े, जेवर फल, मेवा, मिष्ठान्न आदि सामान लेकर अजमेर-शाहपुरा-भीलवाडा-नाथद्वारा होकर उदयपुर की राजकुमारी कृष्णा के सिंजारे पर जाएगे। अजमेर से भीलवाड़ा के बीच में उसका कीमती सामान लूटकर जगतसिंह की तोहीन करना ठीक रहेगा। निर्धारित समय पर जब कपड़े जेवर उदयपुर नही पहुंचेगे तो वैसे ही उसकी बदनामी हो जायेगी।

अमीरखां-अभी सावन की तीज के आने में कितने दिन बाकी है ?

मानसिंह-(तनिक सोचकर) अभी तो बीस दिन शेष हैं।

अमीरखां-बहुत अच्छा। मुझे तैयारी करने और ठीक वक्त पर एक ही झटके में पूरा काम करने का मौका मिल जाएगा। आज से ठीक तीसवें दिन मेरे पांच बहादुर तथा मैं खुद आपसे जोधपुर से बाहर कुछ दूरी पर आकर मिलेंगे और पहले काम की मुक्कमिल खबर आपको देंगे। मेरा एक खत भी मिलेगा।

मानसिंह-बहुत अच्छा - बहुत अच्छा। अच्छा मैं अब दौलतराव जी से थोड़ी और बातचीत कर चला जाऊंगा।

अमीरखां-अच्छा महाराज साहब, आपके इरादों की जरूर फतह होगी। आप कई बरसों तक जोधपुर की राजगद्दी के मालिक रहेंगे। अच्छा अब मैं वापस अपने साथियों के साथ किशनगढ़ के पास अपनी फौज के साथियों के पास जा रहा हूँ। अच्छा खुदा हाफिज।

मानसिंह-अच्छा खां साहब, आपकी यात्रा सुरक्षित और मंगलमय हो।

मानसिंहजी फिर मराठों के सरदार दौलतराव की ओर जाते है। वे अपने शिविर में आराम कर रहे थे। साथ ही अपनी सेना के प्रमुख जिम्मेदार अधिकारियों से भावी योजना पर विचार विमर्श कर रहे थे। महाराजा मानसिंह के शिविर में प्रवेश करने पर सब साथियों के साथ सिंधिया सरदार खड़े हो जाते हैं। बड़े सम्मानपूर्वक दौलतरावजी महाराज को उच्चासन पर बैठाते हैं। दो मुख्य सेना अधिकारियों के अतिरिक्त शेष लोगों को दौलतरावजी दूसरे शिविर में जाने का संकेत करते हैं।

दौलतराव-महाराजा साहब आप वास्तव में बड़े भाग्यशाली हैं। हम मराठों और अमीरखां की सम्मिलित सहायता से आप बिल्कुल सुरक्षित

रहेंगे। साथ ही कई वर्षों तक जोधपुर के आप शासक रहेंगे। इसमें संदेह नहीं करें।

मानसिंह-वास्तव में आपसे तथा अमीरखां से मेरी मुलाकात बहुत ही लाभदायक सिद्ध होगी, इसमें मुझे तनिक भी सन्देह नही है।

दौलतराव-आप निश्चित रहें। हम सब सम्भाल लेंगे। अगर आप बुरा नही मानें तो हमारी सेना के खर्च के लिए पांच लाख रुपये दिलवा दें तो अच्छा रहेगा। हमें सफर करते लगभग दो महीने हो गये। अब हमें जयपुर वालों को भी शिक्षा देनी है। आशा है आप बुरा नहीं मानेंगे।

मानसिंह-आपके पाच विश्वास-पात्र अधिकारी जोधपुर हमारे साथ ही भिजवा दीजिए। मैं जोधपुर जाते ही पूरी राशि उनको दे दूंगा। अच्छा इस समय तो मैं पुष्कर होते हुए जोधपुर जा रहा हूँ।

दौलतराव-अच्छा महाराज साहब। आपकी यात्रा निष्कंटक और सुखदायक हो। आपको बार बार धन्यवाद। मेरे ये पांच अधिकारी भी आपके साथ जा रहे हैं। इस प्रकार मानसिंह वहां से प्रस्थान करके एक सप्ताह में जोधपुर आ गये। उन्हें रुपये दे वापस विदा किया।

## दस

राजस्थान में जब वर्षा होती है तो यहां के दृश्य देखने योग्य हो जाते हैं। कहीं पर्वतों पर हरियाली उभरती है, कहीं मरुभूमि में शान्ति का संचार होता है। हवा में उष्णता कम होती है। सुहावनी हवाएँ जन-जीवन में आनन्द की वृद्धि करती हैं। उष्णता से पीड़ित जनता को शान्ति प्राप्त होती है। वर्षा के साथ ही त्यौहारों की शृंखला का श्रीगणेश होता है। मरुभूमि और पर्वतीय स्थलों में वर्षा के कारण सुहावना मौसम हो जाता है। स्थान-स्थान पर झूले डाले जाते है। युवक युवतियां झूलों में झूलते हैं और परस्पर आनन्द की, प्रेम की सरिता में स्नान करते है।

जयपुर के राजमहलों से पांच रथ, पचास घोडे तैयार होकर सज-धज के साथ मेवाड़ की राजकुमारी कृष्णाकुमारी के लिए सिंजारे की समस्त

सामग्री लेकर जलेबी चौक में खड़े हो गये। जयपुर के बड़े अधिकारियों और स्वयं महाराजा जगतसिंह ने सभी वस्तुओं का निरीक्षण किया। सोने के रत्नजटित आभूषण, चांदी के कुछ आभूषण, विभिन्न प्रकार की मिठाइयों के कटोरदान, सूखे मेवे, फल, बहुमूल्य कपड़े आदि वस्तुओं का उपस्थित सैकड़ों स्त्री पुरुषों ने निरीक्षण कर सराहना की। सुरक्षा सैनिक, अधिकारी तथा लगभग सौ व्यक्ति उदयपुर के लिए रवाना हो गये। मार्ग में कई प्रकार की कठिनाई सहन करते हुए अजमेर आये. जगह जगह उन्हे पड़ाव करना पड़ता था, किसी प्रकार वे अपने दल बल के साथ खारी नदी को पार करके शाहपुरा मेवाड़ के एक ठिकाने से एक मील दूर पर रात्रि को विश्राम के लिए ठहर गये, सुरक्षा अधिकारी हथियारों को हाथों में रखे हुए अपने पहरे पर सचेत थे। सब साथी भोजन तथा मनोरंजन के पश्चात् विश्राम कर रहे थे। किसी प्रकार की कोई शका भी नही थी। पहरेदार अपने कर्तव्य पर सचेत होकर इधर उधर घूम रहे थे।

रात्रि को लगभग एक बजे पहरेदारों को कुछ घुड़सवारों के दौड़ने की आवाज सुनाई दी। हाथ में मशालें लिये हुए लगभग पन्द्रह सौ व्यक्तियो का झुण्ड शिविर की ओर चला आ रहा था।

अमीर खां और सिंधिया के सिपाहियों ने महाराजा जयपुर के द्वारा भेजे हुए सगाई के बहुमूल्य सामान को लूटने की योजना पहले ही बना रखी थी।

अजमेर के पास से जब जयपुर वालों का काफिला जा रहा था, तब सिंधिया और अमीर खां के गुप्तचरों ने इसका पता लगा लिया था। अजमेर से शाहपुरा मार्ग तक कुछ अन्तर के साथ अमीर खां के चुने हुए साथियों तथा दौलतराव के भी विशेष सिपाहियों ने मिलकर समूह का पीछा किया। अर्ध रात्रि में उस शिविर को चारों ओर से घेर लिया। जयपुर के सैनिको ने जी जान से पूरी शक्ति से इन आततायियों का मुकाबला किया किन्तु संख्या में कम होने और चारों ओर से घिर जाने, व अचेत होने के कारण भारी हानि उठानी पड़ी, अधिकतर सिपाही अधिकारी संघर्ष में मारे गये। कुछ बचे हुए लोग अपने प्राणों को बचाकर भागने में सफल हुए। सरवाड़ अराई होकर वापस जयपुर चले गये और वहां पर महाराजा जगतसिंह को सारा वर्णन कह सुनाया। महाराजा

जगतसिंह को इस दुर्घटना से बड़ा दुःख हुआ। वह यह जानने को उत्सुक थे कि ये लुटेरे कौन थे और उनका क्या उद्देश्य था ?

प्रातःकाल अमीरखां, सिंधिया और जोधपुर के कुछ राठोरों ने मिलकर उस लूट के माल को आपस में बांट लिया और वहां से अपने-अपने स्थानों पर वापस चले गये।

उस संघर्ष में जयपुर के कुछ घायल सिपाहियों को शाहपुरा में औषधि आदि देकर ठीक किया गया। वहां के ठाकुर साहब को इस घटना पर बड़ा दुख हुआ कि मेवाड़ की भूमि पर यह लूटमार हुई और हम सहायता नहीं कर सके। जयपुर के सिपाही कुछ दिनों में महाराजा जगतसिंह के दरबार में उपस्थित हुए। इनमें से एक सैनिक अधिकारी ने बताया कि लूटमार में अमीरखां पठान, दौलतराव सिंधिया तथा मारवाड़ के कुछ ठाकरों ने भाग लिया था। दूसरे दिन लूट के माल को उन्होंने आपस में बांट लिया।

महाराजा जगतसिंह को समझने में देर नही लगी। वे जानते थे कि दौलतराव सिंधिया ने दो महीने पहले दस लाख रुपये अपनी सेना के खर्च हेतु मांगे थे और यह राशि उनको जयपुर द्वारा नही दी गई थी इसलिये दौलतराव जगतसिंह से नाराज हो गये थे। अमीरखां का जगतसिंह को बाद में गुप्तचरों द्वारा पता लगा कि ये भयंकर पिंडारी डाकू सशस्त्र सेना रखता है और स्थान स्थान पर लूटमार करता है और जो राजा अमीरखां को धन देते है, वह उनकी ओर से ही लड़ता है और विरोधी दल चाहे कोई भी हो, उसे जन धन की हानि पहुंचाता है। कुछ राठौर ठाकुर भी महाराजा जयपुर से नाराज थे। उन्होंने भी लूट के काम में भाग लिया था।

धीरे धीरे शाहपुरा के ठाकुर साहब के द्वारा राजकुमारी कृष्णा के सिंजारे के सामान की लूट का समाचार उदयपुर पहुचा। महारानी, महाराणा भीमसिंह तथा अधिकारियों आदि को बहुत दुःख हुआ। महाराज जगतसिंह ने कृष्णा के सिंजारे के लिये लाखों रुपयों की सामग्री भिजवाई थी। वह उदयपुर तक नही पहुंच सकी, इसका मेवाड़वासियों को बहुत दुख हुआ पर किसी के वश की बात नही थी। जो होना था, हो गया।

अमीरखां और उसके साथी लूट के माल को प्राप्त करके बड़े खुश हुए। सिंधिया और राठौर ठाकुरों को कुल माल का एक तिहाई भाग ही प्राप्त हुआ। अमीरखां का चारों ओर दबदबा था। उसके नाम से आतंक छा जाता था। शाहपुरा से अमीरखां जैतारण, भावी होता हुआ अपने संपूर्ण दल बल सहित रास्ते में भी लूटमार करता हुआ जोधपुर चला गया। जोधपुर से लगभग पन्द्रह मील की दूरी पर उसने अपना शिविर लगा दिया। पास में एक गाँव था अतः कुछ आवश्यकता की वस्तु वहां से प्राप्त कर ली। पाँच-छः घुड़सवारों तथा एक सेना अधिकारी को एक पत्र लिखकर महाराजा मानसिंहजी के पास जोधपुर के राजमहलों में भेज दिया। कुछ समय पश्चात् उन्हें महाराजा से मिलने का अवसर एक अलग बड़े कमरे में दिया गया। सेना अधिकारी ने शाहपुरा के पास जगतसिंह द्वारा भेजे गये सगाई सिंजारे के सामान की लूट का वर्णन सुनाया। दौलतराव सिंधिया व राज्य के कुछ ठाकुरों ने लूट खसोट में भाग लिया तथा लूट के माल का परस्पर वितरण कर लिया। महाराजा ने ध्यान से सुना और सन्तोष प्रकट किया।

अमीरखां के पत्र में पन्द्रह लाख की शेष रकम का कल तक प्रबन्ध करने और उसे दिलवाने की बात कही गई थी। महाराजा ने सेनाधिकारी तथा अन्य सैनिकों का उचित आदर सत्कार किया और उन्हें कहा कि अमीरखां तथा उनके लगभग बीस साथी जोधपुर आ जावें। शिवबाग मे हमारा एक राजमहल है, उसमें कल प्रातःकाल ग्यारह बजे अपनी भेंट होगी। उन्हें पूरी धनराशि कल वहीं दे दी जाएगी और भावी योजना पर भी विचार विमर्श करेंगे। इन बातो से उन्हें सूचित कर देना और कल अवश्य आ जावें, वहां सब तरह का प्रबन्ध होगा।

जोधपुर के इस भव्य एवं विशाल महल के एक सुसज्जित कक्ष में अमीरखां और उसके कुछ साथी बैठे हुए बातचीत कर रहे हैं। बहुमूल्य कालीन बिछे है। बड़े बड़े तख्तों पर गद्दी, तकिये, मसनद लगे हुए हैं। बीच में मसनद के सहारे अमीरखां पठान बैठे हुए है।

अमीरखां - देखो अब्दुल्ला, महाराजा जोधपुर ने हमारे आदर सत्कार में कोई भी कमी नही रखी है। कितना अच्छा ठहरने और खाने-

पीने का प्रबंध किया है। अपनी फौज के जवानों के लिये भी कई ऊंट-गाड़ियों में खाद्य सामग्री भिजवा दी गई है।

अब्दुल्ला - सरदार ! आपके नाम का ही सब तरफ रोब पड़ता है। जो इन्तजाम आप चाहते है उससे अच्छा हर जगह कर दिया जाता है।

अमीरखां - अभी तक मेवाड़ मेरे पंजे में नहीं आया है। बाकी राजस्थान की कई रियासतों पर तो अपना दबदबा है। अंग्रेज भी सब घबराते हैं अपनी ताकत से, अपने रोब से, अपने नाम से।

दूसरा साथी - एक बार शक्तावत सरदार संग्रामसिंह उदयपुर वालों से आपकी बातचीत हुई तो थी।

अमीरखां - हां भाई ! लेकिन अचानक ही ऐसा सुना कि संग्रामसिंह मेवाड़ छोड़कर कहीं बाहर चला गया और कुछ समय के लिये चूण्डावतों तथा शक्तावतो में होने वाला संघर्ष टल गया। मेवाड़ सारे राजपूताने की नाक है। भारत का यही एक राज्य है जिसने मुगलों के राज्यकाल में भी कभी सिर नही झुकाया, न कभी आत्मसमर्पण किया। शिशोदिया वंश का जितना अभिमान इनको है, इतना किसी और राजपूत वंश को नहीं।

अन्य साथी - इनके कई पूर्व पुरुषों ने भी देश, सम्मान और वंश का अभिमान बनाये रखने के लिये कई कुर्बानियां दी हैं। इनका गुमान करना ठीक है।

अमीरखां - इसका यह अर्थ नही है कि ये राजपूत दूसरों को इन्सान भी नही समझें। प्रत्येक मनुष्य अपने देश, जाति और धर्म की रक्षा के लिये अपनी जान पर खेल सकता है। प्रत्येक व्यक्ति में बलिदान होने की मनोवृत्ति छिपी रहती है। उचित प्रोत्साहन और उपयुक्त अवसर पर वह विकसित हो जाती है। हिन्दुस्तान के राजपूत देश की रक्षा करना अपना निजी कर्त्तव्य मानते है, इसीलिये वे अपने को इस सम्मान का अधिकारी मानते है। इनकी बहादुरी काबिले तारीफ है लेकिन हमें तो इनकी फूट का, आपसी दुश्मनी का फायदा उठाना जरूरी है।

अब्दुल्ला - अब इस देश में मुसलमानों का सितारा हमेशा के लिये डूब गया है। हमे भी इस मुल्क के लोगों के साथ हिल मिल कर रहने की सुविधा मिलनी चाहिये।

अमीरखां - इस देश में जहां भी मुसलमानों का राज्य कायम हुआ तब कई राजपूतों ने उनके साथ शादी के संबंध भी कायम किये थे। लेकिन राजपूत अपनी संस्कृति को हमारे से ऊंचा ही मानते रहे। समाज मे कभी भी बराबर का स्थान हमें नहीं दिया गया।

साथी - इसमें हमारी धार्मिक कट्टरता भी जिम्मेदार है। हिन्दू भी धार्मिक दृष्टि से बहुत कट्टर और अंधविश्वासी हैं। इसीलिये चार पांच सौ साल के बावजूद भी हिन्दू मुसलमान एक नहीं हो सके, न इनमें कोई मेलजोल है।

अमीरखां - अब्दुल्ला! मैं राजपूतों के घमण्ड को कुचलना चाहता हूँ। इस वक्त राजपूताने के हर एक राजघराने में और पड़ोसी रियासतों मे बैर है, दुश्मनी है और हमें इस आपसी फूट रूपी आग में घी डालकर उसे बढ़ाना चाहिये और इससे जितना फायदा हो सके, हासिल करना चाहिये। षड्यंत्र और हत्याओं का बाजार गर्म है। मैं इस गृहयुद्ध की ज्वाला को और भी ज्यादा भड़काकर राजस्थान का कब्रिस्तान बनाना चाहता हूँ ताकि यहां के सोना, चांदी, हीरे, जवाहरात हमे मिल सके। मैं पूरे राजपूताने पर अपनी सल्तनत कायम करना चाहता हूँ।

अचानक महाराजा मानसिंह उस बड़े कमरे में आ गये। उनके साथ पांच छ: अंगरक्षक तथा खजांची भी साथ थे। रुपयों तथा सोने की अशर्फियों से भरी हुई तीन बड़ी बड़ी थैलियां खजांची ने महाराजा साहब की आज्ञा से अमीरखां और उनके साथियों को दे दीं। इनका कुल मूल्य पन्द्रह लाख रुपये के बराबर था।

अमीरखां - आइये बैठिये महाराजा साहब। एक तख्त पर लगी हुई मसनद की ओर इशारा करते हुए बैठने की प्रार्थना की।

महाराजा साहब बैठ गये, सामने एक तख्त पर मसनद के सहारे अमीरखां बैठ गये। बैठते ही अमीरखां ने अब्दुल्ला को महाराजा साहब के लिये अमलपान लाने को कहा।

मानसिंह - नही, नही भाई। मैं अभी अभी अमलपान करके आया हूँ।

अमीरखां - (साथी को आंखों के इशारे से वहां से जाने का संकेत किया। वह चला जाता है।) आपने महाराजा साहब बड़ा कष्ट किया।

मानसिंह - नही खान साहब। इसमें कष्ट किस बात का? आप यह रकम संभाल लीजिये। मेरे निमत्रण पर आप जोधपुर आये। क्या मैं अपने रंग महल से यहां पर भी नहीं आ सकता। मुझे तो कुछ लज्जा का अनुभव होता है कि मैंने अपने काम के लिये आपको इतनी तकलीफ दी है।

अमीरखां - आदमी ही आदमी का काम करता है। आपने जो पहला काम बतलाया था, हमने इस तरह से किया कि साप भी मर गया और अपनी लाठी भी नही टूटी। जयपुर नरेश को कुल आठ-दस लाख रुपयों का माली नुकसान उठाना पड़ा। साथ ही उनकी सगाई सिजारे का दस्तूर भी पूरा नही हो सका। इससे उदयपुर महाराणा और जयपुर महाराजा दोनो के संबध भी बिगड़ जाएगे। दौलतराव तथा कुछ राठौर ठाकुरों को भी लूट के माल का हिस्सा दे दिया गया। अब आप मुझे दूसरे काम के बारे में समझाइये कि वह किस तरह करना है?

मानसिंह – तुम्हें शायद मालूम नही होगा कि महाराजा जगतसिंह जयपुर की एक बहिन का विवाह मेरे बड़े भाई स्वर्गीय राजा भीमसिंह से हुआ था। उसी का एक लड़का है जो सात-आठ साल का है। अभी छोटा ही है फिर भी महाराजा जयपुर और मारवाड़ के कुछ सरदार मेरे भतीजे अमरसिह (धौकल) को राजगद्दी पर बैठाने के इच्छुक है। मै नरवर का राजकुमार हूँ। आपसी संघर्ष में भीमसिंह मारा गया और मैंने अपनी बहादुरी और शक्ति से, धन से, राजगद्दी प्राप्त कर ली। पर अभी इस पर बने रहने में कई खतरों का सामना करना है।

अमीरखां - आप इसकी जरा भी फिक्र नही करे। खुदा ने चाहा तो यह काम एक महीने मे पूरा हो जायगा। पर आप इसका किस प्रकार इन्तजाम करेंगे जरा, बताइये।

मानसिंह - इस वर्ष हम होली का त्यौहार मनाने के लिये जोधपुर से दूर मेड़ता जाएंगे। दस पन्द्रह दिन हमारा शिविर उधर ही लगेगा। वही मैं मेरे भतीजे को लेकर आ जाऊगा और आपको वहां आने पर बतला दूगा। फिर होली का जब रग डालने का दिन होगा, उस दिन की धूमधाम मे एक झगड़े की कोशिश होगी।

अमीरखां - हां! उसी झगड़े की गड़बड़ में हम आपके भतीजे अमरसिंह को पकड़ कर अपने तम्बुओ में ले जाएंगे जो वहा से पाच छः मील की

दूरी पर जंगल में होगा। फिर हम उसका काम तमाम करके आपके सिर-दर्द को हल्का कर देंगे। इस तरह फिर आप बरसों तक तसल्ली से राज कर सकते है महाराज साहब।

मानसिंह - हां भाई अमीरखां, यही ठीक रहेगा। तुम इन दिनों कही घूमने फिरने या दूसरी रियासत में चले जाना और होली से तीन चार दिन पहले मेड़ता से चार पांच मील की दूरी पर अपनी फौज को ठहरा देना। फिर आपके दस साथियों को मुझसे मिलने हमारे शिविर मे भेज देना। यही योजना ठीक रहेगी।

जैसे ही मानसिंह और अमीर खाँ की गुप्त बाते समाप्त हुईं, अमीर खां के एक साथी ने आकर कहा, आप लोगों से मिलने के लिए उदयपुर के कोई जवानदास आए हैं-अगर आपका हुकम हो तो उनको अन्दर भेज दूं ?

मानसिंह ने अमीर खां से कहा, अपनी बाते तो सब पूरी हो गयी-कुछ जवानदासजी से भी बातें करलें। वे उदयपुर से मिलने आये है तो जरूर कोई खास समाचार लाये ही होंगे। मानसिंह ने आज्ञा दी और एक सिपाही ने जवानदासजी को अन्दर आने को कहा। जवानदासजी के आने पर दोनों ने उनका अभिवादन किया फिर तीनों व्यक्ति अपने स्थान पर बैठ गये।

मानसिंह- अमीरखांजी ! आप जवानदासजी को शायद जानते होंगे।

अमीरखां- हां उनका नाम सुना है, ये उदयपुर महाराणा के खास रिश्तेदार और प्रभावशाली व्यक्ति है। ये महाराणा के 'धा' भाई है। तीव्र बुद्धि वाले अच्छे आदमी है।

जवानदास- यह मेरा सौभाग्य है कि महाराजा साहब के भी दर्शन हो गये। आपसे मिलना मेरे लिये आवश्यक था।

मानसिंह- मुझसे क्या काम आ पड़ा ?

जवानदास- काम आपके हित का ही है। राजकुमारी कृष्णा का टीका पहले जोधपुर भेजा गया था।

मानसिंह- स्वर्गीय महाराज भीमसिंह के लिए।

जवानदास- राजा महाराजाओं के यहां यह सम्मान व्यक्ति का नहीं, राज-गद्दी का होता है। यही बात मैंने राजा जी से कही थी और उनसे पन:

प्रार्थना की है कि राजकुमारी कृष्णा का टीका जयपुर के बजाय जोधपुर के वर्तमान राजा मानसिंहजी के लिये ही आना चाहिए। तब उन्होंने कहा था, वर्तमान राजा की गद्दी का विवाद चल रहा है। अपनी बेटी को मैं विपत्ति में डालना नहीं चाहता हूँ।

मानसिंह- त्योरियां चढ़ाकर —हूँ— ।

जवानदास- शक्तावत सरदार संग्रामसिंह की राय से फिर टीका जयपुर के महाराजा जगतसिंहजी के लिये भेज दिया गया था।

अमीरखां- (जोश में आकर) यह सरासर जानबूझ कर आपकी तौहीन की गई है।

मानसिंह- मैं राठौर हूँ, जवानदासजी। अपने सम्मान की रक्षा के लिए प्राण देने में राठौर किसी से भी पीछे नहीं रहता है।

अमीरखां- सुना है कि राजकुमारी कृष्णा अत्यन्त सुन्दरी, गुणवती और बुद्धिमती है।

जवानदास- वह राजस्थान में सर्वोच्च सुन्दरी है। महाराजा जगतसिंह उसके योग्य भी नहीं हैं। वह तो आप जैसे सुदृढ़ वीर और सुन्दर पुरुष की सहयोगिनी होने योग्य है।

मानसिंह- सुनिये जवानदासजी। चाहे सारे मारवाड़ का राज्य ही मुझे बाजी पर लगाना पड़े-मैं राजकुमारी कृष्णा को हर हालत में जोधपुर की महारानी बनाऊंगा। यह मैं प्रतिज्ञापूर्वक कहता हूँ। मेरी आन को मैं अवश्य पूरा करूंगा - यह मेरा दृढ़ निश्चय है।

जवानदास- महाराजा साहब मैं आपकी पूरी सहायता करूंगा।

अमीरखां- महाराजा साहब। आप मुझे भी सेवा का मौका दीजिये। मैं प्रतिज्ञा को पूरा करने में पूरी सहायता करूंगा। कृष्णा की शादी होगी तो सिर्फ आपके साथ, वर्ना किसी के भी साथ नहीं। आप मेरा विश्वास कीजिये।

मानसिंह- अच्छा अमीरखां! अभी तो मैं जा रहा हूँ। चलिये जवानदासजी आज तो मेरे घर को ही पवित्र कीजिए।

जवानदास- महाराजा साहब कल मैं अवश्य आपके यहां उपस्थित होऊंगा। अभी मुझे अमीरखांजी से कुछ जरूरी सलाह करनी है।

मानसिंह- चलिए। अमीरखांजी चलिए, आपके साथियों को भी ले चलिए। खाने और मनोरंजन के बाद आप लोग जहां चाहे फिर चले जाना।

सब लोग महाराजा साहब के साथ चले जाते है।

## ग्यारह

जोधपुर से लौटने के पश्चात् अमीर खां अपने दल बल सहित जयपुर राज्य में चला गया। जब उनका शिविर वगरु नगर के वाहर लगा हुआ था, उस समय अमीर खां से संध्या के समय आठ दस राजपूतों का दल मिलने के लिए आया। वे राजपूत वगरु में माताजी के मन्दिर मे दर्शन करने के लिए आए थे। ग्रामवासियों के गडरिया परिवार के एक नौजवान से पता लगा कि अमीर खां ने अपने दल बल सहित जयपुर की ओर जाते हुए तीन दिन यहां ठहरने हेतु शिविर लगाया है। आठ दस राजपूतों के मुखिया सवाईसिंह की इच्छा हुई कि चलो अमीरखा से मिलें जिससे जोधपुर, जयपुर, उदयपुर राजाओं के प्रति कुछ विचार विमर्श और जानकारी मालूम हो जायेगी। कुछ अपने काम की वात भी हुई तो करने का प्रयत्न उत्तम रहेगा। किसी देश और समाज का जब पतन होने लगता है, तो उसके चिन्ह प्रकृति में भी उत्पन्न हो जाते है। समाज में स्वर्थाधता भर जाती है। अभिमान की ज्वालाओं के कारण शासक अपनी वास्तविकता को, शक्ति सीमा को भूल जाते है। अपनी स्वार्थ पूर्ति के लिए देश और समाज की बड़ी से बड़ी हानि करने में भी वे नही हिचकिचाते है। यही दुर्दशा इस समय राजपूताने की थी। सभी राज परिवार आपस में एक दूसरे को नीचा दिखाने का प्रयत्न कर रहे थे। सभी अपने को अन्य दूसरों से ऊंचा मानते थे। उनका मापदण्ड स्वयं या चापलूसों का वनाया हुआ था जो सच्चाई मे सदैव दूर रहता है।

अमीरखां के प्रमुख शिविर में एक सिपाही के द्वारा सन्देश भिजवाया गया कि गीजगढ़ के ठाकुर उम्मेदसिहजी और उनके भाई सवाईसिह जी आपसे मिलना चाहते है ।

अमीर खा कुछ व्यवस्थित रूप से एक आसन पर बैठ गया । अपने तीन चार बहादुर साथियों के साथ बैठने के पश्चात् अमीरखां ने सवाईसिह और उम्मेदसिह को अन्दर बुलाकर आदरपूर्वक बिठाया । कुशल क्षेम और परस्पर परिचय के पश्चात् बातचीत का सिलसिला शुरू हुआ ।

सवाईसिह- अमीर खां जी । सुना है कि आप अभी जोधपुर होकर आ रहे है ? महाराजा मानसिहजी के मिजाज कैसे है ? क्या वे शान्तिपूर्वक राज्य शासन चला रहे है अथवा निकट भविष्य मे कुछ उखाड़-पछाड़ की आशका करते है ?

अमीर खां - सवाईसिह जी । मैं तो उधर वैसे ही घूमता हुआ चला गया । उनसे मेरा कोई भी खास काम नही था । फिर भी आपसी परिचय के बाद उन्होंने हमारी बड़ी खातिर की । मुझे तो उनके जीवन में कोई खास उलझन और समस्या दिखाई नही दी । हां, एक बात उनके दिल मे कॉटे की तरह खटक रही है कि उनका विवाह उदयपुर की राजकुमारी कृष्णा से क्यों नही हो रहा ?

सवाईसिह- आप उनके सम्पर्क में अधिक नही रहे इसलिए आपको पूरी बातों का ज्ञान नही है । मैं वैसे पोकरण ठिकाने का जागीरदार हूँ । मेरी एक नौजवान कन्या है, उसका हाथ भी मानसिह ने मांगा था । हम जानते है कि वह खास राजवंश के खून में से नहीं है । इसलिये हमने कहा कि मै तो अपनी पुत्री का सम्बन्ध जयपुर के राजकुमार जगतसिह से कर रहा हूँ । बात भी तय हो गई है । इस पर मानसिह बड़े नाराज हुए और कहने लगे- सवाईसिहजी, आप आपकी सुपुत्री का विवाह करे तो पोकरण से ही करना । अगर जयपुर जाकर करोगे तो तुम्हारी राजपूती के बट्टा लग जाएगा, तुम्हारी बड़ी मानहानि होगी ।

अमीर खां- फिर आपने क्या जवाब दिया ?

सवाईसिह- मैने कहा - कि मेरे भाई उम्मेदसिह जयपुर के राज दरबार में ऊंचे पद पर आसीन है । साथ ही गीजगढ़ की जागीर उनकी है । अतः

मैं पोकरण में विवाह न करके अगर जयपुर में या गीजगढ़ में ही करूँ तो कोई मानहानि की बात नही है । इसमें कलंक लगने का कोई प्रश्न ही नही उठता । फिर तेश में मैंने और भी कह दिया, कि कलंक तो आपको लग रहा है कि उदयपुर की राजकुमारी कृष्णा का विवाह जोधपुर नरेश भीमसिंह से तय हो गया था और वही राजकन्या अब जयपुर के महाराजा जगतसिंहजी से शीघ्र ब्याही जाने वाली है । आप जैसे वीर बहादुर के होते हुये जोधपुर की राजगद्दी पर आया हुआ सगाई का नारियल लौट गया । धिक्कार है ।

अमीरखां- वह सगाई तो उनके बड़े भाई भीमसिंह से हुई थी ।

उम्मेदसिंह- हम राजपूतों में सगाई विवाह के सम्बन्ध राजगद्दी के साथ पक्के होते हैं अतः कृष्णाकुमारी का विवाह जोधपुर में ही होता तो अच्छा था ।

अमीरखां - महाराजा मानसिंह ने प्रण किया है कि वे अवश्य ही कृष्णाकुमारी से विवाह करेंगे, चाहे उन्हें कितनी भी जन-धन की हानि उठानी पड़े ।

सवाईसिंह - यह असंभव है । अब जयपुर के महाराजा जगतसिंह के साथ कृष्णा की सगाई पक्की हो गई है ।

जगतसिंहजी भी विवाह की पूरी तैयारी कर रहे हैं ।

अमीरखां - अब तो भविष्य ही बताएगा कि मेवाड़ की राजकुमारी की शादी किससे होगी ?

सवाईसिंह - अमीरखां जी । हमें आपसे अकेले में कुछ बात करनी है अतः आपके इन आदमियों को बाहर भिजवा दीजिये । हम भी खास दोनों भाई ही आपसे बात करेंगे । बाकी लोग सब बाहर चले जाएंगे । दोनों ओर के शेष व्यक्ति बाहर चले जाते है । अमीरखां का खास साथी शमशेरखां वहीं अमीर के पास बैठ जाता है ।

अमीरखां - अब कहिये मेरे लायक कोई खिदमत हो तो जरूर बताइये ।

सवाईसिंह - अमीरखां जी, आपको यह तो मालूम होगा कि जोधपुर के स्वर्गीय राजा भीमसिंह के पुत्र अमरसिंह (धौंकल) जी जयपुर महाराजा के भानजे लगते हैं । जोधपुर की गद्दी पर उनका ही अधिकार है । लेकिन

मानसिंह धोखे से अपने बड़े भाई को मारकर खुद राजा बन बैठे। उन्हें राज्य की क्षत्रिय सभा का पूर्ण समर्थन भी प्राप्त नही है और ऐसा भी सुनने में आया है कि मानसिंह किसी तरह अन्यायपूर्वक बालक अमरसिंह को मौत के घाट उतारकर फिर निश्चिन्त होकर राज्य करना चाहता है।

अमीरखां – आप लोग इस विषय मे क्या चाहते है? अगर मैं आपकी कोई मदद कर सकता हूँ तो मेहरबानी करके बताइये।

सवाईसिंह - हम तो यही चाहते है कि आपकी मदद से उस बालक अमरसिंह को कोई नुकसान नही पहुचे। किसी दशा मे उसकी हत्या नही होना चाहिये। अगर वह किसी तरह जयपुर मे हमें लाकर सौंप दिया जाये तो आपको हम मुँह मांगा इनाम देंगे।

अमीरखा - आप विश्वास कीजिये, आपका काम सब हो जायगा लेकिन मेरी इतनी फौज के खर्च के बीस लाख रुपये देने होंगे अगर आप तैयार हों तो हम एक दो दिन और इसी जगह पर ठहर जाएगे। आप यह रकम चुपचाप हम दोनों के पास पहुचा दीजिये। फिर आप देखेंगे कि आपका काम हो जायगा।

सवाईसिंह - शुक्रिया। कल इसी समय हम जयपुर से आकर यह पूरी रकम आपके शिविर में पहुचा जाएगे।

अमीरखां - अच्छा मैं आपका इन्तजार करूंगा। आप कल शाम को पाँच बजे तक जरूर आ जाइयेगा।

सवाईसिंह - अच्छा अब हम जयपुर जा रहे हैं। इतना कहकर सवाईसिंह तथा उम्मेदसिंह अपने सब साथियों को लेकर जयपुर चले गये। महाराजा जगतसिंहजी से इन दोनों भाइयो ने बातचीत की, महाराजा भी अमरसिंह की सुरक्षा चाहते थे, अतः सवाईसिंह के साथ बीस लाख रुपये अमीर खां के पास भिजवा दिये। सवाईसिंह अपने दस पन्द्रह वीरों के साथ आया और अमीरखां के खेमे में जाकर पूरी रकम उनको दे दी। रकम लेने के बाद शमशेरखां और अमीरखां ने उन्हें विश्वास दिलाया कि दो महीने के अन्दर हम जोधपुर से अमरसिंह को जीवित सुरक्षित जयपुर पहुँचा कर जाएंगे। अमीरखां की बात का उन्होने पूर्ण विश्वास कर लिया।

अमीरखां - क्यों भाई सवाईसिंहजी, कुछ दिनों पहले दौलतराव सिंधिया जयपुर महाराजा से मिलने के लिये आये थे ? आजकल वे कहा चले गये ?

सवाईसिंह - दौलतराव सिंधिया ने महाराजा साहब से अपनी फौज के खर्च के लिये दस लाख रुपये और मांगे थे। पहले भी कई वार वे डांट धौंस से वड़ी बड़ी राशि ले चुके है।

अमीरखां - फिर महाराजा जगतसिंह ने उनको क्या जवाब दिया।

सवाईसिंह - महाराजा ने व्यर्थ में इतनी वड़ी रकम देने से इन्कार कर दिया। जयपुर की फौज संगठित और नये हथियारो से सुसज्जित करने में काफी खर्च किया जा रहा है। फिर भी कल सिंधिया को मिलने के लिये महाराजा ने बुलाया है। महाराजा दौलतराव सिंधिया से मिलने के लिये कल शाम को स्वयं उनके शिविर में जाएगे।

अमीरखां - यह मुलाकात किस जगह होगी ?

सवाईसिंह - सिंधिया ने अभी गोविन्दगढ चौमू के बीच में अपना शिविर लगा रखा है। वहीं पर यह भेंट होगी।

अमीरखां - अच्छा भाई सवाईसिंह, अब हम जाते हैं। मैंने सिंधिया के लिये इसलिये पूछा था कि वह राजपूताने के राजाओं की शक्ति को संगठित करके, मेरी फौजी मदद को भी साथ-लेकर अंग्रेजों को हिन्दुस्तान के वाहर निकालने का सपना देख रहा है। पर मुझे तो यह काम नामुमकिन लगता है। अच्छा खुदा हाफिज ! फिर दो महीने के अन्दर बगरू में ही मुलाकात होगी।

इस प्रकार अमीरखां ने जयपुर राजघराने से यह प्रतिज्ञा की कि वह स्वयं भीमसिंह के पुत्र अमरसिंह की रक्षा करेगा और उसे बगरू मे लाकर सवाईसिंह व उम्मेदसिंह को सौप देगा।

मनुष्य की बातचीत से उसके आन्तरिक विचारों और कार्यो गतिविधियों का पता लगाना बहुत कठिन है। मनोवैज्ञानिक मानव मनोविज्ञान का इतना अध्ययन कर रहे है किन्तु पूर्ण रूप से कोई निष्कर्ष प्राप्त करना असंभव है। प्रत्येक व्यक्ति अपने कुकर्मो को, बुरी नीयत को, विश्वासघाती प्रवृत्ति को छिपाता है और अपनी आंशिक सफलता और अच्छाइयों को कई गुना बढ़ा चढाकर उनका प्रचार प्रसार करता

है। जोधपुर के महाराजा मीरावाई के मन्दिर के दर्शन और होली का त्यौहार मनाने के लिये अपने परिवार के सदस्यों तथा अपने विशेप समर्थक ठाकुरों और जागीरदारों के साथ मेड़ता आ गये। मेड़ता नगर के वाहर विशाल मैदान मे उनके सैंकड़ो शिविर लग गये। अपनी सेना के लगभग दो हजार सैनिकों को लेकर लगभग पन्द्रह दिनों के लिये जोधपुर से आ गये थे। साथ में उनके स्वर्गीय भाई के लड़के अमरसिंह को भी घुमाने के वहाने अपने साथ लेकर आये थे। अमरसिंह को एक अलग शिविर में ठहराया था। उसके साथ में दस पन्द्रह वीर सैनिकों को ठहराया जो उसकी सुरक्षा के लिये उत्तरदायी थे।

अमीरखां जयपुर गोविन्दगढ़ चौमू से फिर मार्ग वदलकर मेड़ता की तरफ आ गया। अमीरखा को जोधपुर के मानसिंह के साथ हुए समझौते के अनुसार अपना काम करना था अतः वह अपने दल वल सहित मेड़ता से पाँच मील दूर शिविर लगाकर आराम से ठहर गया।

रात्रि को पांच सैनिकों के साथ अमीरखां ने महाराजा मानसिंह को अपने मेड़ता के पास शिविर करने की सूचना भिजवा दी। पांच सैनिकों के साथ घोड़ों पर दो सेनाधिकारी थे, शमशेर खां और अब्दुल्ला।

महाराजा को समाचार प्राप्त करके सन्तोष हुआ। होली के त्यौहार के तीन दिन शेप थे। महाराजा मानसिंह ने कहा-शमशेरखां-अमीरखांजी से कहना कि आज से तीसरे दिन रात को चुने हुए साथियों के साथ आ जावे और उस वड़े वबूल के पेड़ के नीचे सख्या तेरह शिविर मे से अमरसिंह को रात्रि को ग्यारह वजे अचानक आक्रमण करके उसे पकड़ कर ले जावें और फिर.....।

इतनी वाते सुनते ही अमीर खां के सातों व्यक्ति वापस उनके ठहरने के स्थान पर चले गये। महाराजा मानसिंह भी होली के उत्साह में भाग लेने लगे। चारों ओर खुशियां मनाई जा रही थी। किसी को भी यह आभास नही हो रहा था कि कोई वहुत वड़ी दुर्घटना होने वाली है। समय अपनी निरन्तर गति से चल रहा था।

दूसरे दिन रात्रि को दस वजे जिस स्थान पर अमरसिंह अन्य सिपाहियों की सुरक्षा में ठहरा हुआ था। वहां पर महाराजा मानसिंह अपने दो अधिकारियों को लेकर अचानक पहुंच जाते है। यह स्थान

अस्थायी कारागार की तरह बनाया गया था। बालक अमरसिंह कई हथकड़ियों से जकड़ा हुआ था। इतना उदास दुःखी और दीन दशा में था कि दुर्भाग्य की सजीव मूर्ति लग रहा था। पर क्या करे ? जब मानसिंह ने प्रवेश किया तो अमरसिंह भयभीत हो गया। इतनी रात गये, उसके दुष्ट चाचा का आना उसे अच्छा नहीं लगा। दीपक का प्रकाश धीमा था, विपरीत हवा से टिमटिमा रहा था। बालक चाचा को भयभीत दृष्टि से देख रहा था।

मानसिंह - अमर ! मैं तुम्हें यह चेतावनी देने आया हूँ कल रात तुम्हारा सिर काटकर कालिका माता के चढ़ाया जायगा।

अमरसिंह - क्यों चाचाजी ! मेरा क्या दोष है ?

मानसिंह - तुम्हारा दोष यही है कि तुम मारवाड़ के स्वर्गीय राजा भीमसिंह के पुत्र हो। अगर तुम उनके पुत्र न होकर किसी भिखारी के पुत्र होते तो तुम्हें कुछ नहीं कहता। तुम्हारा प्राण नहीं लिया जाता। पर मैं राज्य की सुरक्षा के लिये मजबूर हूँ।

अमरसिंह - मैं आपसे शत्रुता नही रखता चाचाजी। आपके प्रति मेरे हृदय में श्रद्धा है। मैं आपको अपने पिता के स्थान पर मानता हूँ।

मानसिंह - राजनीतिक दृष्टि से तुम मेरे रास्ते के कांटे हो, आस्तीन के सांप हो। तुम्हें लेकर जयपुर और जोधपुर के कुछ लोग मेरे विरुद्ध सैनिक तैयारियां कर रहे हैं। यदि उनका विद्रोह सफल हो जाएगा तो न मैं जिन्दा रहूंगा, न मेरा शासन रहेगा।

अमरसिंह - काकाजी मैं राजसिंहासन का भूखा नहीं हूं। राज करने की लालसा भी नही रखता। मैं आपसे धन, दौलत, राज्य, जागीर कुछ भी नही मांगता, लेकिन ईश्वर की इतनी बड़ी दुनिया में मुझे केवल जिन्दा रहने दीजिये, मैं आप से अपने प्राणों की भीख मांगता हूं।

मानसिंह दृढ़तापूर्वक जोर से कहते हैं-"नही अमर यह नही हो सकता।"

अमरसिंह - आप सब कुछ कर सकते है। मेरे पिताजी ने मरते समय आपसे मेरी सुरक्षा का वचन लिया था। आशा है आप अपना वह वचन जो मेरे पिताजी को उनकी मृत्यु शैया पर दिया था, अभी तक भूले नहीं होंगे। आप ही मेरे पिता हैं, आप ही रक्षक हैं, आप ही मेरे सब कुछ है।

मानसिंह - अमर ! उन सब बातों की मुझे याद मत दिलाओ ।

अमरसिंह - आप मेरे पितातुल्य है । आजकल क्या बस एक-दो दिनों में ससार बदल जायगा कि राज्य प्राप्ति के लिए पिता अपने पुत्र की हत्या करेगा ।

मानसिह - वास्तव में मैं तुमसे डरता हूँ अमर । तुम्हारे जीवित रहने से मुझे सिंहासनच्युत होने का डर लगा रहता है ।

अमरसिंह - क्या आप सच कहते है ? क्या सचमुच मेरा जीवित रहना आपके लिये अमगलसूचक है ? तो फिर चाचाजी ठीक है, आपकी सुखवृद्धि के लिये मै अपने प्राण दे दूंगा । आपकी राह का कांटा बनकर नही रहना चाहता । मैं भी मनुष्य हूँ । शायद बड़े होने पर मुझमें भी राज्य करने का लोभ हो जाये । नहीं चाचाजी - आप मेरा सिर काट ले । मै कुछ नहीं बोलूंगा । कुछ नही, कुछ नही । अमरसिह ने सचमुच बकरी के बच्चे की तरह मानसिह के सामने अपना बलिदान देने के लिए सिर नीचे झुका दिया किन्तु पत्थर-दिल मानसिंह का हृदय नही पसीजा । उसके साथ के दोनों वीर सेनापतियों की आँखों से आँसुओं की धारा बह रही थी पर मानसिह के डर से वे चुपचाप ही आँसू पोंछते रहे ।

मानसिह - (सविस्मय) अमर !

अमरसिंह - हां चाचाजी, सच मानिये । आप अभी अभी इसी क्षण मेरा सिर काट दीजिए । आपके सिंहासन पर बैठने की अवधि अमर हो जायेगी ।

मानसिंह- (मन ही मन) मुझे यह क्या हो गया! कुछ समझ में नही आता। अमर को मैंने अपने पुत्र की तरह प्यार किया है । आज राज्य के लोभ में इसकी हत्या करना चाहता हूँ और यह लड़का मेरी खुशी के लिए अपनी जान देने को तैयार है । अब मै क्या करूं ? मैं बहुत आगे बढ़ चुका हूँ । पीछे लौटना भी अब खतरनाक होगा । प्रकट में जोर से - क्या अमर तुम अभी भी प्राण देना चाहते हो ?

अमरसिह - पिताजी चल बसे । प्रारम्भ से ही मुझे मां का प्यार नहीं मिला । आज आपका स्नेह भी नही रहा तो फिर मैं किसके लिये जीने की बात सोचूं ? बोलो चाचाजी । मैं आपकी भलाई के लिए अपने प्राण न्यौछावर करने को तैयार हूँ । पर याद रखो मेरी अन्यायपूर्ण हत्या के प्रभाव

से आप आजन्म पछतायेंगे और भविष्य में आपके भी जो सन्तान होगी, वह भी बेमौत मेरी तरह ही कत्ल कर दी जायेगी - आपके घर में नहीं तो ईश्वर के घर में न्याय है। भगवान का न्याय निष्पक्ष होता है। आप अपने स्वार्थ के लिये मेरे प्राण ले सकते हैं ।

मानसिंह- ठीक है, मै अभी आया।

मानसिंह के हृदय में भयंकर तूफान आ गया। वह वहाँ अधिक समय नहीं रुक सका और अपने साथियों सहित वहाँ से चला गया। अमरसिंह घोर निराशा और दुःख से विलख बिलख कर रो रहा था। वह भूमि पर लेट गया और बहुत देर तक दुखद विचारों में डूबता उतराता रहा। सब पहरेदारों को नींद आने लगी। एक-दो व्यक्ति घूमते रहे। थोड़ी देर में उन्हें भी नींद आ गई। उसी समय पीछे की एक खिड़की का द्वार खुला और एक व्यक्ति सैनिक वेश में तलवार तथा कटार लिये प्रविष्ट हुआ।

खट-खट की आवाज सुनकर अमरसिंह ने उठकर उस ओर देखा। उसे देखकर अमरसिंह ने चिल्लाने की कोशिश की। उस पर नवागन्तुक ने कहा-चिल्लाओ मत, चुप रहो।

अमरसिंह - तुम कौन हो ? क्या तुम मेरी जान लेना चाहते हो ? क्या चाचाजी ने तुम्हें भेजा है ? शीघ्र बताओ, तुम क्या चाहते हो ?

जगतसिंह - अमर ! तुम घबराओ नहीं, मैं तुम्हारा शत्रु नहीं हूँ। तुम्हारा मित्र हूँ, शुभ-चिन्तक हूँ।

अमरसिंह - थोड़ा हँसकर-मेरा मित्र ! इस संसार में मेरा कोई मित्र नहीं, कोई संबंधी नहीं है। मैं तो कुछ घण्टों का मेहमान हूँ। पहेली न बुझाईये। जल्दी बताओ-तुम कौन हो ? यहाँ किस काम से छिपकर खिड़की से कूदकर आये हो ? क्या तुम्हें पहरेदारों ने नहीं रोका ?

जगतसिंह - मैं जयपुर का राजकुमार जगतसिंह हूँ। तुम्हारा मामा हूँ। घबराओ नहीं, मैं तुम्हारी प्राण रक्षा के लिये आया हूँ। तुम्हें लेने आया हूँ। मुझे कल तुम्हारे मारे जाने की योजना का समाचार मेरे गुप्तचरों द्वारा मिला। इसलिये मैं तुम्हें बचाने आया हूँ।

अमरसिंह - आप जयपुर के राजकुमार हैं। मैं आपके बारे में सुन चुका हूँ। आप मेरे हितैषी हैं। पर आप मुझे बचा नहीं सकते। थोड़ी देर में ही

मेरी हत्या होने वाली है। आप इस कारागार के बाहर चले जाईये- मैं तो अभागा बालक हूं। मेरे लिये आप क्यों इतना खतरा उठाते हैं?

जगतसिंह - अभी लम्बी बातें करने का समय नहीं है अमर! तुम चाहते हो तो तुम्हारे प्राण बच सकते हैं। घबराओ नहीं। हिम्मत से काम लो। तुम वीर बालक हो, मैं तुम्हे जोधपुर के सिंहासन पर बैठाकर ही दम लूंगा। मेरी बात का विश्वास करो। चलो यहां से।

अमरसिंह - मेरे भाग्य में राज्य-सुख नहीं है। आपके प्रयत्न बेकार सिद्ध होंगे। मानसिंह ने इस प्रकार मेरी हत्या का प्रबंध कर दिया है कि भगवान भी शायद नहीं बचा सकता।

जगतसिंह - मैं इस भयंकर काली रात में कितनी दूर से कई खतरों का मुकाबला करता हुआ स्वय तुम्हें बचाने आया हूं। यदि संघर्ष की स्थिति आई तो यहां से तीन मील की दूरी पर उत्तर की ओर मेरी दस हजार सेना तैयार खड़ी है। मेरी सैन्य-शक्ति अभी मारवाड़ से कुछ कम है, अन्यथा मैं मारवाड़ पर आक्रमण करके तुम्हें बचाता और मानसिंह से बदला ले लेता। क्या मारवाड़ की रक्षा के लिये, वहां की प्रजा के सुख के लिये, तुम्हारे पिता के सिंहासन की प्रतिष्ठा की रक्षा के लिये तैयार नहीं हो? क्या मेरा सारा प्रयत्न व्यर्थ ही जायेगा? शीघ्र उत्तर दो राजकुमार?

अमरसिंह - मामाजी आप चाहते है तो मैं आपके साथ चलने को तैयार हूं। जल्दी करो यहां से भाग चले।

जगतसिंह तलवार से अमरसिंह की हथकड़ी काट देता है और उसे लेकर खिड़की के रास्ते से भागते है।

उसी समय दो पहरेदार चिल्लाये, तुम कौन हो?

जगतसिंह ने दोनों को अपनी तलवार से वहीं मौत के घाट उतार दिया और अमरसिंह को घोड़े पर बैठाकर द्रुत गति से भागकर अपने अन्य साथियों के साथ मिलकर जयपुर जाने में सफल हो गया।

---

# बारह

संसार में ईश्वर का न्याय वड़ा विचित्र है। मनुष्य अपनी स्वार्थ-सिद्धि के लिये क्या कल्पना करता है और ईश्वर उसके निर्णय को किस तरह बदल देता है। मानसिंह ने अपने भतीजे को मरवाने के लिये लम्बे समय से योजना बना रखी थी। लाखों रुपये भी खर्च किये किन्तु भगवान को उसकी रक्षा की चिन्ता थी इसलिए अमरसिंह बच गया। जगतसिंह की रक्षा-योजना सफल हुई। वह उसे जयपुर ले गया। बहुत दिनों तक अमरसिंह वहाँ आराम से रहा।

जब प्रातः सूर्योदय से कुछ पहले ही महाराजा मानसिंह को पता लगा कि कारागार के पहरेदारों को तलवार और गोली से मौत के घाट उतार दिया गया और कोई बहादुर व्यक्ति अमरसिंह को बचा कर उस शिविर-क्षेत्र मेड़ता के पास से ले जाने में सफल हो गये।

मानसिंह से मिलने के लिये अमीरखां और उनके बहुत से साथी साथ आये। एक विचार गोष्ठी में बैठकर सारी विकट भयानक दुर्घटना पर विचार-विमर्श किया गया। शिविर-क्षेत्र मे एक तूफान-सा आ गया। सभी लोग आश्चर्य कर रहे थे कि अमरसिंह किस प्रकार हथकड़ियाँ तोड़कर कई पहरेदारों को मारकर भागने में सफल हो गया। उसकी रक्षा करके ले जाने वाला दल किस राज्य का था, अनुमान लगाना भी कठिन हो गया। महाराजा मानसिंह को दौलतराव सिंधिया अथवा महाराजा जगतसिंह पर ही पूरा सन्देह था।

मानसिंह - अमीरखां, मुझे वड़ा आश्चर्य है कि सुरक्षा का इतना प्रबन्ध होते हुए भी अमरसिंह कैसे चला गया! कई पहरेदार भी मारे गये।

अमीरखां - मुझे इसका पहले ही शक था। अमर भाग गया। अमर में खुद में तो इतनी हिम्मत नही थी। इस काम में अमर के अलावा किसी वड़ी ताकत का हाथ है।

मानसिंह - मुझे जगतसिंह अथवा दौलतराव सिंधिया पर शक है। वह जगतसिंह से एक वड़ी रकम लेकर अमरसिंह को ले जा सकता है।

अमीरखां - मेरा भी यही अन्दाज है। इन दोनों में से कोई एक या दोनों की मिलीभगत से अमरसिंह बच गया। अगर यह घटना नही होती तो आज रात ही अमरसिंह का मैं और मेरे आदमी काम तमाम कर देते और आपके रास्ते का काँटा हमेशा के लिये दूर हो जाता। लेकिन महाराजा साहब तनिक भी चिन्ता नही करे आखिरकार अमरसिंह मेरे इस खन्जर से जरूर मारा जायेगा।

मानसिंह - जगतसिंह मारवाड़ में भयंकर विद्रोह फैलाने का गुप्त रूप से भरसक प्रयत्न कर रहा है। यह उसी के षड़यंत्र का परिणाम है अन्यथा अमर में इतनी शक्ति नही थी।

अमीरखां - लेकिन उसका बच निकलना आपके लिए मौत का पैगाम साबित हो सकता है।

मानसिंह - पहले आपकी और मेरी सेना के गुप्तचरों को जयपुर भेजकर अमरसिंह का पता लगाना चाहिये। फिर उसे प्राप्त करने का प्रयत्न करना चाहिये।

अमीरखां - जरूर, इसका एक हफ्ते में ही पता लगाकर फिर आगे की कार्यवाही करेंगे। अपना मकसद हमें किसी भी कीमत पर किसी भी खतरे का सामना करके जरूर हासिल करना है। इंशाअल्लाह हम बेशक कामयाब होंगे। मैं आज ही मेरे विश्वास-पात्र शमशेर खां के साथ चार पाँच जासूस भेजता हूँ। वे सपेरे कालबेलिये के भेष में जायेंगे और जयपुर या आसपास जहां भी अमरसिंह को छिपा रखा होगा, उसका पता लगाकर आयेंगे।

मानसिंह - और मैं अपने सेना-प्रमुख स्वरूपसिंह और चार-पांच गुप्तचरों को दौलतराव सिंधिया के शिविर में बघेरा के पास भेजता हूँ। वह आज-कल जयपुर महाराजा से खर्च हेतु कुछ राशि प्राप्त करने के प्रयत्न में है।

अमीरखां - अगर अमरसिंह के जगतसिंह के पास जयपुर में मिलने की पुख्ता खबर हमें अपने आदमियों से हासिल हो जाती है तो फिर हमें फौरन जयपुर पर हमला कर देना चाहिये। फिर हम जगतसिंह और अमरसिंह दोनों को एक साथ ही कैद कर वैर का बदला चुका देंगे।

मानसिंह - लेकिन हमारे पास इतनी बड़ी सेना कहाँ हैं?

अमीरखां - दौलतराव सिंधिया की तोपे जयपुर पर कहर ढा सकती है। मेरी सेना जयपुर की सेना को गाजर मूली की तरह काट कर फेंक देगी। फिक्र नहीं करे महाराजा साहब।

मानसिंह - आठ दस दिन की तैयारी के बाद हमें जयपुर पर भयंकर आक्रमण करना होगा। सिंधिया जहाँ भी हो, उसको तुरन्त मेड़ता के पास लाने का पूरा प्रयत्न करो। मैं जोधपुर की सुरक्षित सेना के हजारों सैनिकों को उनके हथियारों सहित बुलवा लेता हूँ। हमारे और जयपुर के महाराजा के भयंकर युद्ध के दो संभावित परिणाम निकलेंगे, एक तो यह सिद्ध हो जाएगा कि जोधपुर राज्य पर राज्य करने की क्षमता अमरसिंह में है या मानसिंह में। दूसरा नतीजा यह भी निकल जाएगा कि उदयपुर की सौभाग्य सुन्दरी कृष्णा कुमारी से विवाह करने की शक्ति जगतसिंह में है या मानसिंह मे। जाओ पूरी तैयारी करो। इस युद्ध में आपको और दौलतराव सिंधिया दोनों को जी-जान से हमारी ओर से लड़ना है और जीतना भी है। इसमें जितनी भी धनराशि सिंधिया को और आपको चाहिए, सब दी जाएगी। युद्ध का खर्च, हथियारों की प्राप्ति आदि में मेरे सब खजानों का मुह खुल जाएगा, आप जरा भी चिन्ता नहीं करें।

अमीरखां - अच्छा महाराजा साहब। सब इन्तजाम हो जाएगा। आप बेफिक्र रहें। एक हफ्ते में हम अमरसिंह का पता लगाकर आगे कार्यवाही जरूर करेगे।

मानसिंह भी उठ गये और अमीरखां और उनके साथियों को विदा किया। मानसिंह बहुत दुखी और चिन्तित अवस्था में अपने विश्राम-गृह में गये और आराम करने लगे। अमीर खा भी मेड़ता से दक्षिण मे जहाँ उसकी फौज ठहरी हुई थी, वहाँ अपने साथियों के साथ चला गया।

अमीर खां के पाँच-छः आदमी सपेरे का भेष बनाकर जयपुर गये। राजमहलों और जेलों के कई चक्कर लगाये। कई जगह उन्होने अपने सर्पों का खेल, जादू का खेल और हाथ की सफाई के काम बताये, जिससे जनता के साथ-साथ राज्य के सिपाही, चपरासियो और सेना के कुछ जवानो से परिचय प्राप्त किया। बहुत दूर नगर के बाहर पहले एक-दो दिन ठहरे थे, बाद में नगर के अन्दर ही किसी के यहाँ ठहर गये। अमरसिंह कहाँ है, इसका पता उन्होंने अन्ततः लगा लिया। वह महाराजा के विशेष

महल आमेर के किले में ठहराये गये थे। धीरे धीरे पता
गुप्तचर वापस अमीर खां की फौज में आ गये और पूरा हाल

उधर महाराजा मानसिंह ने अपने गुप्तचरों को दौलत
से मिलने भेजा था। जोधपुर के सात सैनिक और एक अधि
कपड़े पहनकर साधु सन्तों के भेष में जहाँ दौलतराव सिंधि
थे, एक सप्ताह में उनसे मिलकर वापस महाराजा मानसि
में आ गये। दौलतराव सिंधिया को पत्र लिखकर सारी बात
मानसिंह ने स्पष्ट करते हुए अपनी फौज को तुरन्त पुष्कर के
में आने का निमंत्रण दिया। सरूपसिंह राठौर तथा उनके
दौलतराव सिंधिया ने सब काम समय पर करने और थांव
की सहमति दे दी। महाराजा ने अमीर खा को
दल-बल सहित तैयार रहने का आदेश दिया। दौलतराव अप
साथ थांवला के पास आ गये और शिविर लगा दिये। उधर
भी अपनी फौज लेकर डेगाने के पास आ गये और वहाँ ताल
मैदान में अपने शिविर लगा दिये।

महाराजा जोधपुर की सेना जो मेडता के पास थी,
जोधपुर से सुरक्षित सेना भी मेड़ता आ गई। तीनों में घुड़स
गुप्तचरों के द्वारा संपर्क स्थापित हो गया। तीनों सेना के बड़े
युद्ध-योजना पर विचार करने को इकट्ठा हो गये। जयपु
अमीरखां के तथा जोधपुर के गुप्तचर गाँव-गाँव में होते हुए जय
वापस आ गये।

गुप्तचरों ने महाराजा जोधपुर को बड़े महत्वपूर्ण गुप्त
लाकर दिये। उन्होंने कहा कि जयपुर से दस हजार वीर सैनिक
तीन दिन बाद रवाना होगी और एक सप्ताह में वह पर्वतस
बाहर आकर ठहरेगी। वहाँ से फिर जयपुर की सेना का भयंकर
जोधपुर राज्य पर होगा। वैसे महाराजा जगतसिंह ने घोषणा
वह अपनी कुछ सुरक्षित सेना को लेकर जयपुर से भखरी ग्राम की
के दर्शन करने जा रहा है। माताजी का दर्शन केवल एक सुन्दर ब
पर वास्तव में उन्होंने मारवाड़ पर हमला करने का पक्का नि
रखा है। महाराजा जयपुर की सहायता के लिये बीकानेर मह

भी अपनी फौज के पांच हजार सैनिक भेजने का आश्वासन दिया है। साथ ही मारवाड़ जोधपुर के कुछ ठाकुर तथा सरदार जो सवाईसिह उम्मेदसिह (पोकरण) के समर्थक है, वे भी अमरसिह को मारवाड़ जोधपुर का महाराजा बनाने के उद्देश्य से जयपुर महाराजा की ओर से लड़ेगे। विस्तृत समाचार प्राप्त करके महाराजा मानसिह सारी स्थिति पर गम्भीरता से विचार करने लगे और भावी योजना, युद्ध की साज सज्जा, मोर्चे और आक्रमण के स्थान का निर्धारण करने लगे। युद्ध की योजना हेतु जयपुर जोधपुर राज्य की भूमि के मान चित्र रखकर महाराजा अपने सेनापतियों से विचार कर रहे थे। गंभीर विचार-विमर्श के पश्चात् युद्ध मानचित्र और कुछ निर्णय-विन्दु निर्धारित करके उठ गये और शिविरो मे जाकर विश्राम करने लगे।

कुछ दिनों पश्चात् गुप्तचर तथा सैनिकों ने महाराजा मानसिह को सूचना दी कि दौलतराव सिंधिया अपने चार पांच साथियों सहित आपसे मिलने का समय चाहते हैं। महाराजा तो उनके आने की प्रतीक्षा ही कर रहे थे। शीघ्र ही अपने पांच सैनिक और एक सेना अधिकारी को उन्हें मार्गदर्शन करके एकान्त दूर शिव मन्दिर के पास वने हुए स्थान पर वुलाने का आदेश दिया। महाराजा मानसिह भी अपने अंग-रक्षकों के साथ अलग शिविर में जाकर वैठ गये।

दौलतराव सिंधिया ने अपने साथियों सहित प्रवेश किया। महाराजा और उनके सेनाधिकारियों ने उनका स्वागत किया। अभिवादन कर यथास्थान वैठा दिया।

महाराजा मानसिह ने दौलतराव की तरफ देखकर कहा - कहिये मराठा सरदार। आपके क्या हालचाल हैं ?

दौलतराव - आपके आदेशानुसार मेरी फौज थांवला और भैरुंदा के बीच में शिविरों में ठहरी हुई है। कुछ जरूरी बातें और शर्तें अग्रिम रूप मे युद्ध में भाग लेने के पहले तय करनी थी, इसलिये आपसे मिलने आया हूं।

मानसिह - कहिये और देश के क्या विशेष समाचार हैं ?

दौलतराव - वहुत वुरे, भयंकर समाचार है।

मानसिह - मैं अपनी फौज के सहित सिर पर कफन वांधकर जोधपुर से निकला हूं, इससे अधिक क्या भयंकर समाचार होंगे!

दौलतराव - नहीं, यह बात नहीं। मेरे गुप्तचरों द्वारा मुझे मालूम हुआ है कि मेवाड़ के राणा भीमसिंह ने अपनी दयनीय स्थिति से उबरने के लिये अजीतसिंह को जो मेवाड़ दीवान (महामंत्री) है, अंग्रेजी फौज के मुखिया से मिलने और सैनिक सहायता प्राप्त करने के लिये कलकत्ता भेजा है।

मानसिंह - कुछ रुष्ट होकर-यह तो बड़ा अच्छा है मराठा सरदार। मेवाड़ और जयपुर राजघरानों के साथ गोरी जाति के अंग्रेजों के भाग्य का फैसला भी हो जायेगा।

दौलतराव - नहीं महाराजा साहब ! अंग्रेजों से युद्ध करने का अभी समय नही आया है ! उनके तोपखानों और प्रशिक्षित सेना का मुकाबला करना बहुत कठिन है।

मानसिंह - अब आप भी बड़े आश्चर्य की बात कर रहे है। समय क्यों नही आया ? जनरल लेक ने होलकर की शक्ति तोड़ दी। इस तथ्य को क्या आप भूल गये हैं ! अब अंग्रेजों की शनि दृष्टि आपकी ओर लगी हुई है। क्या आपको मालूम नही है !

दौलतराव - महाराजा साहब ! अंग्रेजों के पास बड़ी भयंकर तोपे है, नई बन्दूकें हैं, पिस्तौलें हैं। छोटी दूर मारक बन्दूकें है। हमारे पास तलवार, कटार और धनुष-बाण हैं। उनके सामने हमारी सेना ठहर नही सकती है। अगर आप हमारी फौज के खर्च के लिये पचास लाख रुपये देने को तैयार है, तो जयपुर के विरुद्ध भावी युद्ध मे आपका साथ दे सकते है। अन्यथा अब हम किसी से युद्ध नही करेंगे वापस ग्वालियर की ओर जाने की तैयारी कर चुके हैं।

मानसिंह - सिंधिया सरदार ! मुझे यह सुनकर बड़ा दुख हुआ कि आप अंग्रेजी सेना से डर गये। मुझे याद है कि आपने स्थान स्थान पर अंग्रेजों को भारत के बाहर निकालने की घोषणा की थी। क्या इसी हिम्मत के बल पर आपने ये गर्जना की थी ? आपने यह भी कहा था कि अमीरखां की खौफनाक फौज से अंग्रेज डरते हैं। फिर वे राजपूताने में राजपूतों, पठानों और मराठो की सम्मिलित शक्ति के सामने आने की हिम्मत कैसे करेंगे ? मेरा ऐसा अनुमान है कि चतुर अंग्रेज सेनापति हमारी देशी राज्यों की आपसी लडाई के बीच मे भी नही पड़ेगे।

दौलतराव - आप भ्रम में है। गोरे हमेशा भारतवासियों की परस्पर फूट, झगड़ों की ताक में ही रहते है। कभी कभी वे एक का पक्ष लेकर दूसरे से

लड़ते हैं। कर्नाटक युद्ध, खास मैसूर का युद्ध और मराठा युद्ध में ऐसा ही हो चुका है। आज अगर पेशवा, भौंसले, सिंधिया, होलकर की शक्ति संगठित होकर एकता के सूत्र में बंध जाय तो कोई भी शक्ति उनको परास्त नहीं कर सकती।

मानसिंह - इस बात का दुःख है कि आपको यह ज्ञान इतने लम्बे समय के पश्चात् प्राप्त हुआ, आपने धन-दौलत के लालच में मेवाड़, जयपुर और जोधपुर राज्यों के बीच में फूट डाली, युद्धों का सृजन किया। आपने हिन्दू होकर दूसरे हिन्दू राज्यों को जन-धन और प्रतिष्ठा की हानि पहुचाई। राजकन्या कृष्णाकुमारी का लालच देकर उत्तेजित किया। कृष्णाकुमारी से विवाह की मुझ में उत्सुकता नही थी। आपने अपना उल्लू सीधा करने के लिये मेरी भावनाओं और विपुल धनराशि के साथ खिलवाड़ किया। अब मुझे अंग्रेजों का डर बतलाकर निरुत्साहित करना चाहते हैं। जयपुर के विरुद्ध युद्ध करने और अमरसिंह को प्राप्त करने के आह्वान निमंत्रण का मूल्य आप मुझसे पचास लाख रुपया मांग रहे हैं? आपको शर्म आनी चाहिये। आप अपने सिद्धान्तों के पक्के नहीं हैं। जो धन-साधन दे दे उनका पक्ष लेते हैं। आप मे मानवता भी नही है।

दौलतराव - महाराज मानसिंह! आप मेरा सरासर अपमान कर रहे है। ये ताने तीरों से भी अधिक तीक्ष्ण हैं। आप मेरा ही नहीं, भारत की समस्त मराठा-शक्ति का अपमान कर रहे है। हमने ही मुगलों की शक्ति को नष्ट किया। समस्त उत्तरी भारत में हमारी धाक है। आपकी स्वार्थ-पूर्ति के लिये मैंने आपका साथ दिया है। अब मैंने निश्चय किया है कि मैं आपकी तरफ से नहीं लड़ूंगा। अब मैं आपकी सेना के साथ मिलकर किसी से युद्ध नहीं करूंगा। यह मेरी भीष्म प्रतिज्ञा है! आप अपने अपमानजनक शब्दों को वापस लीजिये।

मानसिंह - सिंधिया सरदार-आप वापस नही जा सकते। आपने मुझे हर हालत में मेरी फौजी सहायता करने का वचन दिया था। मेरे सेनाधिकारी स्वरूपसिंह के द्वारा आपने मेरे पत्र का उत्तर भी लिखित में भेजा था जिसमें जयपुर राज्य के विरुद्ध युद्ध करने का आश्वासन दिया है। अब आप स्वयं पीछे कैसे हट सकते हैं? क्या आप गोरों से डरकर [illegible] चाहते है? आप अब नहीं जाऐंगे। साथ मिलकर जयपुर से, [illegible] और अंग्रेजों से लड़ेंगे। अगर विजय प्राप्त हुई तो हम सब [illegible]

के धन का उपभोग करेंगे और यदि रणभूमि में मारे भी गये तो देश की रक्षा में हमारा वलिदान माना जाएगा। अंग्रेजों को भारत के वाहर भेजने के इतिहास में हम नींव के पत्थरों का काम करेंगे।

दौलतराव - मैं आपकी चिकनी-चुपड़ी वातों में आने वाला नहीं हूँ। मेरे निर्णय को कोई वदल नही सकता। समस्त मराठा फौज कल प्रातःकाल ही कूच कर जायेगी। मेवाड़, जयपुर, जोधपुर की लड़ाई घरेलू मामला है, व्यक्तिगत सघर्ष है। मराठे अव इसमें पड़ना नही चाहते।

मानसिंह - नीच! कायर! मेरे साथ यह विश्वासघात!

दौलतराव - मानसिंह! जरा होश में आओ। नही तो सिर्फ दौलतराव ही आपके लिये काफी है। मेरा अपमान करके मुझे उत्तेजित मत करो वरना.......

मानसिंह - वरना तुम क्या कर लोगे?

अगर तुममें शक्ति है तो निकालो अपनी तलवार। सावधान! दौलतराव! आज इस एकान्त शिविर मे, निशा की निस्तब्धता में, इस वात का निर्णय हो जाएगा कि किसकी तलवार में शक्ति अधिक है? आओ तलवार निकालो और करो युद्ध।

दौलतराव - राजा साहव।

मानसिंह - खामोश! तलवार निकालो। देखते क्या हो? युद्ध करो। (दोनों जोश में आकर तलवार खीचकर एक दूसरे पर आक्रमण करते है, युद्ध! युद्ध!!)

अमीरखां अचानक उस शिविर में आ जाता है और चिल्लाकर कहता है-"वन्द करो! वन्द करो तलवारवाजी। मानसिंह दौलतराव की अपेक्षा युवा है। शरीर मे जवानी का जोश है, वीर योद्धा है। अतः अपनी पूरी शारीरिक शक्ति का जोर लगाकर उसने दौलतराव की तल-वार पर कस कर वार किया। भीषण आघात से दौलतराव के हाथ की तलवार पृथ्वी पर गिर पड़ती है। सिंधिया निहत्था होने के कारण लज्जा का अनुभव करता है, वह आश्चर्य-चकित होकर कुछ झेंपने लगता है। मानसिंह क्रोध में लाल आंखे निकाल कर चिल्ला कर कहता है-दौलतराव सिंधिया! संभालो तुम्हारी तलवार, वह तुम्हारे वलशाली हाथों में कहाँ है? वह मिट्टी चाट रही है। क्या इसी भुजवल की शक्ति से तुम गोरों

को भारत के बाहर करने का दम भरते थे ? तुमने अपने छल-कपट और गीदड़ भभकी से ही राजपूताने के राजाओं का शोषण किया है। तुम विश्वासघाती और दोगले हो। मैं तुम्हें सख्त आदेश देता हूँ कि तुम तुरन्त मेरे मारवाड़ (जोधपुर) राज्य की सीमा से बाहर निकल जाओ और अपनी फौज भी साथ ले जाओ। सेना के खर्च के लिये तुम्हें तांबे का एक पैसा भी नहीं दिया जायगा। विलम्ब का परिणाम प्राणघातक सिद्ध होगा। यदि मानसिंह और उसके साथियों में सच्ची वीरता होगी तो वह मराठों की सहायता के बिना भी युद्ध कर सकता है। मानसिंह अपनी मान-मर्यादा के लिये या तो विजय पायेगा अथवा रणभूमि में लड़कर वीरगति प्राप्त करेगा। किन्तु तुम्हारे जैसे धोखेबाज लोगों के सामने युद्ध सामग्री या सहायता की भिक्षा नहीं मांगेगा।

दौलतराव - राजा साहब ! आपने मेरा अपमान किया है। मैं मेवाड़, मारवाड़ (जोधपुर) और जयपुर तीनों को परास्त करूंगा। कुछ और समय की प्रतीक्षा कीजिये। मेरे अपमान का बदला ब्याज-सहित चुकाया जाएगा। कुछ समय की प्रतीक्षा और कीजिये मानसिंह !

मानसिंह - मैं तुम्हारी कोई बकवास सुनना पसन्द नही करता। प्रतिवाद न करो. सिंधिया। तुम सेना सहित तुरन्त ही मेरे राज्य की सीमा के बाहर बारह घण्टे में अविलम्ब चले जाओ। चले जाओ। दोनों आँखों मे लाल लाल रोष, जोश और आक्रोश में पूरा भरा हुआ दौलतराव सिंधिया चला जाता है।

अमीरखां - अभी अभी समाचार मिला है कि मारवाड़ की राजधानी जोधपुर में बगावत हो गई है। नये राजा की नियुक्ति के बारे में अभी दो दलों में संघर्ष चल रहा है।

मानसिंह - मैं जानता था अमीर खां कि मेरे इधर आते ही जीवन ज्वाला धधक उठेगी। जोधपुर से हटकर मैंने बड़ी गलती की है। कौन है इन बागियों का नेता ? कौन है ?

अमीरखां - राजा साहब ! सुना है कि जयपुर का राजा जगतसिंह छिपे रूप में बागियों की मदद कर रहा है। उसका दल मारवाड़ में बड़ा काम कर रहा है। आपकी प्रजा या रियाया आपको राजगद्दी से उतारकर अमरसिंह को जोधपुर की राजगद्दी का मालिक बनाएगी, यह निश्चित है।

मानसिंह - यह कभी नहीं होगा-अमीरखां। राजगद्दी मेरी है और सदैव मेरी ही रहेगी।

अमीरखां - इसका एक ही इलाज है?

मानसिंह - क्या है?

अमीरखां - जल्दी से जल्दी अमरसिंह का खून कर देने में आपकी भलाई है।

मानसिंह - अब यह नहीं हो सकता है। अमर अब जगतसिंह की सुरक्षा में है। उसके चारों तरफ सैंकड़ों पहरेदार है।

अमीरखां - सब कुछ हो सकता है। अमर का खून जल्दी ही जरूर होगा। मैं उसका खून करू गा। जाता हूँ महाराजा मानसिंहजी। मै जयपुर के राजमहलों में जाऊंगा। जब मै वापस आपके पास आऊंगा तो मेरे एक हाथ में तलवार होगी और दूसरे हाथ में अमरसिंह का सिर होगा। आप यकीन कीजिये।

मानसिंह - अमीरखां। .. नहीं नही अमरसिंह का तुम खून मत करो। अमर की हत्या करना अच्छा नही है। सचमुच में देखा जाय, न्याय के आधार पर देखा जाय तो मारवाड़ के राज्य का वही एकमात्र अधिकारी है, हकदार है, मालिक है। अमीरखां-क्यों?

ये सिंहासन उसी का है, मेरा नहीं है, मै वैसे ही जवरदस्ती से मालिक बन बैठा हूँ, अमीरखां।

अमीरखां - आप जज्बात की बातें कर रहे है। यहां दिल की भावना नहीं कठोर हृदय करके अपनी रक्षा की चिन्ता करना चाहिये। अमरसिंह आपका दुश्मन है। वह आपकी जान का दुश्मन है। आप उसे तख्तोताज देकर भी बच नहीं सकते हैं। मारवाड़ की विद्रोही प्रजा आपकी हत्या कर देगी। महाराजा साहव, आप गम्भीरता से सोचकर जल्दी बताइये, आप क्या चाहते है? तख्त या हत्या? मारवाड़ का विशाल राज्य या मौत?

मानसिंह - (कुछ विक्षिप्त-सा होकर) ओह, अमीर खां, तुम्हीं बताओ-मुझे क्या करना चाहिये। मैं तो किसी निर्णय पर नही पहुंच सकता हूँ। तुम्हीं बताओ मुझे क्या करना चाहिये?

अमीरखां - आप मारवाड़ के राजा हैं, और राजा ही रहेंगे। अमर छोटा बच्चा नहीं, वह आपका दुश्मन है। उसकी मौत मेरे हाथ से ही होगी। आप शिविर में जाकर आराम कीजिये।

मानसिंह गंभीर और चिन्तित अवस्था में दुखी हो जाते हैं।

अमीरखां - राजा साहब मैं अमरसिंह की खबर लेने जाता हूँ।

मानसिंह - अमीरखां! अमीरखां! ठहरो! मत जाओ, अमरसिंह की हत्या नहीं करना है।

अमीरखां शीघ्र चला जाता है।

महाराजा मानसिंह अमीरखां की तरफ देखते ही रह जाते है। अमीरखां घोड़े पर बैठकर अपनी फौज से मिलने के लिये शीघ्रता से चला जाता है।

## तेरह

समय बड़ा बलवान होता है। जब वह अनुकूल होता है तब किसी देश, किसी परिवार, किसी राजवंश की उन्नति पर उन्नति होती है और होती ही चली जाती है। जब समय प्रतिकूल होता है तो लाख प्रयत्न करने पर भी यदि पराभव, पराजय अवश्यंभावी है तो होकर ही रहती है। कोई समय था कि महाराणा सांगा का प्रभाव चरम सीमा पर था। राजस्थान के बाहर दिल्ली, आगरा, पंजाब तक उनकी वीरता की धाक थी। बाबर जैसे विदेशी सेनापति से टक्कर लेकर उसका मुकाबला किया था, फिर महाराणा प्रताप ने सम्राट अकबर के प्रत्येक आक्रमण को विफल कर दिया था। मेवाड़ का हिन्दुआ सूर्य अपनी प्रखर तेजस्विता से चमक चुका था। इतिहास इसका साक्षी है।

जब पराभव काल आता है तो सफलता की बातें स्वप्न मात्र रह जाती हैं। उनका अस्तित्व नाम मात्र के लिये रह जाता है। जिस मेवाड़ की वीरता की उत्तरी भारत के राजाओं में इतनी धाक थी; जिनके नाम से योद्धा थर्राते थे; जिसके वैभव काल में घी के दीपक जलते थे; सुख,

समृद्धि प्रचुर मात्रा में बिखरी पड़ी थी; कवि-चारण जिनकी विरुदावली गाते थे; जो अन्य राज्यों को सैनिक सहायता देकर भारत माता के अंगों की रक्षा में सहायता करते थे, उन्नीसवी शताब्दी के प्रारम्भिक वर्षो में वही मेवाड़ राज्य सैनिक शक्ति, धन-दौलत से इतना क्षीण हो गया कि उसे अपनी स्वयं की रक्षा के लिये भी दूसरों की सहायता की आशा करनी पड़ती थी। ऐसी ही स्थिति में जब मेवाड़, जयपुर, जोधपुर, दौलतराव सिंधिया और कुख्यात डाकू अमीरखां के आतंक से भयभीत था, अपनी रक्षा में असमर्थ हो गया - अपने धर्म और स्वजातियों के लोगो की रीति-नीति से परेशान होकर मेवाड़ को अग्रेजी फौजों की सहायता की ओर ताकने की आवश्यकता महसूस हुई। जिस मेवाड़ के शासकों ने दिल्ली और आगरा में कदम नहीं रखने की सौगन्ध खाई थी, उसी वीर मेवाड़ भूमि के महाराणा भीमसिह ने लाचारी के समय अपने वीर चूण्डावत सरदार तथा महामत्री अजीतसिह को मेवाड़ की रक्षा के लिये अग्रेजी फौजी सहायता प्राप्त करने हेतु तत्कालीन भारत में अग्रेजों की राजधानी कलकत्ता भेजा। अजीतसिह ने वहाँ जाकर तत्कालीन गवर्नर जनरल नोक्स से भेंट की और उनसे मेवाड़ पर छाये युद्ध के बादलों के भीषण संकट से बचाने और प्रतिष्ठा की रक्षा के लिये फौजी सहायता प्राप्त करने की आकांक्षा से विस्तार से बातचीत की जो इस प्रकार है -

जनरल नोक्स - व्हाट ? प्राइम मिनिस्टर आफ दी महाराणा आफ मेवार ? यू मीन महाराना भीमसिह ? क्या मटलब ? आप महाराना का मिनिस्टर ? हम समझा।

अजीतसिह - आपने ठीक समझा जनरल साहब। मैं मेवाड़ के महाराणा भीमसिह का मंत्री हूँ। मेरा नाम अजीतसिह है।

जनरल नोक्स - मिस्टर अजीटसिह, आप इधर काहे आना मांगटा ? मेरा मटलब हय - याने हम पूछटा, आपको हमसे क्या मांगटा है ? व्हाट ब्रिंग्ज यू हियर ? व्हाट इज यूवर मेन आब्जेक्टिव ? टू टाक विद अस ?

अजीतसिह - जनरल साहब, महाराणा इस समय घोर संकट में हैं। वे आपकी फौजी मदद चाहते हैं।

जनरल नोक्स - मडड ? यू मीन हैल्प ? कैसा मडड ?

अजीतसिह - मेवाड़ पर सिंधिया और मारवाड़ की फौज हमला करने

वाली है। सिंधिया मेवाड़ से बार-बार लाखों रुपयों की मांग करता है। कई बार उसे रुपये दे भी चुके परन्तु वह मानता ही नहीं है।

जनरल नोक्स - सिन्धिया ? यू मीन डोलट राव सिन्धिया ? मराठा कमाण्डर ओ, आई नो हिम। हम सुना है उसके पास भारी फौज हय। वी हैव लर्न्ट दैट ही इज ए ब्रेव मैन। उशने सारा राजपूताना क्रश किया बटाटे। ही हैज क्रम्बल्ड दी होल आफ राजपूत स्टेट्स।

अजीतसिंह - आपने बिल्कुल ठीक सुना है। राजस्थान के लिये वह शनि सिद्ध हुआ है।

जनरल नोक्स - शनि ? व्हाट्स इज दैट ? शनि क्या होटा हय ?

अजीतसिंह - शनि का अर्थ हुआ शनि - अर्थात् वह बहुत भयकर है - खतरनाक है।

जनरल नोक्स - यू मीन - डेंजरस - खटरनाक है।

अजीतसिंह - जी हाँ। आपने ठीक समझा। सिंधिया अपनी फौज के साथ मारवाड़ के राजा मानसिंह से मिल गया है। मानसिंह महाराणा की लड़की से शादी करना चाहता है लेकिन महाराणा उसके साथ कृष्णा की शादी नहीं करना चाहते हैं।

जनरल नोक्स - यू मीन दि राजा आफ मारवाड़-जोधपुर डिजायर्स टू मेरी दि प्रिंसेस आफ मेवार बट दि महाराना अपोजेज दि आइडिया। मेरा मटलब - महाराना भीमसिंह ऐसा मेरिज पसन्द नाहीं करटा।

अजीतसिंह - जी, यही बात ठीक है।

जनरल नोक्स - बट, वन थिंग, मानसिंह इज दि महाराजा आफ मारवार। बराबर का राजा हय। फिर भी महाराणा काहे को मंजूर नहीं करटा ?

अजीतसिंह - मानसिंह ने अपने भतीजे को कैद कर लिया है और अन्याय पूर्वक गद्दी पर बैठा है। सचमुच राज्य पर उसका हक नहीं है।

जनरल नोक्स - आई सी ! लेकिन राजा इज राजा, आफ्टर आल मानसिंह रूल्स मारवार। मेरा मटलब राजा टो मानसिंह हय।

अजीतसिंह - जी हाँ, लेकिन महाराणा ने शादी का वचन जयपुर के राजकुमार जगतसिंह को दे दिया है।

जनरल नोक्स - यू मीन प्रिंस आफ आम्बेर, जयपुर स्टेट - प्रिंस जगतसिंह।

अजीतसिंह - जी हाँ।

जनरल नोक्स - ओह् माई गॉड। मोस्ट काम्पलिकेटेड केस, दी होल आफ राजपूताना कम्स इन दि पिक्चर! मेरा मटलब मामला बड़ा गड़बड होटा। मेवार, जयपुर और जोधपुर आपस में लड़ता और (फिर हसकर) मराठा कमाण्डर इसका मजा लेता। अपना प्राफिट बनाटा।

अजीतसिंह - एक और खतरनाक पुरुष है जो राजस्थान में गृहयुद्ध की आग को भड़काता रहता है।

जनरल नोक्स - हू इज दैट इण्ट्रेस्टिंग फेलो? कौन है वह ऐसा आदमी जो लड़ाता है?

अजीतसिंह - उसका नाम अमीरखां पठान फौजी सरदार है।

जनरल नोक्स - दैट फ्यूरियस पठान - आई मीन दैट डेविल अमीर खां इज नाऊ देयर? हमने उसका नाम सुना है। उसके पास डाकू का फौज है। गांव-गांव को लूट करटा और खून बहाटा हय। प्लण्डर एण्ड ब्लड शेड - दिस इज हिज प्राफेशन। हम एक बार उससे जरूर मिलेगा। अगर हमको ब्रिटिश गवर्नमेन्ट हुकुम डेगा - टो हम उसको गोली से मारेगा। ही इज ए ब्लड थर्स्टी - रफियन।

अजीतसिंह - मेरा अनुमान है कि अब आप मेरी सारी बातें समझ गये होंगे, महाराणा आपकी सहायता चाहते हैं।

जनरल नोक्स - मिस्टर अजीटसिंह, इसमें सोचना होगा। हमारा गवर्नर जनरल लार्ड मिण्टो से आपका मिलना जरूरी है। टब आपका काम होने सकेगा। यू मीट हिज एक्सेलेंसी दि गवर्नर जनरल आफ इण्डिया लार्ड मिण्टो। ही इज माई बॉस। हम तो उसका माटहट। तभी एक प्रहरी ने आकर सूचना दी कि गवर्नर जनरल इज कमिंग दिस वे।

जन. नोक्स - राइटो। हाँ मि. अजीटसिंह, बड़ा लाट साहब, अभी यहाँ आने वाला है। हम उससे मिलेगा। राजपूताने का सब समाचार बतायेगा। उसके बाद हम आपको बोलेगा। आप भी उस रूम में आराम करेगा, हम आपसे फौरन मिलेगा। प्लीज गो दैट वे इन दि रूम।

अजीतसिंह - जनरल नोक्स । आपने हमारी सब बात सुन लिया । अब आप मेरी तरफ से गवर्नर जनरल साहब से निवेदन करके फौजी मदद की बात कर लीजिये । महाराणा साहब भी आपके एहसानमन्द होंगे, मैं उस कमरे में जाता हूँ । फिर आपके आने का इन्तजार करूंगा ।

अजीतसिंह कमरे में जाकर आराम करते है ।

जन. नोक्स - पुअर महाराना । आई फील सॉरी फॉर हिम । वह कुछ *सोच ही रहा था कि गवर्नर जनरल लार्ड मिन्टो उस बडे कमरे (हाल) में* प्रवेश करते है । जनरल नोक्स एकदम स्फूर्तिपूर्वक उनको फौजी सलामी देते हैं ।

लार्ड मिन्टो - वैल, जनरल नोक्स, हम सुना मेवार का महाराना हमारा फोर्ट में आया है । व्हाट इज ही वान्ट्स ?

नोक्स - योर एक्सिलेन्सी । मेवार का महाराना हमारा फौजी मडड मांगता । मेवार हैज बीन सराउण्डेड बाई हर एनिमीज सिंडिया ऐंड दी महाराजा आफ मारवार ।

लार्ड मिन्टो - सिंडिया ? हमारा पहले जार्ज बार्लो के टाइम में सिंडिया से एक ट्रीटी हुआ । हम सिंडिया के अगेन्स्ट नही जाने सकता ।

जन. नोक्स - वट सर, सिंडिया हैज बीन कलैक्टिंग ह्यूज ट्रूप्स ऐण्ड वार मेटेरियल एगेंस्ट दी ब्रिटिशर्स, वह हमको इंडिया के बाहर करने की तैयारी करटा है ।

लार्ड मिन्टो - आई नो जनरल नोक्स । सिंडिया हैज साइन्ड ए ट्रिटी विथ अस । वट ही कैन बिट्रे एनी टाइम । लेकिन हम उससे डरटा नही है । दी ब्रिटिश आर्म्ड फोर्सेज इन इण्डिया कैन क्रश हैंड्रेड्स आफ सिंडिया । आप वजह जानता ?

जनरल नोक्स - नही श्रीमान् (सर)

लार्ड मिंटो - वान्ट आफ यूनिटी अमंग इन्डियन रूलर्स । हिन्दुस्तान में एकटा नहीं है । नो एकटा । हमारा सक्सेस का सबसे बड़ा वजह भी यही है । गोरी फौज ने मैसूर को जीत लिया । ब्रेव-ह्यायडरआली-दी लॉयन ऑफ मैसूर । ही शाउटेड फार यूनिटी, लेकिन सबने उसको धोका दिया हायडर का अपना बेटा नाम भूलटा-यह प्रिंस करीम दुश्मन से जा ।

टब हायडर मारा गया। सेम विद टीपू सुल्तान। यंग-मैन वाज किल्ड एट दी वेरी गेट आफ श्रीरांगपट्टन। आज मैसूर पर ब्रिटेनिया का झण्डा फहराटा। मराठा बहादुर हय, पेशवा, भोंसला, होल्कर एँड सिंडिया। सब मिलकर यहेगा टो जीत नहीं सकटा। बट यह इंडिया है। एक भाई को दूसरा छुरा मारटा, दुश्मन को सलाम करटा, यही हमारे फेवर में हय।

जन. नोक्स - हम समझा, योर ऐक्सिलेंसी, राजपूत स्टेट्स का हाल बहुट खराब हय। दे आर आलवेज फाइटिंग विद ईच अदर।

लार्ड मिंटो - (हँसते हुए) हमारे वास्ते यह गुड सॉइन हय। एक राजा दूसरे राजा को जान से मारेगा टो हम यहां राज करेगा। इस टरह हमको होल इंडिया को रूल करना हय टो हमारा हुकुमट होगा। धीरे धीरे होल ऑफ इंडिया विल बिफोर दि किंग आफ इंगलेण्ड (घूम हँसता है)

जन. नोक्स - सर मेवार का मिनिस्टर आपसे भेंट करना मांगटा। आपका क्या हुकम हय ?

लार्ड मिंटो - हम उनसे मिलेगा। जरूर मिलेगा उनको लाना मांगटा हय। जनरल नोक्स फिर सलाम करके वहां से चले जाते है। यह खुद अजीतसिंह को बुलाने दूसरे कमरे में कुछ दूरी पर जाते है।

लार्ड मिंटो – करीब पचास बरस पहले कर्नल क्लाइव नवाब सिराजु-दोल्ला को पस्ट किया था। फिर वारेन हैस्टिंग्स मुगल बादशाह को ढक्का दिया। कार्नवालिस टीपू को हराया, वैलेजली कंपचर्ड मैसूर स्टेट, फिफ्टी ईयर्स से गोरा लोग हुकुमट करने लगा हय (हँसता है।) जनरल नोक्स कुछ देर बाद ही अजीतसिंह के साथ लार्डमिन्टो के कमरे में प्रवेश करता है, दोनों लार्ड मिंटो को अपने अपने तरीके से अभिवादन (नमस्कार) करते है।

लार्डमिन्टो मुस्कराकर अजीतसिंह की तरफ देखते हुए कहते हैं-हम बहुट खुश ! मेवार का मिनिस्टर हम अंग्रेज का वेलकम करटा। महाराना कैसा माफिक ?

अजीतसिंह - वे बड़े कष्ट में हैं, गोरी फौज से जल्दी मदद चाहते हैं।

लार्ड मिंटो - च ... च .. च ... । वेरी सॉरी ! पुअर महाराना । मिस्टर अजीतसिंह, हम मेवार का मडड करेगा । लेकिन उस काम में कुछ टाइम लेगा । आप जानटा, हम कानून से काम करेगा । हमारा मालिक विलायट में हय । उससे हुकुम लेना होगा । आप जानता हम अंग्रेज लोग डैसी राज के झगड़े में नही पड़ने मांगटा, आपका झगडा आपस का है । पहले आप लड़ेगा, फिर आपस में भाई-भाई वन जायगा । लेकिन हम गोरा लोग दुश्मन हो जायेगा । इससे हमारा ब्रिटिश सरकार को वोलो क्या फायदा होगा ?

अजीतसिंह - मैंने सुना साहव कि शान्ति और अमन-चैन स्थापित करना आपका ध्येय है । अगर आप मेवाड़ की जल्दी सहायता करेंगे तो हमारे राजपूताना की धरती पर खून-खराबा नही होगा । हमारे हजारों आदमी मरने से वच सकते हैं । आपकी फौजी सहायता की आशा में मैं इतनी दूर से आया हूँ ।

लार्ड मिंटो - यू मीन वी विल स्टाप ब्लड शैड । यू आर राइट । वट मेवार की डोस्टी से हमारा गोरा पल्टन मरेगा । हम सव जानटा, डैजर्ट आफ राजपूताना इज टू हॉट फॉर दि ब्रिटिश ट्रुप्स । राजपूताना का वालू वाला रेत का जमीन गोरा सिपाही के लिये आग जैसा हय जिसेस क्राइस्ट !

अजीतसिंह - तो साहव ! मैं महाराणाजी को क्या जवाव दूंगा !

लाडमिन्टो - मि. अजीतसिंह-हम जल्दी विलायत की सरकार से हुकुम लेकर आपका मडड वास्ते पल्टन भेजेगा । यू केरी ऑन दि वेटल, आप लड़ाई जारी रखेगा, हिम्मट के साथ । दुश्मन को फंसाये रखेगा । हम महाराना को जानटा । दी लॉइन आफ अरावली । अरावली का शेर राना परटाप का नाम वहुत फेमस हय । उसके खानडान का महाराजा भीमसिंह हय । ए ब्रेवमैन ! हम महाराना को इज्जत डेगा । उसका दुश्मन को खटम करेगा । आप उनको हमारा सलाम कहना, फिकर नॉट करना, सव वाट उनको वटायेगा । समझा ?

अजीतसिंह - सव समझ गया गवर्नर जनरल-साहव ! मैं उनको सव वातें कह दूंगा कि जल्दी ही गोरी फौज मेवाड़ की मदद के लिये पहुंचने वाली है । आपको इसके लिये वहुत वहुत धन्यवाद । अच्छा । हाथ मिलाते हुए नमस्कार करके अजीतसिंह उनसे विदा लेता है ।

लार्ड - गुडवाई मि. अजीटसिंह ।

अजीतसिंह वहाँ से वाहर आ जाता है और फिर मेवाड़ आने के लिये अपने कुछ साथियों सहित रवाना हो जाता है । अजीतसिंह के कमरे में से जाने के वाद लार्ड मिंटो और जनरल नोक्स वातचीत जारी रखते हुए विचार विमर्श करते हैं ।

जन. नोक्स - सर, आई एम ग्लैड टू हीयर दैट यू हैव एग्रीड टू सैंड ट्रूप्स टू मेवार । आप गोरा पल्टन भेजेगा यह बहुट खुशी की वाट है ।

लार्ड मिंटो- नो, नो, नो । यू आर रॉंग जनरल नोक्स । आप समझा नाही । हम गोरा फौज मेवार नाही भेजेगा ।

जन. नोक्स - सर, लेकिन आपने अभी कहा अजीतसिंह को ।

लार्ड मिंटो - हम झूट केटा, अजीटसिंह यही वाट राना को कहेगा । राना दुश्मन से लड़ेगा-खूब लड़ेगा और वो सव आपस में लड़ लड़ कर खुड मरेगा । सब राजपूत स्टेट आपस में लड़ेगा-मरेगा । टव हम आसानी से राजपूताना को अपने पैर पर झुकायेगा । आई मीन इंगलैण्ड का गुलाम वनायेगा । हमको बिना लड़ाई, बिना गौरी पल्टन के मरना ओनली मेवार स्टेट नाही सव स्टेट हमारा अंडर में होगा ! हमारा " हमारा (खुशी से हँसता है ।)

जन. नोक्स - आई सी ! सचमुच आपका सोचना इंग्लैण्ड के बहुट फायदे की वाट है । आपका आइडिया सर वहुट गहरा है ।

लार्ड मिन्टो - जनरल नोक्स । हिन्डोस्तान में एकता मट होने दो । डिवाइड ऐंड रूल । मैक दी इंडियन्स फूल । उनको आपस में लड़ने दो । और ट्रिक से आपस में लड़ाओ इसमें हमारा फायडा हय । हम अंग्रेज का भलाई हय । हम डेखटा-सारा हिन्डोस्तान पर हमारा यूनियन जैक-ब्रिटिश का झण्डा लगाना सोचटा । सिख, मराठा, राजपूट, मुगल, जाट, पठान सब अग्रेज कौम को सलाम करेगा । दुनिया में हमारा राज बहुत बड़ा बनेगा । डोण्ट वरी । इधर आओ जनरल नोक्स अब हम जाटा है । वक्त का इन्तजार करो । वेट फार गुड टाइम्स ।

इस प्रकार तत्कालीन अंग्रेजों की भारत मे स्थिति और रीति-नीति का पता चलता है कि उन्होंने कितनी चतुराई, कूटनीति से ब्रिटिश लाभों को देखते हुए काम किया और सफलताएँ प्राप्त की ।

जोधपुर से भी धीरे धीरे सेनाएँ कुछ टुकड़ियों में नागौर क्षेत्र में डेगाना के पास इकट्ठी होने लगी। स्वयं मानसिंह भी अपने दल-बल सहित शीघ्र युद्ध-क्षेत्र की ओर महाराजा जगतसिंह से टक्कर लेने के लिये दो-तीन दिन मे ही पहुंचने वाले थे।

महाराजा जयपुर के पक्ष में सवाईसिंह, उम्मेदसिंह, उनके खास रिश्तेदार राठौर, कई राजपूत जो भीमसिंह के पक्षधर थे, उन्होंने भी सवाईसिह् के निमंत्रण पर सांभर के पास आकर अपने शिविर स्थापित कर लिये थे।

उदयपुर के महाराणा स्वय तो नहीं आये, किन्तु उनके परिवार के बीस-पच्चीस व्यक्ति पुष्कर मेले के अवसर पर तीर्थ यात्रा एवं स्नान हेतु आये थे। राज परिवार की कई महिलाओं व पुरुषों के साथ राजकुमारी कृष्णा भी आई थी। मेवाड़ के गुप्तचर भी सारे राजपूताने में फैले हुए अपना काम दक्षतापूर्वक करते थे। राजकुमारी कृष्णा कुमारी के साथ दौलतसिंहजी चूण्डावत भी आये थे। दौलतसिंहजी राज-परिवार के वरिष्ठ सदस्य थे। महाराणा भीमसिंह ने उस तीर्थयात्रा दल का प्रमुख सरक्षक दौलतसिंहजी को नियुक्त करके साथ ही भेजा था। कृष्णा कुमारी भी दौलतसिंहजी को पितृ-तुल्य आदर करती थी। जब दौलतसिंहजी ने एकान्त में कृष्णा कुमारी को गुप्तचरों द्वारा पुष्कर में प्राप्त सूचनाओं से अवगत कराया, तव भयानक युद्ध और भयंकर रक्तपात की कल्पना मात्र से कृष्णा कुमारी आश्चर्य में पड़ गई। जहाँ वह सौन्दर्य की प्रतिमूर्ति थी, वहीं बुद्धि में विलक्षण थी, वीरता भी उसमें अपार थी, चतुराई में भी प्रवीण थी। दौलतसिहजी से उसने आग्रह किया कि हम एक रथ में पर्वतसर चलेंगे। चार-पांच रक्षक साथ होगे। शेप तीर्थयात्री दल के सदस्य तीन-चार दिन पुष्कर में ही ठहरेंगे। वापस आकर फिर इन्हे साथ लेकर उदयपुर लौट चलेगे। दौलतसिंहजी कृष्णा के आग्रह को टाल नहीं सके। रात्रि को तैयारी करके अपने दल के सदस्यों और उनके-अधिकारी को योजना समझा दी। प्रातःकाल वे रथ में कृष्णा कुमारी को लेकर हथियारबन्द चार घुड़सवार लेकर पर्वतसर की ओर रवाना हुए।

सन्ध्या तक पर्वतसर के निकट जहाँ जयपुर महाराजा का शिविर लगा हुआ था, वहाँ पहुंच गये। दौलतसिंह ने समाचार भिजवाया, महाराजा जगतसिंह ने उनके ठहरने का प्रवन्ध कराया। भोजनादि विश्राम के पश्चात् दौलतसिंह के साथ कृष्णा कुमारी महाराजा जगतसिंह

से मिलने गई। उनमें आपस में विस्तृत रूप से विचारों का आदान-प्रदान भी हुआ। राजकुमारी कृष्णा को युद्ध-क्षेत्र में जाने को तैयार जैसे एक वीर पुरुष सैनिक वेश में देखकर महाराजा जगतसिंह को बड़ा आश्चर्य हुआ। उन्होंने कृष्णा तथा दौलतसिंहजी का अभिवादन किया। उत्तर में उन्होंने भी महाराजा को आदरपूर्वक नमस्कार किया।

महाराजा जगतसिंह - राजकुमारीजी आपने यहाँ आने का कष्ट कैसे किया ?

कृष्णा कुमारी - मै तो काकाजी दौलतसिंह तथा राज-परिवार के बीस-पच्चीस सदस्यो के साथ तीर्थस्थल पुष्कर राज के मेले के अवसर पर आई हुई थी। वहाँ मुझे अपने सैनिक तथा गुप्तचरों द्वारा आपके इधर युद्ध क्षेत्र की तैयारी के समाचार मालूम हुए। इतना रक्तपात, इतना नर-सहार, राजपूताने के हिन्दू राजाओं का आपस मे लड़-लड़ कर के मरना-मारना, किन कारणो से हो रहा है ? आपके क्या हालचाल हैं ?

जगतसिंह - ( उत्तेजित भाव में बेचैनी से इधर-उधर घूम रहे है, परेशान है ) भयकर युद्ध की भीषण तैयारी हो चुकी है। कल प्रातःकाल ही युद्ध प्रारम्भ हो जायेगा, हजारों सैनिक कटेंगे, जोधपुर के मानसिंह के साथ दुष्ट अमीरखां पठान की फौज भी है। सुना है, सिंधिया ने मानसिंह का साथ छोड़ दिया और वह ग्वालियर की तरफ सेना सहित चला गया है। फिर भी मानसिंह की शक्ति में कोई कमी नही आई है। जयपुर राज्य शत्रुओं से घिरा हुआ है लेकिन चिन्ता नही। कर्तव्य-पालन मे अगर प्राण भी चले जायें तो मुझे कोई संकोच नही होगा। दुख है तो केवल एक बात का कि इस बार घोर नर-संहार होगा। फिर भी मेवाड़ पर होने वाले आक्रमणों से इस समय रक्षा नही कर सकूंगा। मेवाड़ मेरे लिये और मैं मेवाड़ के लिये नष्ट हो जायेंगे ?

राजकुमारी कृष्णा - मैं आपसे यह पूछना चाहती हूँ कि यह सग्राम क्यों हो रहा है ? नित्य असंख्य वीर रणदेवी पर बलि चढ़ेंगे। इसका खास कारण क्या है ? इस भयानक युद्ध से जयपुर या जोधपुर को क्या लाभ होगा ? इसकी जानकारी के लिये मैं आपसे मिलने आई हूँ। आप क्या चाहते है ? मानसिंहजी क्या चाहते हैं ? मुझे शीघ्र उत्तर दो।

महाराजा जगतसिंह - इतने प्रश्नों के उत्तर एक साथ कैसे दूं ? यह काम बहुत कठिन जान पड़ता है। इस जानकारी से तुम्हारा क्या प्रयोजन है ?

राजकुमारी कृष्णा - प्रयोजन ? मैं इस रक्तपात से ऊब चुकी हूं। मैं इसको बन्द कराना चाहती हूँ।

जगतसिंह - अब यह बन्द नही हो सकता।

कृष्णा - क्यो ?

जगतसिंह - इस बात का उत्तर तुम मुझसे न पूछ कर अपने हृदय से पूछो। लगभग तीन महीने पहले जब मैं मेवाड़ आया था तब व्यर्थ के रक्तपात से बचने-बचाने के लिये तुम्हारे मार्ग से मैं दूर हटना चाहता था। मैंने कहा था, 'तुम मारवाड़ की रानी बनो' तब तुमने ही मुझे बुरा भला कहा था। तुमने मेरी वीरता पर उंगली उठाई थी। मेरे पौरुष को ललकारा था। मुझे गीता के उपदेश सुनाये थे कि कर्म किये जाओ, फल की चिन्ता मत करो। शरीर नश्वर है। आत्मा अमर है। उपदेशों का सारांश कहते हुए अर्जुन की तरह मुझे युद्ध में कूदने के लिये प्रेरित किया था। अब युद्ध के कगार पर तुम मुझे रोकने आई हो। यह अब कैसे संभव है ? अब युद्ध रोकना कठिन है।

राजकुमारी कृष्णा - जगतसिंहजी यदि मेरे कहने से आपने युद्ध प्रारम्भ किया तो मेरी प्रार्थना पर क्या मानवता के नाम पर बन्द नहीं कर सकते।

महाराजा जगतसिंह - सागर की उठने वाली प्रलयंकर लहरो का अन्त कहां होगा ? यह कहना सम्भव नहीं है। इस युद्ध का अन्त कब और किस रूप में होगा, यह कहना भी कठिन है।

राजकुमारी कृष्णा - जगतसिहजी ! शिविर के बाहर कुछ दूरी पर गीगोलो गांव के पास बड़ा मैदान दीख रहा है - आज वह बड़ा सुहावना लग रहा है लेकिन कल वह सैकड़ों हजारो वीरों की लाशों से पट जायेगा। ये मृत्युशील वीर भी इसी देश के हैं, आपसी लड़ाई में इतना रक्तपात करना - राष्ट्र की शक्ति को क्षीण करना है।

एक नारी को वरण करने वाले दो वीर है। उनकी सफलता के लिये हजारों वीरों की व्यर्थ में हत्याएं होंगी कितनी स्त्रियां विधवा हो जाएंगी ? कितने बालक अनाथ हो जायेंगे ? विदेशी गोरी फौजें राजपूताने में आकर लाभ उठाएंगी। इन सारी मुसीबतों की जड़ मै हू। ऐसे मेरे जीवन को धिक्कार है। जगतसिंह इस भीषण रक्तपात के पश्चात् आप

मुझे प्राप्त भी कर लेंगे तो क्या हजारों वीरों की दोनों ओर से होने वाली खूनी लाशों के ऊपर आप सुख-सेज पर सुहागरात का आनन्द प्राप्त कर सकेंगे ?

जगतसिंह - कृष्णा !

राजकुमारी कृष्णा - ( धारावाहिक प्रभावी वाणी में ) मेरे ही कारण राजस्थान की वीर प्रसविनी भूमि आज रक्त से स्नान करेगी। अनेक माताओं की गोद सूनी हो जायेगी। अनेक युवतियों की माग का सिन्दूर करुण - क्रन्दन करेगा। सारा राजस्थान श्मशान भूमि की तरह हो जायेगा। क्या इसका अभिशाप हम तुम को नही लगेगा ? तुम तनिक गंभीरता से विचार तो करो। तुम पूर्ण - रूपेण सोचकर मुझे उचित उत्तर दो।

महा. जगतसिंह-कृष्णा ! मैं तुम्हें समझ नही सका। एक तो तुम स्वयं वीर सैनिक वेशभूपा मे हो, मेवाड़ में ही वीरतापूर्वक बड़े अभिमान से कहा था- "मैं सिसोदिया वंश की हूँ, मानसिंह को नही वरूंगी।" आज तुम एक साधारण नारी की तरह रो रही हो, मेरी विजय की कामना और प्रार्थना न करके पराजय स्वीकार करने की राय दे रही हो।

राज.कृष्णा - जब से मैने सिंधिया, अमीरखां और मानसिंह की तुम्हारे और मेवाड़ के विरुद्ध षड्यंत्र, कूटनीति, दुष्ट कार्यो की योजना की बातें सुनी है, तब से मैं एक भी रात ठीक तरह सुख की नींद सो नही सकी हूँ। मुझे कभी कभी विचार आता है कि शायद मेरा जन्म ही विधाता ने सारे राजस्थान के विनाश के लिये किया है ?

जगतसिंह - तुम्हीं कल्पना करो, इस भावी युद्ध का अन्त कैसे होगा ?
राज. कृष्णा - बताऊ ? अपने हृदय को स्थिर और मजबूत करो ?

म. जगतसिंह - अच्छा कृष्णा बताओ, मेरा मन शान्त है, स्थिर है। सुनने को उत्सुक है।

राज. कृष्णा – मै मानसिंह से विवाह करूंगी।

म. जगतसिंह - (सुनकर मानो वज्रपात हुआ हो) ओह ! कृष्णा !! क्या तुम सच कह रही हो ? ये वचन क्या मेवाड़ की राजकुमारी के योग्य है ? (हताश स्वर मे) मै भूला ! शायद मैं तुम्हारे योग्य नही हूँ। मेरा राज्य छोटा है। मेरी सामरिक शक्ति कम है। मैं मूर्ख हूँ। दुखी व निराश प्रेमी

हूँ। कृष्णा ! तुम मानसिंह की ही रानी बनने योग्य हो। मैंने तो तुममे यह बात पहले भी कही थी, पर तुमने ही इस ओर ध्यान नहीं दिया था। इसमें मेरा क्या दोष है ?

कृष्णा - जगत् (अत्यन्त दुखी हो जाती है)।

जगतसिंह - मैं तुम्हारे कल्याण के लिए तुम्हारी भलाई के लिये, सुख के लिये, आराम के लिये सब कुछ दे सकता हूँ, चिन्ता न करो। दो तीन दिनों मे ही युद्ध का अन्त हो जायेगा। तीसरे दिन संध्या के समय जब सूर्य पश्चिम मे डूबेगा, उसी समय मैं भी रणभूमि में अपने प्राण त्याग दूंगा। तुम्हारी मंगलकामना के लिये, जीवन के सुख के लिये अपने प्राणो की वलि दे दूँगा। मारवाड़ की जीत होगी और आमेर (जयपुर) की पराजय होगी। परन्तु मैं कायरो की भाँति युद्धभूमि का तुम्हारे कहने से भी त्याग नहीं करूंगा। मैं तुम्हारे रूप की उपासना करता हूँ परन्तु आत्म-सम्मान, पुरखों के सम्मान की रक्षा मैं प्राणों की वलि देकर भी करूंगा। समझी ?

कृष्णा - जगत ! अब अधिक न कहो, तुमने अभी तक कृष्णाकुमारी को पहिचाना ही नही है। मैं भले ही परिस्थितियों की दास हूँ, भाग्यहीन हूँ, परन्तु प्रियजन के प्रति विश्वासघातिनी नही हूँ। मैंने तुमसे तुम्हारे धैर्य और निष्ठा की परीक्षा लेने की दृष्टि से असत्य कहा था। मानसिंह किसी भी दशा में जीवित अवस्था में मेरा वरण नहीं कर सकता है। अब तो जीवन और मरण में तुम ही मेरे आराध्यदेव हो, प्राणों के मालिक हो, चिर अर्चित देवता हो।

जगतसिंह - क्या तुम सच कहती हो कृष्णे ?

कृष्णा - प्रियवर ! मेरा पूर्ण विश्वास करो।

जगतसिंह - तो फिर इस युद्ध का अन्त कैसे होगा ?

कृष्णा - इसका उपाय मेरे पास है।

जगतसिंह - तुम्हारा क्या अभिप्राय है ? कृष्णे !

राज. कृष्णा – मेवाड़ के महाराणा मेरे पिताजी ने अपनी प्रतिष्ठा की रक्षा के लिये राज्य के लिये लाचारी से गोरी अंग्रेज सरकार से सहायता मांगी है। राजपूतों के आपसी झगड़ों का पूरा लाभ उठाऐंगे अंग्रेज लोग, विदेशी लोग। गोरे अगर एक बार राजपूताने के किसी भाग में आ गये तो फिर

उनका वापस जाना असंभव है। वे धीरे-धीरे अपने नये हथियारों से, अपनी कूटनीति से अपनी पड्यंत्रकारी बुद्धि से एक एक राजा को अपने पैरों पर झुकने को मजबूर कर देंगे और फिर हमारे भगवा, लाल, केसरिया, झण्डों के स्थान पर हमारे महलों पर अंग्रेजी सरकार का झण्डा लहरायेगा। क्यों ? सब दास बनेंगे, राजपूतों का आत्म-सम्मान नष्ट हो जाएगा। किसके लिये ? किसके कारण ? शायद यह सब मेरे कारण ही हो रहा है। क्या मेरी बात ठीक नही है ?

जगत सिंह - मैं कुछ भी समझ नहीं सका, तुम क्या कहना चाहती हो ? सारी बुराइयों के लिये तुम ही उत्तरदायी क्यों हो ? कैसे हो ?

राज. कृष्णा - अब रात बहुत बीत गई है, दस बजे है। वह तो भावी समय ही बतायेगा कि क्या करूंगी ? मेरा प्रेम तुम्हारे प्रति अमिट रहेगा, साथ ही मुझे चाहे अपने प्राणों का बलिदान देना पडे, मैं राजस्थान के राजाओं में एकता स्थापित करूंगी। अपने पूर्वजों की भाँति हिन्दू धर्म की, मानव-धर्म की रक्षा करूंगी। अब प्राण प्रिय, जाओ, विश्राम करो। हम अपने शिविर में जाकर विश्राम करेंगे और प्रातःकाल से पहले ही वापस पुष्कर के लिये रवाना हो जाएगे। फिर अपने अन्य साथियों को लेकर उदयपुर चले जाएंगे। अच्छा अलविदा !

इस तरह कृष्णाकुमारी को जगतसिंह असमजस की स्थिति में ही विदा करते हैं। वे अपने अपने शिविर में जाकर आराम करते है। जगतसिंह भी सोच विचार करते हुए निद्रा देवी की गोद में चले गये। चारो ओर शान्ति का वातावरण था।

कृष्णा कुमारी भी अपने शिविर में दौलतसिंह जी के साथ चली गई और प्रातः ब्रह्ममुहूर्त में ही उठकर पुष्कर चली गई। लगभग एक सप्ताह में वह अपने सभी साथियों के साथ मेवाड़ की राजधानी उदयपुर चली गई। वहां जाकर अपनी तीर्थयात्रा का वर्णन विस्तार से सुनाया किन्तु जगतसिंह से कृष्णाकुमारी की भेंट की बात को गुप्त ही रखा गया। इससे भीमसिंह के मस्तिष्क में कुछ तूफान उठने का डर था अतः इस विषय मे सभी मौन रहे। जीवन का कार्य आराम से पूर्वतः चलने लगा। कृष्णा कुमारी यद्यपि मानसिक दृष्टि से अस्वस्थ हो रही थी किन्तु अपने दैनिक कार्यो में, माता-पिता की सेवा में, सहेलियों के साथ खेलने में, मनोरंजन करने में कोई कमी नहीं करती थी।

——

रात्रि को लगभग दो बजे जिस शिविर में महाराजा जगतसिंह सो रहे थे उन्हे अचानक सुनाई दिया। आवाज अमरसिंह की थी। अमरसिंह चिल्ला कर कह रहा था, मामाजी, मामाजी! देखो, देखो भैया, भैया ये भूत, ये राक्षस मुझे पकड़ रहे हैं। मुझे डर लगता है। देखो भैया-कोई भूत। मेरे तम्बू में है। कोई बार बार घूर के मुझे लाल आंखों से देख रहा है। मुझे बहुत डर लग रहा है। जगतसिंह चौंक कर घबराकर, उठकर सचमुच अमरसिंह के पास जाते है।

जगतसिंह - (कुछ हँसकर) यह तुम्हारा भ्रम है! अरे तुम्हारी आंखें तो लाल हो रही है। तुम्हें तेज ज्वर है। अमरसिंह के शरीर को छूकर जगतसिंह ने कहा, तुम्हारा तो शरीर आग समान जल रहा है। अमर एक काम करो। इस पलग पर लेट जाओ, आराम करो। अमर को सहारा देकर पलग पर सुला देता है।

अमरसिंह - भैया! भैया!! देखो! देखो-देखो-भूत यहां भी आ गया। वह मेरा पीछा नहीं छोड़ता है। उसके हाथ में चमकता हुआ छुरा है। लाल आँखें हैं। मुझे तो वह कोई खतरनाक डाकू जैसा लग रहा है। उसकी आँखो मे जैसे आग धधक रही है। देखो मुझे वह पकड़ रहा है-देखो।

जगतसिह - पागल मत बनो अमर! यहाँ केवल मैं तुम्हारे पास हूँ। दूसरा कोई भी नही है, डरो मत।

अमर - कहां है मेरा राजमुकुट? कहां है मेरी चमकती हुई तलवार? देखो मै मारवाड़ के राजसिंहासन पर बैठ गया हूँ। मैं मारवाड़ का राजा हूँ। मेरा घोड़ा लाओ। मैं युद्ध करूंगा-युद्ध-मैं कायर नही हूँ-भैया! मैं वीरतापूर्वक लड़ूंगा। मुझ में वीर राठौड़ों का खून बह रहा है।

जगतसिंह - *मेरे भाई अमर, ये तुम्हें क्या हो गया? होश में आओ। देखो* मैं तुम्हारे पास ही हूं। बिलकुल मत डरो। सो जाओ शान्तिपूर्वक।

अमरसिंह - देखो भैया पृथ्वी पर सब स्थिर है। रात काली है। कुछ भी परिवर्तन नहीं हुआ है। केवल मैं बदल गया हूं। ऐसा क्यों हुआ? भैया बताओ? ऐसा क्यों हुआ? देखो मेरे पिताजी मुझे अपने पास बुला रहे है। माताजी प्यार से मुझे देख रही हैं। आवेश में उठकर अमरसिंह बैठ जाता है। आप कौन हैं? बताओ तुम कौन हो?

जगतसिंह - भैया ! मै तुम्हारा मामा हूँ-जगतसिंह । अमर क्या तुम मुझे भूल गये ? अवरुद्ध स्वर में जगतसिंह चिल्लाते है-अमर ! अमर तुम्हें क्या हो गया ?

जगतसिंह काँपते हुए अमरसिंह को पुनः बिस्तर पर लेटा देते है । अमरसिंह कुछ समय बाद धीरे धीरे शान्त अवस्था में आ जाता है-पर कराहता हुआ कहता है-भैया । मै अब बिलकुल ठीक हूँ । अब मुझे नीद आ रही है-अब मुझे सोने दीजिये । आप आराम से यही बैठ जाइये । मुझे अब भी डर लगता है ।

जगतसिंह - तुम सो जाओ-डर की कोई बात नही है, मैं यही हूँ ।

अमरसिंह - मेरी तलवार कहां है ? मेरे पास मेरी तलवार और कटार दोनों रख दीजिये ।

जगतसिंह - तुम्हारी तलवार और कटार तुम्हारे सिरहाने रख देता हूँ । अब भैया सो जाओ-बहुत रात बीत गई है ।

धीरे धीरे अमरसिंह को नींद आ जाती है ।

जगतसिंह - इस बच्चे को न जाने क्या हो गया है ? अब चलो-यह सो गया है । रात भी अब कम ही बची है । जरा मैं भी आराम कर लूं । इसे यही सोने दूं । अब कोई चिन्ता की बात नहीं है । अगड़ाई लेता है । उबासी आती है और वह वहां से अपने स्वयं के शिविर में चला जाता है । धीरे धीरे स्वतः अंधकार हो जाता है । थोड़ी देर बाद दूसरी ओर से दबे पावों अमीरखां पाँच छः हत्यारों को लेकर सूने शिविर में प्रविष्ट हो जाता है । सभी लोग चेहरो को छिपाये हुए है । सबके हाथ मे कटारें हैं ।

अमीरखां - (अमर की ओर अपना हाथ बढ़ाकर उगली से हत्यारो को संकेत करके कहता है) यही है वह अमरसिंह ! इसका सिर काट लो । अभी तो यह सोया हुआ है । इसे हमेशा के लिये सुला दो । यह मानसिंह की राह का कांटा है । इसे हमेशा के लिये दूर कर दो । यह वक्त सही है । अमरसिंह सात आठ आदमियों के अंधकार मे शिविर में आने की आहट सुनकर जाग पड़ता है । चिल्लाकर जोर से कहता है-तुम कौन हो ? यहाँ क्यों आये हो, उनके मुंह पर कपड़े बंधे देखकर कहता है-भूत ! भूत !! डर से आँखें बन्द कर लेता है ।

अमीरखां – अमर हम भूत नहीं है। अच्छी तरह देख लो, हम लोग डाकू है। देख लो-अमीरखां तुम्हारे सामने खड़ा है (हँसते हुए) एक बार तुम मेरे हाथ से निकल गये थे। लेकिन आज भाग जाना नामुमकिन है। अब तुम्हारी मौत नजदीक है।

अमरसिंह - ठहरो ! इधर उधर विस्तर पर कुछ ढूंढता है ? मेरी तलवार और कटार कहां गई ?

अमीरखां - अमर (अट्टहास करते हुए) लड़ने की वेवकूफी मत करो। खामोशी से अब मौत को गले लगा लो। अब तुम्हारी मदद कोई भी नही कर सकता है। जगतसिंह खेमे के बाहर बहुत दूर चले गये है। सब पहरेदार मारे गये है। तुम्हारी तलवार और कटार हमारे पास है। अब मरने को तैयार हो जाओ।

अमरसिंह - अमीरखा ! मैंने तुम्हारा क्या विगाड़ा है ? तुम सब मेरी जान क्यो लेना चाहते हो ?

अमीर खां - तुम महाराजा मानसिंह के दुश्मन हो। उनको राह के कांटे हो।

अमरसिंह - अमीर खां ! तुम मेरे पिता की उम्र के हो, तुम मेरे पिता के समान हो। रहम करो अमीरखां-तुम्हारे भी मेरी उम्र का वच्चा होता तो क्या उसकी चन्द चांदी के टुकड़ों के लिये हत्या करवा देते ? तुम अगर असली बहादुर हो तो दिन में मुझ पर हमला करते। परन्तु तुम वीर नहीं हो। तुम कायर डाकू हो। तुम पत्थर दिल हो। किसी बराबरी वाले से टक्कर लेते तो तुम्हारी बोटी-बोटी काटकर कौओं को खिला देता। एक निहत्थे वालक पर सात डाकू मिलकर रात में चोरों की तरह छिपकर आये हो। इसमें तुम्हारी कोई बहादुरी नही है। धिक्कार है तुम्हारी इंसानियत पर....तुम जानवर से भी गये बीते हो। तुम इंसान के शरीर मे शैतान हो। तुम शैतान हो, राक्षस हो, तुम्हें खुदा भी कभी माफ नहीं करेगा....

अमीरखां - चुप रहो शैतान के दादा, वहस वन्द करो। अबे तुम सब देखते क्या हो ? ले जाओ उस वन्द कमरे मे और इसका सिर काटकर मेरे पास अभी लाओ। जल्दी करो। कोई जाग जायेगा, कोई आ जायेगा तो मुश्किल हो जायगी।

अमरसिह - अमीरखां ! खुदा के लिये रहम करो । क्या तुम्हारे धर्म मे रहम शब्द बेमानी है ? मैं बेकसूर हूं । मुझे मत मारो । खुदा तुम्हें दोजख में भेजेगा अमीर खां—अमीर उसी समय सातों हत्यारे मिलकर उसे पकड़ लेते हैं और घसीटते हुए दूसरे कक्ष मे ले जाते है । घसीटते जाते जाते भी अमरसिह अमीरखां के पैरों से लिपट कर रोता है, छोड़ देने की प्रार्थना करता है. अमीरखां, रहम करो, रहम करो । खुदा के खौफ से तो डरो बाबा !

अमीरखां - अपने पत्थर दिल पर हाथ रखकर चिल्लाकर कहता है- साथियों अब बिलकुल देर मत करो । पाँच मिनिट में सारा काम खतम कर दो ।

अमरसिह - (भीतर कमरे में से रोने की आवाज आती है) भैया ! भैया! पिताजी पिताजी, मामाजी, माताजी तुम कहाँ हो ? मानसिह काकाजी, तुम्हें भी दया नही आई । मैंने तुम्हारा क्या विगाडा था ? बोलो काकाजी ?

इस प्रकार हृदय-विदारक चिल्लाहट सुन कर पत्थर दिल अमीर खां भी परेशान हो इधर उधर घूमने लगा, मन ही मन कहने लगा । इस बच्चे का कत्ल देखा नहीं जाता । आज मेरा पत्थर का कलेजा भी पिघल रहा है । (सीने पर हाथ रखकर) ताज्जुब है ! अरर (भीतर से आवाज....) बचाओ मुझे''' कोई बचाओ रे · भैया ''' आह''' ।

अमीरखां - चलो । काम खतम हो गया । एक हत्यारा अमर का खून से लथपथ सिर बालों से पकड़े हुए बाहर आकर अमीर खा को देता है । लो सरदार आपके हुकुम की तामील हो गई लेकिन मेरा दिल भी · अमीर खां - बदनसीब बेमौत मारा गया । पर मैं भी क्या करूं ? मै भी हुकुम का गुलाम हूँ । हुकुम का बन्दा हूँ । लाओ यह सिर इधर लाओ । मै इसे खुद- महाराजा मानसिह के पास ले जाऊंगा । (सिर ले लेता है) बहादुरो ! मैं तुम सब लोगों पर बहुत खुश हूँ । चलो, हम महाराजा साहब को उनके दुश्मन का सिर थालो में ढककर एक तोहफे के रूप में भेंट करेंगे और उनसे मुंह-मांगा इनाम हासिल करगे । जल्दी करो, अब यहां ठहरना खतरे से खाली नही होगा । जल्दी करो, जल्दी करो । सब लोग वहां से शीघ्रता से भाग जाते है । चारों ओर खून बह रहा है । अमरसिह की लाश बिना सिर के वहीं पड़ी है ।

अमरसिंह का वलिदान हृदय पर आघात करने वाला है। उन हत्यारों को एक वालक की, फिर निस्सहाय वालक की हत्या करते हुए जरा भी शर्म महसूस नहीं हुई। वास्तव में ऐसे आदमी जानवरों से भी वदतर हैं। मनुष्य रुपये पैसों के लालच में अपनी मानवता खो वैठता है। यह अमरसिंह का नही, मानवता का खून है। इसको करने वाले कतई वहादुर नही। वे तो कायर हैं, उनके लिये शर्म की वात है। वे जगली भेड़िये के समान हैं।

——

## पन्द्रह

अमीर खां और उसके साथी अमरसिंह (वीर वालक) की हत्या करके, उसका सिर लेकर थांवला के पास जहां उनकी फौज ठहरी हुई थी, दोपहर तक आ गये। कुछ विश्राम के पश्चात् लगभग सौ घुड़सवारों को लेकर अमीरखां डेगाना की तरफ गया। दो दिन के वाद वहां पहुंचा। उसके साथियों ने गुप्त रूप से जाकर महाराजा मानसिंह के शिविर का पता लगा लिया। अमीर खां ने एक साथी के द्वारा महाराजा से मिलने का समय मांगा। महाराजा ने संध्या के समय उसे एक निश्चित स्थान पर एकान्त में मिलने का समय दिया।

महाराजा अपने चुने हुए दो सौ वीरों सहित डेगाना से पांच मील दूरी पर शिविर में दूसरे दिन चले गये। वहां पर अमीर खां अपने दस साथियों सहित महाराजा से मिलने के लिये शिविर में गया। अपने शेष साथियो को वह डेगाना में राठौड़ों की सेना के साथ ही छोड़ आया था।

निर्धारित समय पर महाराजा अपने शिविर में उच्चासन पर वैठ गये। सुरक्षा अधिकारियों का प्रवध पूर्णतया उत्तम था।

अमीर खा ने मानसिंह के शिविर में प्रवेश किया। पीछे-पीछे दो आदमी कपडे से ढकी एक वड़ी टोकरी लेकर अन्दर गये। पहले अमीर खा ने झुक कर महाराजा से सलाम किया। महाराजा मानसिंह ने भी अभिवादन स्वीकार किया। फिर अमीर खां ने कहा-महाराजा साहब अब आप

कई सालों तक राज्य कर सकेंगे। आपके रास्ते के कांटे को मैंने जड़ से खतम कर दिया है। उसके दोनों आदमियों ने टोकरी में से बड़े थाल में रखा हुआ कपड़े से ढका अमरसिंह का सिर निकाला और अमीरखा के हाथ में थाल सम्भला दिया। महाराजा मानसिंह अमीरखां की बात सुनकर बहुत दुखी हो गये। थाल में रखी व ढकी हुई तरबूज की तरह की वस्तु को दूर से महाराजा ने देखा पर पूरी बात उनकी समझ मे नही आई। महाराजा अस्त-व्यस्त हो गये। फिर उन्होंने कहा, कहाँ है ? कहाँ है मेरा अमर ? मारवाड़ का राज्य अमर का है। मैं कोई भी नही हूँ। कोई भी नहीं। मैंने उसको धोखा दिया। सारा मारवाड़ उसके पक्ष मे है। अमीर खां - महाराजा आपके लिए तोहफा लाया हूँ। थाल लेकर आगे बढ़ता है और महाराज के सामने थाल रखकर कपड़ा हटा देता है। अमर के सिर के बाल पकड़ कर अमीर खां ने महाराजा के सामने ले जाकर रख दिया। लहू-लुहान सिर देखकर महाराजा एकदम क्रोध में आ गये। उनके अंग-रक्षक भी आश्चर्य में पड़ गये। महाराजा ने चिल्लाकर कहा, अमीरखां तुमने यह क्या किया ? तुमने तो सचमुच ही अमर को मार दिया। तुम वास्तव में हत्यारे हो, पापी हो, राक्षस हो। फिर कुछ सभंलकर कहा- अमीरखां तुम जल्लाद हो। तुमने तो एक मासूम बालक की हत्या कर दी। तुम्हारा भी इतना बड़ा लड़का होता तो क्या हत्या कर देते ? तुमने और सिंधिया ने हमारे राजपरिवार में आग लगाई है। तुमने ही मेवाड़ और आम्बेर (जयपुर) में शत्रुता ठनवाई है। मै कृष्णाकुमारी से प्रेम नही करता था। मैंने तो उसे देखा तक नही था। फिर उसके साथ शादी की आवश्यकता क्या थी ? अमीरखां ! तुमने मेरे भाई की एक मात्र निशानी को मार डाला। वही तो मारवाड़ के राज्य का सच्चा अधिकारी था । महाराजा के आंसुओं की धारा वहने लगी, वह रुमाल से आंसू पौंछने लगे। तुमने यह हत्या क्यों की ? (गुस्से मे चिल्लाये) बताओ ?

अमीरखां - राजा साहब यह आपका हुक्म था।

मानसिंह - तुम झूठ वोलते हो। मैंने उसे जान से मारने को नही कहा था। कही दूर ले जाने की बात हुई थी। मुझे याद है, उसने एक बार कहा था- चाचाजी, आपके सुख के लिये मैं अपनी जान दे दूंगा। आप चाहे तो मेरा सिर काट लीजिये। मै बकरी के बच्चे की तरह रोते हुए अपना सिर

झुका दूंगा। मैंने ऐसे श्रेष्ठ बच्चे को खो दिया। ओह ! अमीरखां, तुमने रुपयों के लालच में यह हत्या की है, तुम सचमुच में बहादुर नही, एक डाकू हो, चांडाल हो।

अमीरखां - मैं बेकसूर हूं, कसूरवार आप है। मैंने जो कुछ किया, आपके हुक्म से, आपकी मर्जी के मुताबिक किया है।

मानसिंह - (तैश में आकर) तुम बेकसूर हो ? एक भोले बच्चे की हत्या करके तुम बेकसूर बनते हो। अरे तुम, मुसलमान हो, इस्लाम धर्म को बदनाम करते हो। क्या तुम्हारे धर्म में बेकसूर की हत्या करना जायज़ है ?

ओह ! अभागा बालक ! मां बाप का प्यार भी कभी नहीं पा सका। इतने दिनो तक कारागार के अंधकार से निकलकर प्रकाश भी नही देख सका। राज-परिवार में जन्म लेकर उसने क्या सुख पाया ?

अमीर खां, तुमने मेरी कमजोरी का, राज्य करने की तीव्र इच्छा का, या कहिये स्वार्थान्धता के पागलपन का पूरा लाभ उठाया। मेरा धन भी गया, धर्म भी गया और अमूल्य निधि अमर हमेशा के लिये समाप्त हो गया।

फिर चिल्लाकर-अमीर खां तुमने मेरे अमर को जान बूझ कर के मार डाला है। देखो-उधर सुनो-अमर की आवाज आ रही है। वह कह रहा है-मानसिंह चाचाजी ! तुम शान्ति से राज्य नही कर सकोगे। तुम्हारे बेटे की इसी निर्दयता पूर्वक हत्या होगी तब तुम अमर के प्राणों का मूल्य समझोगे ?

अमीर खां के पास आकर तलवार निकाल कर महाराजा ने कहा-अमीर खां तुमने अमर की हत्या की है। तुम हत्यारे हो, राज परिवार के एक सुपुत्र की हत्या के तुम अपराधी हो। तुम हमारे राज्य मे बन्दी हो। हत्या के इस जघन्य अपराध के विषय मे न्यायालय में विचार होगा। फिर मैं तुम्हें जोधपुर ले जाकर अपने हाथों से तुम्हारी हत्या करूंगा। सैनिकों पकड़लो अमीरखा को। सावधान ! सैनिक उसके पास आकर घेरा डालते है।

अमीरखा जोश में आ गया। फिर जरा तेज स्वर मे कहने लगा-महाराज क्रोध नहीं करें। दिल और दिमाग को शान्त रखें। मैं डरता नहीं हूं। मैं जिन्दगी भर खून की होली खेलता रहा हूं। लूटमार करना, खून करना

मेरा पेशा है । न मेरा कोई धर्म है, न मेरा कोई ईमान है । मैंने धन के लालच में गांव उजाड़ दिये हैं । हजारों आदमियों को इन हाथों से गाजर मूली की तरह काट डाला है । लेकिन अमर की हत्या के वक्त एक अजीब तजुर्बा हुआ । इस बच्चे के खून से मेरा पत्थर दिल भी पिघलने लग गया था । सच कहता हूं, मैं इस बच्चे की हालत, बेबसी और दर्दभरी आवाज सुनकर मारना नही चाहता था पर आपका हुक्म था । इसलिये मुझे मजबूरी से ...।

मानसिंह - ठीक है अमीरखां, तुम्हारा कोई दोप नहीं है, सारा दोष मेरा ही है । मैं ही असली पापी हू । मेरी ही गलती है कि मै सिंधिया के और तुम्हारे वहकावे में आ गया । मेरी ही गलत बातों से राजस्थान में चारों तरफ भय मिश्रित दृष्टि से मुझे देखा जा रहा है । लोग मुझसे घृणा करते है । मैंने ही गृह युद्ध की आग चारों ओर फैलाई है । राजस्थान में फूट का बीज मैंने बोया है, मैं राजपूतों का मान मिट्टी में मिला रहा हूँ ।

अमीरखां, तुम अभी इसी समय, इस शिविर के बाहर चले जाओ, मेरे शिविर से निकल जाओ । तुम अपने सब शैतानों को लेकर मेरे राज्य की हद के बाहर फौरन निकल जाओ, नहीं तो अब तुम्हारी खैर नही है । अब मैं तुम्हारी शक्ल भी नही देखना चाहता । तुम इंसान के भेप मे एक जंगली सूअर हो, बदमाश · नीच ... पापी... ।

अमीरखां-राजा साहब, जरा होश में आओ । आपने मेरी बेइज्जती की है । मुझे जंगली सूअर कहा । मेरी इतनी तोहीन की है जो कभी भी, कहीं भी नही हुई है । मुझसे दुश्मनी लेने का अन्जाम अच्छा नही होगा ।

मानसिंह-इससे और क्या बुरा होगा ? तुम क्या करोगे ? ज्यादा से ज्यादा सिंधिया से मिलकर मारवाड़ पर आक्रमण करोगे, या जगतसिंह तुम्हें बीस पच्चीस लाख रुपये दे देगा तो तुम उधर मिल जाओगे । डाकू का कोई धर्म नहीं होता है । तुम मानवता के नाम पर कलक हो । तुम्हारा जीवन बेकार है अमीरखां ! तुमसे मै नहीं डरता, तुममें कुछ ताकत है तो आजमा कर देख लेना, हम भी मारवाड़ के राठौड़ है । तुम्हारी कब्र इसी धरती में बना देंगे । चले जाओ, निकल जाओ । अगर तीन दिन मे मेरे राज्य से तुम्हारे सब डाकू और हत्यारे बाहर नही गये तो उन सबको नप्ट कर दिया जायेगा । चले जाओ वहशी ।

अमीरखां चुप हो गया। केवल क्रोध में आँखें निकालकर रह गया। अपने हत्यारे साथियों को लेकर शिविर के बाहर चला गया। अमीरखा शीघ्रता से डेगाना के पास अपने शिविर में पहुँचा। आराम भी नहीं किया और अपने सभी सौ साथियों को लेकर थांवला के पास वाले शिविर मे आ गया। रात्रि को विश्राम करने के पश्चात् अमीरखां ने प्रातः जल्दी ही वहां से सारी फौज को जयपुर की तरफ कूच करने का हुक्म दिया। उसके सब साथी रवाना होकर दूदू के पास चले गये। मारवाड़ की सीमा से अमीरखां निकल गया।

मानसिंह को अमीरखां के चले जाने पर सन्तोष हुआ। वह भी अपने साथियो के पास आकर डेगाना के पास अपनी फौज मे जाकर मिल गया। आगे क्या करना है, इसकी योजना बनाने लगा। उसके मन में बार बार अमरसिंह की हत्या का पश्चात्ताप भी हो रहा था। उधर देखकर कह रहा था, सिंधिया और अमीरखा शनि की तरह पीछे लगे। मैंने भी अपनी बुद्धि खो दी थी। मैं कठपुतली की तरह इन दोनों दुष्टों के संकेतो पर नाचता रहा। आज मैं इन दोनों दुष्टों से मुक्त हो गया। अब मैं पूरी कोशिश करूंगा कि राजस्थान के राजपूत राजा आपस में लड़कर व्यर्थ में अपनी शक्ति को नष्ट नहीं करें। हम अपने धन, अपनी सम्पत्ति से जनता का कुछ भला करें। हमारे राज्यों में कई समस्याएं है, उन्हें दूर करें और आपस में मिल-जुलकर रहें तो राजस्थान में समृद्धि के, उन्नति के दिन लौट आयेंगे। विदेशी लोग और देशी डाकू लुटेरे भी नौ दो ग्यारह हो जाएगे।

अब मानसिंह के हृदय में कुछ परिवर्तन आया। मनोवैज्ञानिक दृष्टि से वह अपने को पापी समझने लगा। उसके सैनिकों में जब अमरसिंह की हत्या के समाचार अग्नि की तरह फैल गये, उनमें आपस में उचित-अनुचित का संघर्ष होने लगा।

महाराजा जगतसिंह को कुछ दिनों के पश्चात् पता लगा कि अमरसिंह की हत्या कर दी गई है। ठाकुर सवाईसिंह, उम्मेदसिंह, महाराजा जगतसिंह जी के पास आये और इस निर्मम हत्या पर बहुत दुख प्रकट किया। जगतसिंह व्यक्तिगत रूप से इतने दुखी थे कि उन्होने अपनी फौज के हजारों जवानों को युद्ध के लिए तैयार रहने का आदेश दिया। बीकानेर महाराजा की एक सशस्त्र सेना भी महाराजा जगतसिंह की ओर से लड़ने

के लिये आ गई। अमीरखां भी महाराजा जयपुर से जाकर मिला। अमरसिंह की हत्या में अमीरखां ने अपने को निर्दोष बताया। जोधपुर महाराजा के ही सैनिकों ने अमरसिंह की हत्या की, ऐसा प्रचार अमीरखा ने किया। इस तथ्य की खोज और सच्चाई जानने-समझने का जयपुर वालों को भी समय नहीं था। अतः तीन दिनों के अन्दर ही जयपुर की सशस्त्र सेना मारवाड़ के राजा मानसिंह और उसकी सेना से युद्ध करने के लिये रवाना हो गई। मार्च अठारह सौ सात में पर्वतसर के पास गींगोली ग्राम से कुछ दूर बड़े मैदान में मारवाड़ और जयपुर की दोनो सेनाओं में भयंकर युद्ध होने लगा। दोनों ओर के सैकड़ों वीर मरने मारने लगे। जयपुर की ओर से बीकानेर और अमीरखां की सशस्त्र सेना लड़ रही थी। दोनों ओर से भारी जान माल की हानि हो रही थी लगभग तीन दिन तक भयंकर युद्ध हुआ। जयपुर के महाराजा जगतसिंह की सेना ने मानसिंह की सेना के छक्के छुड़ा दिये। राठोर सैनिक पूरी तरह तैयार नही थे। स्वर्गीय महाराजा भीमसिंह के पक्षधर सैनिकों ने लड़ाई में आक्रामक युद्ध नहीं किया, केवल अपना बचाव ही करते रहे। अन्त में महाराजा जगतसिंह खुद तलवार लेकर युद्धवेश में महाराजा मानसिंह के सामने आ गये। महाराजा जगतसिंह ने क्रोध में भरकर लाल लाल आँखें निकालते हुए चिल्लाते हुए ललकार कर कहा-मानसिंह !

मानसिंह - तुम कौन हो ?

जगतसिंह - मैं अम्बेर का राजा जगतसिंह। मैं तुम्हारे खून का प्यासा हूँ। तुमने मेरे भानजे अमरसिंह की हत्या की है। एक अबोध बालक की हत्या कराते हुए तुम्हें लज्जा नही आई। अगर हिम्मत है तो बहादुरों से लड़ो-खुली लड़ाई मैदान मे लड़ो।

मानसिंह - और क्या कारण हैं जो तुम मुझसे युद्ध करने आये हो ?

जगतसिंह - दूसरा कारण यह है कि तुम मेवाड़ की राजकन्या कृष्णा-कुमारी से विवाह करना चाहते हो। तुम अपनी औकात तो दर्पण में देख लो। आज के इस युद्ध से यह निर्णय हो जाएगा कि मेवाड़ की राजकन्या से विवाह करने की क्षमता किसमें है ? हत्यारों को भेजकर तुमने अपने भाई की सन्तान, अपने भतीजे और मेरे भानजे की निर्दयता से हत्या कराई है। इससे तुम्हे क्या सुख मिलेगा ? इस हत्या के अपराध का दण्ड

तुम्हें अवश्य मिलेगा। बाल-हत्या वीरों को शोभा नही देती। उसकी हत्या से तुम जोधपुर पर क्या हजार वर्ष तक राज्य करोगे? तुम्हारा पाप तुम्हें खुद ही नष्ट कर देगा। तुम कुलद्रोही विश्वासघाती हो। राजस्थान की क्षत्रीय जाति के तुम संहारक हो, भावी पीढ़ियां तुम्हारे कुकृत्यों को घृणा की दृष्टि से देखेंगी।

मानसिंह - जगतसिंह! मैं युद्ध से नही डरता, युद्ध के मैदान में मरना क्षत्रीय की शोभा है। उसका सौभाग्य है। मैंने वास्तव में स्वार्थान्धतावश अमीरखां और सिंधिया जैसे दुष्ट, मतलवी और षड्यंत्री लुटेरों के बहकावे में आकर दो गल्तियां की है। अमर की हत्या अमीरखां ने लालच मे आकर की थी। वही नालायक अमर का हत्यारा है। दूसरी बात, कृष्णाकुमारी से विवाह का मेरा बिलकुल विचार प्रारम्भ में नही था। सिंधिया और अमीरखां के बहकावे में आकर मैने यह अपराध किया है।

जगतसिंह - यह सफाई देना अब बेकार है। क्या यह झूठ है कि जब कृष्णा कुमारी का टीका मुझे मिल गया, तुम्हारे सैनिकों ने शाहपुरा के पास सिंजारे के सामान की लाखों की सम्पत्ति को लूटा? क्या तुमने जयपुर राज्य के सीमान्त गांवों को नहीं लूटा? क्या फसलों को जलाना, ग्रामीणों को लूटना क्षत्रीय का धर्म है। क्या लुटेरों की सहायता से तुम अपनी शोभा बढा रहे हो? यह राठौर सैन्य शक्ति का अपमान नहीं है? क्या अमरसिंह की हत्या तुम्हारी आज्ञा से नही हुई? इतना ही नही, सिंधिया और अमीरखां की फौजों के साथ तुम मेवाड़ पर शीघ्र आक्रमण नहीं कर रहे हो? तुम्हारी लगाई हुई आग सारे राजस्थान के रजवाड़ों को नष्ट कर देगी। तुमने राजस्थान में लंका के रावण की तरह सर्वनाश का आयोजन किया है। क्या इस प्रचण्ड सर्वनाश की भयंकर लपटों के प्रभाव से तुम और तुम्हारा मारवाड़ बच जायेगा? यदि ऐसा सोचते हो तो तुम मूर्खों की दुनिया में जी रहे हो। तुम विवेकहीन हो-विक्षिप्त और अंधे हो।

मानसिंह - जगतसिंह! कठोर शब्दों तथा अपमानजनक भाषा का मैं भी उपयोग कर सकता हूं। मै गंगा नहीं हूं। राठौरों को तुम ललकार रहे हो। संभलकर जरा सभ्यता से बात करो। मैं तुम्हें स्पष्ट बताना चाहता हू कि अब मेरा दौलतराव सिंधिया और डाकू अमीरखां से कोई सम्बन्ध नही है। अब वे दोनों ही मेरे शत्रु है। अब तुम चाहो तो मै मेवाड़ की

रक्षा के लिये तुम्हारे साथ चल सकता हूं । क्या मेरी बात आप मानेंगे ?

जगतसिंह - अब तुम विश्वास के पात्र नहीं हो मानसिंह । जो व्यक्तिगत धोखे से भाई को मरवाकर राज्य प्राप्त करता है, अपने भतीजे की निर्मम हत्या करा सकता है, वह दूसरों के साथ तो विश्वासघात कर ही सकता है । तुम मेरे चिर शत्रु हो, मेरे जीवन-रस मे तुमने विष घोला है, मेरे जीवन की समस्त अभिलाषाए, सुख की कामनाए नष्ट कर दी है । मेरी आशा-लता पर तुषारापात कर दिया है-अब क्या शेष रहा है ? मेरे भानजे को मरवा दिया । अब आओ युद्ध करो । सावधान, तलवार उठाओ मेरा रक्त खौल रहा है ।

जगत तलवार उठाकर आक्रमण करता है ।

मानसिंह - जगत होश में आओ । तुम तैश में आकर क्या क्या बक रहे हो ?

जगतसिंह - कायर ! नीच, दुष्ट ! क्या इसी बल पर तुमने मेरे राज्य पर आक्रमण किया था ? सिंधिया और अमीरखां का साथ छोड़ने के बाद क्या तुम्हारा खून पानी हो गया ? तलवार क्यों नही उठाते हो ? बोलो, क्या तुम में राजपूती खून नहीं है ?

मानसिंह - संघर्ष की उत्तेजना नहीं दो जगतसिंह ! मैं व्यर्थ के रक्तपात को लाभदायक नहीं समझता इसलिये ।

जगतसिंह - यदि तुमको अपनी वीरता पर कुछ दम्भ है तो आओ सचेत होकर मुझसे युद्ध करो । मानसिंह, मैं निहत्थे पर वार करना कायरता समझता हूँ । अगर तुम युद्ध नहीं करोगे तो मैं आज इतना क्रुद्ध हूँ कि तुम्हारी हत्या कर दूंगा । आज मै सिर पर कफन बांधकर आया हूँ । अपने प्राण हथेली पर लेकर आया हूँ । देखो, मेरी तरफ देखो । मैं विक्षिप्त हो गया हूँ । अपने प्राणों की आशा त्याग कर इस नगी तलवार को लेकर बिना सेना के घोड़े पर सवार होकर तुम्हारे शिविर क्षेत्र में आया हूँ, प्रतिद्वन्द्वी हो तुम मेरे । उठाओ तलवार, जल्दी करो । यह युद्ध अम्बेर और जोधपुर का अन्तिम युद्ध सिद्ध होगा ।

मानसिंह- जगतसिंह ! यह क्या कर रहे हो ?

जगतसिंह गुस्से में आकर जोश में चिल्लाकर कहते हैं- युद्ध करो । मानसिंह उठाओ तलवार, करो तुम्हारे प्राणों की रक्षा, कहते हुए तलवार का वार पूर्ण शक्ति से करता है । मानसिंह भी संभल कर अपनी

आत्मरक्षा करता है। दोनों में बहुत देर तक युद्ध होता है। जगतसिंह पूरी शक्ति से आक्रामक युद्ध कर रहा था और युद्धावेश में पागल सा हो गया था। बहुत देर के संघर्ष और भयंकर द्वन्द युद्ध के दौरान मानसिंह घायल हो जाता है, उसका पांव फिसल जाता है। उसकी तलवार के दो टुकड़े हो जाते है। फिर वह कटार निकालता है, किन्तु जगतसिंह उस पर हावी हो जाता है।

मानसिंह विवश होकर असहाय अवस्था में जगतसिंह को देखता है।

जगतसिंह - मानसिंह, तुम घायल हो गये हो। मैं तुम्हारी हत्या नहीं करूंगा। मैं वीर क्षत्रीय हूँ, लुटेरा, डाकू या हत्यारा नहीं हूँ। जाओ अब भी जीवन में कुछ अच्छे काम करो। अब मैं दौलतराव सिंधिया और डाकू अमीरखा को भी देख लूंगा। मेवाड़ की ओर जाऊंगा और अब कृष्णा-कुमारी मेरी है और सदैव मेरी ही रहेगी। अब मेवाड़ की राजकमलिनी कृष्णा जयपुर की राजरानी बनेगी, इसमें अब कोई सन्देह नहीं है।

जगतसिंह विजय की खुशी में जोर से अट्टहास करता है। विजय-गर्व में वहां से प्रस्थान करता है। मानसिंह धरती पर कुछ देर घायल अवस्था में पडे रहे। उठने की चेष्टा की, एक बार उठे फिर गिर गये। दूसरी बार फिर उठ जाते है, थोड़ी दूर चलकर फिर गिर जाते हैं।

कुछ देर बाद घायल अवस्था में अपने राजा मानसिंह को देखकर जोधपुर के सैनिक मानसिंह को उठाकर ले जाते है। उनका इलाज होता है और वे अपने दल बल सहित जयपुर की सेना से पराजित हो जाते हैं। गींगोली (पर्वतसर) के पास मारवाड़ की सेना छिन्न भिन्न हो जाती है। उसके पांव उखड़ जाते हैं। सैकड़ों हजारों वीर बलिदान जो जाते हैं। जयपुर की सेना को क्षति होने के बावजूद भी इस युद्ध में सफलता मिली।

महाराजा जगतसिंह तथा उनके साथियों ने विजय की खुशी में नागौर जिले के भखरी ग्राम की माताजी के सोने का छत्र और बहुमूल्य कपड़े चढ़ाये। हजारों गरीबों को भोजन कराया। जयपुर में विजय पर्व मनाया गया। इस प्रकार इस ऐतिहासिक युद्ध में जयपुर की विजय और मारवाड़ की पराजय हुई।

यह युद्ध मार्च सन् अठारह सो सात में लड़ा गया था।

इस प्रकार महाराजा मानसिंह को तीन हानियां हुई, जयपुर के महाराजा जगतसिंह से पराजित हुए। अपने भाई के पुत्र की हत्या हो गई ; जोधपुर राज्य का चालीस लाख रुपया अमीरखां को प्राप्त हुआ जिसका मारवाड़ को कोई लाभ नही हुआ। इस तरह मानसिंह पराजित होकर जोधपुर के किले में जाकर छिप गये।

महाराजा जगतसिंह से बड़ी धनराशि लेकर अमीरखां पहले जोध-पुर के विरुद्ध जयपुर की तरफ से लड़ रहा था किन्तु जोधपुर की गीगोली के पास पराजय के पश्चात् अपने जासूस भेजकर फिर मानसिंह से रिश्वत लेकर उसके पक्ष में आने को कहा। जयपुर के महाराजा के साथ छोड़ने का इरादा करके फौज लेकर अमीरखां अलग हो गया।

जयपुर के महाराजा प्रतापसिंहजी से मेवाड़ के महाराणा भीमसिंह की बहिन चन्द्रकुंवर जी की मंगनी हुई थी पर महाराजा प्रतापसिंह की मृत्यु हो गई थी फिर भी चन्द्रकुंवर ने उन्हें अपना पति मान लिया था और वह स्वयं वैधव्य का जीवन बिता रही थी। प्रतापसिंह के पुत्र जगत-सिंह को वह अपना पुत्र मानती थी अतः चन्द्रकुंवर भी यही चाहती थी कि मेवाड़ की राजकन्या कृष्णाकुमारी का विवाह जयपुर के महाराजा जगतसिंह से ही होना चाहिये। महाराजा जगतसिंह सुन्दर, सुशील, स्वस्थ और वीर था, हर तरह से कृष्णाकुमारी के लिये योग्य था। जब मानसिंह भागकर जोधपुर में जा छिपे तब जयपुर के दीवान रामचन्द्र ने कहा, अब हमें उदयपुर चलकर मेवाड़ राजकन्या से विवाह करके लौट आना चाहिये। तब सवाईसिंह ने बाधा डाली और जयपुर की फौज ने जोधपुर को जा घेरा। उस समय अमीरखां को बड़ी रकम रिश्वत में देकर मानसिंह ने पुनः अपनी ओर मिला लिया। उसकी दगाबाजी से महाराज जगतसिंह को फिर जयपुर लौटना पड़ा। मानसिंह को जो शिक्षा जगतसिंह देना चाहते थे, नही दे सके।

दो तीन वर्ष पहले अमीरखां और दौलतराव सिंधिया ने भी महा-राणा मेवाड़ को जाकर कहा था कि कृष्णाकुमारी का विवाह जयपुर के राजकुमार जगतसिंह से नही होना चाहिये। उसका विवाह जोधपुर नरेश मानसिंह से हो होगा, वरना तुम्हारा मेवाड़ तबाह हो जायेगा। इसका भी इतिहास साक्षी है, कुछ समय के लिये "हां" करके टाल दिया।

# सोलह

उदयपुर के पास बाहरी क्षेत्र में एक रास्ते के किनारे पर धीवर युवक कालिया बैठा हुआ है। थोड़ी दूर पर एक टीला है, टीले के ऊपर बैठा हुआ वह मधुर राग में गीत गा रहा है जिसका सारांश इस प्रकार है-"मेरे मन की फुलवारी में कोई मीठे बोल बोल रही है"।

दौलतसिंह उस रास्ते पर जा रहे थे। कालिया की मधुर वाणी मे इतना आकर्षण है कि दौलतसिंह जाते जाते भी रुक गये। कालिया के पीछे की ओर चुपचाप खड़े हो गये और मगन होकर गीत सुनते रहे। कालिया गीत गाने मे मस्त हो रहा है। गीत है-"द्वार द्वार पर भीख माँगता फिर रहा था, अचानक ही किसी ने अनजाने में मेरी खाली झोली को भर दिया। मेरे मन की फुलवारी में कोयल बोल रही है। मेरा मन प्रसन्नता से फूला नहीं समा रहा है। मेरे मन में प्रेम के बादल घिर घिर कर आ रहे हैं। प्रेम की वर्षा हो रही है। पहले तो जीवन नीरस था। परन्तु अब अचानक मेरे जीवन में किसी ने मिश्री घोलकर जीवन को मधुमय बना दिया है। मेरे मन की फुलवारी में कोयल बोल रही है। पहले मैं दुनिया से अनजाना था, अलग था। मुझे जीवन मे किसी भी रस गंध का अनुभव नही था परन्तु आज जब मेरी आँखें खुली तो दुनिया में चारों ओर नवीनता ही दृष्टिगोचर हो रही है। उसकी आँखों के बाण इतने तीक्ष्ण थे कि मेरे हृदय को काम-बाण ने बेध दिया। उस सुन्दरी की मगलमूर्ति कितनी भोली और हृदय को लुभाने वाली है। उसके नयनों की मादकता मुझे मोहित कर रही है। मैं अपने अस्तित्व को भूल गया। मेरे मन की वाटिका में कोयल बोलती है। कितनी लुभावनी वाणी है। कालिया अपनी मस्ती में गाता हुआ धीरे से अपने स्थान से उठकर चलने लगता है। गाता हुआ दूर तक चला जाता है। मेरे मन की फुलवारी में कोयल रस घोल रही है। यही ध्वनि ... धीरे ... धीरे ... धीमी होती चली जाती है।

उसी स्थान पर अजीतसिंह चूण्डावत घूमते हुए आ जाते हैं। आगे बढ़कर दौलतसिंह के कंधे पर हाथ रखकर कहते हैं-वाह! दौलतसिंह,

सड़क पर खड़े होकर आप क्या सपना देख रहे हैं ? क्या संध्या समय घूमने आये हो ?

दौलतसिंह - हां ! ऐसे ही इधर से घूमने जा रहा था पर उस धीवर नवयुवक कालिया का स्वर इतना मधुर है कि उसकी संगीतमयी मधुर ध्वनि की ओर स्वतः ही आकर्षित हो गया।

अजीतसिंह - आजकल आप कहां रहते हैं ? आपके तो इन दिनों में दर्शन ही नहीं हुए। जबसे संग्रामसिंहजी गये हैं, आपने भी हम लोगों से मिलना छोड़ दिया। क्या आप हमसे कुछ, रुष्ट है ?

दौलतसिंह - संग्रामसिंहजी का मेवाड़ के बाहर चला जाना क्या कोई छोटी सी घटना है ? क्या आपको उनके अचानक अपने राज्य, अपनी मातृभूमि छोड़कर चले जाने का तनिक भी दुख नही है ?

अजीतसिंह - उनके चले जाने से मेवाड़ की ठकुराई अधूरी रह गई है। मुझे भी उनका अभाव खटकता है। उनके बिना सूना सूना हो गया है। यद्यपि वे मेरे प्रतिद्वन्द्वी हैं तो भी क्या हुआ ? मैं उनकी वीरता की सराहना करता हूं। उनकी सिंह के समान चमकती हुई बिल्लौरी आँखें, भव्य चेहरा, चौड़ा ललाट, आजानु बाहें, घनघोर बादलों-सी गरजती हुई वाणी आदि बातें जो उनके व्यक्तित्व की शोभा है, भुलाये से भी भुलाई नहीं जातीं।

दौलतसिंह - आपकी हठ, बड़ों के प्रति उपेक्षा वृत्ति और दम्भ के कारण वीर पुरुषों की सेवाओं से मेवाड़ भूमि वंचित हो गई है।

अजीतसिंह -दौलतसिंहजी, परम्परागत दुश्मनी प्रयत्न करने पर भी नष्ट नहीं होती। पुरानी खाँसी की तरह यह कई बार प्रयत्न करने पर भी उभर आती है। आपको तो मालूम ही है कि जब दरबार मे शक्तावतों का बोलवाला था तब उन्होने चूण्डावतों की कितनी दुर्दशा कर दी थी। उस समय चूण्डावतों का अस्तित्व तिनकों व घास कूड़े की तरह था। समय बदलता रहता है।

दौलतसिंह - यह बात भले ही ठीक हो, परन्तु प्रतिशोध की भावना की अंधी उत्तेजना में मनुष्य विवेक खो देता है। हंस की-सी नीर क्षीर बुद्धि नष्ट हो जाती है। चूण्डावतों ने भी संग्रामसिंहजी के पिता, पत्नी और उनके बच्चों की जिस निर्ममता और निर्दयता से हत्या की थी, वह घटना

क्या शक्तावत कभी भूल सकते हैं ? फिर यदि संग्रामसिंह ने चूण्डावतों के विरुद्ध कुछ भी किया तो वह मानव मन की स्वाभाविक वृत्ति है। उसको अतिरेक नहीं कह सकते। बदला लेना साधारण मानव का स्वभाव है।
अजीतसिंह - वे ही तो पुरानी गाठें है जो हमें मिलने नहीं देती। यह गृह युद्ध निरन्तर चलता ही रहेगा।

दौलतसिंह - यह मेवाड़ के राज्य और जनता का दुर्भाग्य है। शासन को शक्तिहीन करने में यह पूर्णतः सहायक है। मेवाड़ के चारों ओर शत्रु घात लगाये बैठे हैं। जिस मेवाड़ भूमि के लिये हमारे पूर्वजों ने रक्त की नदिया बहाकर इसकी रक्षा की, इसको सुरक्षित और सम्पन्न बनाये रखा, आज इसकी दुर्दशा के लिये क्या हमारी फूट, हमारा स्वार्थ उत्तरदायी नहीं है ? यह मेवाड़ अब दूसरों का दास हो जाएगा ?

अजीतसिंह - कदापि नही। ऐसा कभी नही होगा दौलतसिंहजी, हम प्राण देकर भी मातृभूमि की रक्षा करेंगे।

दौलतसिंह - कथनी और करनी में बहुत अन्तर है। राजपूत की भांति केवल उत्साह प्रदर्शन से कोई लाभ नही है। सफलता तो पौरुष प्रदर्शन और तलवार के बल पर ही मिलती है। हमें बनिये की तरह कभी हिसाब भी लगाना चाहिये और शत्रु की शक्ति को विवेक की तराजू में तौलना चाहिये। तभी देश को कुछ लाभ मिल सकता है।

अजीतसिंह - हां ठीक है।

दौलतसिंह - मेवाड़ की आज क्या स्थिति है ? देश में सुशासन नही है। लोग अपने व्यक्तिगत लाभ के लिये मातृभूमि के साथ गद्दारी कर रहे है। नमक खाते है इस राज्य का, गुण गाते हैं दूसरे राज्य के। कुछ लोग तो वास्तव में आस्तीन के सांप हैं। राजपूतों के दल जो पहले मेवाड़ की रक्षा के लिये, राजस्थान की रक्षा के लिये खानवा की रणभूमि तक प्राणों का उत्सर्ग करते थे, विदेशियों को मार मार कर कई बार देश के बाहर करके इतिहास में अपना नाम अमर किया, आज उनमें से कुछ लोग डाकू बनकर जनता को आतंकित कर रहे है। वाणिज्य, व्यापार, कृषि, शिक्षा तथा कल्याणकारी विकास कार्यो में बाधक बने हुए है। राज्यकोष में धन कहा से आये जबकि राज्य कर्मचारी छोटे छोटे काम को पूर्ण करने, शीघ्र करने के लिये जी भर कर रिश्वत ग्रहण करते हैं। राज की चाहे कितनी भी हानि हो जाय, उन्हें क्या चिंता ? किन्तु उनका व्यक्तिगत

कोष भरना ही चाहिये। युद्धों के लिये सेना और शस्त्र चाहिये किन्तु धन की कमी से पर्याप्त युद्ध-सामग्री कैसे खरीद सकते हैं ? धन के लिये आन्तरिक शान्ति और इसके लिये पारस्परिक एकता रहना अनिवार्य है। एकता बनाये रखने के लिये समर्थ लोगों को भी अपने अभिमान का अपनी स्वार्थपरता का त्याग करना पड़ेगा तभी हम अपने देश की रक्षा कर सकते है।

अजीतसिंह - इसमें तनिक भी सन्देह नही है कि हम पहले से निर्बल हैं, निर्धन है और किसी भी सुदृढ़ राज्य से टक्कर लेने में पूर्णतया सक्षम नहीं हैं।

दौलतसिंह - ईश्वर को लाख-लाख धन्यवाद है कि आपने वास्तविकता को अब स्वीकारा है। हम निर्बल ही नहीं, अत्यन्त दयनीय एवं शोचनीय स्थिति में हैं जैसे कोई मुर्दा अन्तिम सांसें गिन रहा हो। मुझे तो विश्वास है कि हमारे पूर्वजों के सुकर्मो एवं बलिदान के वरदान स्वरूप ही हमारा अस्तित्व बना हुआ है।

अजीतसिंह - हमारा ही क्या ? हमारे राजवंशों का भी यही हाल है।

दौलतसिंह - अजीतसिंह जी ! हमें किसी की बुराई से किसी प्रकार की होड़ नही करना चाहिये। मेवाड़ ने सदैव ही देश का बुरे दिनों में साथ-सुरक्षा, शान्ति और विकास कार्यों में नेतृत्व किया है। कला कौशल, साहित्य, संस्कृति की रक्षा और विकास किया है। सभी धर्मावलम्वी धर्मग्रन्थ, देवालय, मन्दिर, मस्जिद सुरक्षित हैं। मेवाड़ की सेना में हिन्दू, मुसलमान, जैन आदि सभी जाति के सैनिक एवं अधिकारी रहते आये है। जो व्यक्ति मेवाड़ में आये, वे हर प्रकार से सुरक्षित है।

अजीतसिंह - भाई दौलतसिंहजी, फिर हमें आप ही मार्गदर्शन दीजिये। अपने अमूल्य सुझाव दीजिये कि हमें क्या करना चाहिये।

दौलतसिंह - सब सरदारों में प्रेम, विश्वास की भावना पैदा करके हमें संगठित होना चाहिये। देश में सुशासन की स्थापना करना होगा। शासन में सुधार के लिये भ्रष्ट अधिकारियों को उचित दण्ड देना होगा। पक्षपात रहित होकर शासन को सुदृढ़, सुसमृद्ध, विकसित बलवान और प्रगतिशील बनाना होगा। खेती-बाड़ी की उन्नति, व्यापार तथा संगठन हमारी सुरक्षा की योजनाओं के प्राण हैं। हमारे देश पर आक्रमण करने वाली, हानि

पहुँचाने वाली शक्तियों का डटकर मुकाबला करना पड़ेगा। घरेलू मामलों में बाहर की शक्ति को पंच बनाना उचित नहीं है। विदेशी शक्तियां तो बन्दर बांट करके अपनी स्वार्थ-सिद्धि का पूर्ण लाभ उठाती है। आपने सुना ही होगा कि जोधपुर के मानसिंहजी ने अमीरखां की सहायता से अपने भतीजे अमरसिंह की हत्या करवा दी और चालीस लाख रुपया भी दो दलों से अमीरखां ने ले लिया ? स्वार्थ-सिद्धि के लिये बालक की निर्मम हत्या करना मानवता के विरुद्ध है और वीर क्षत्रीय समाज के लिये कलंक है।

अजीतसिंह - यह आपने बड़े आश्चर्य की बात सुनाई। मुझे तो इस विषय में तनिक भी ज्ञान नहीं है।

दौलतसिंह - अजीतसिंह जी, बड़े आश्चर्य की बात है कि आप मेवाड़ के प्रधानमंत्री हैं, सर्व शक्तिमान है आप। सारी सेना, गुप्तचर विभाग आपके अधीन है। फिर भी क्या आप इन तथ्यों से अनभिज्ञ हैं। आश्चर्य है! हमें कूप-मंडूक बनकर नहीं रहना चाहिये।

अजीतसिंह - उस बालक की हत्या का क्या कारण था ?

दौलतसिंह - जोधपुर महाराजा भीमसिंह के देहान्त के पश्चात् मानसिंह भीषण संघर्ष के पश्चात् राजा बन गये। सवाईसिंह, उम्मेदसिंह दोनों पोकरण ठाकुर तथा महाराज जगतसिंह अम्बेर वालों की सहायता से बालक अमरसिंह (धोकल) को राजगद्दी का उत्तराधिकारी घोषित कर उसे राजा बनाने की चेष्टा की गई अतः मानसिंह ने अमीर खां को रिश्वत देकर उसे निर्दयतापूर्वक मरवा दिया। कितना जघन्य अपराध है यह।

अजीतसिंह - अब विस्तार से समझ गया। अमीर खां भी बड़ा भयानक डाकू है। नये शस्त्र-अस्त्रों से उसने अपनी फौज को भी सजा रखा है। बीस लाख रुपये लेकर वीर बालक अमरसिंह को सदा के लिये नष्ट कर दिया।

दौलतसिंह - यही नहीं, अमीरखां ने विद्रोहियों के मुखिया सवाईसिंहजी से मित्रता के प्रमाण स्वरूप पगड़ी बदली, भाई बनाने का ढोंग किया। अमरसिंह की रक्षा के लिये उनसे भी बीस लाख रुपये ले लिये। इस मित्रता के उपलक्ष में अमीरखां ने एक जलसा भी किया था। नृत्य, गान, और मदिरा के दौर भी चले, किन्तु फिर भी अमीरखां ने विश्वासघात किया, और धोखे से आक्रमण करके सवाईसिंह के सैकड़ों साथियों को भी मौत के घाट उतार दिया।

अजीतसिह - यह तो भयंकर धोखेबाजी है। इसका अर्थ यह कि अमीरखां में तनिक भी सभ्यता विद्यमान नही है। वह केवल स्वार्थी और राक्षसी मनोवृत्ति का व्यक्ति है।

दौलतसिंह - हाँ इस घटना से स्पष्ट है कि जोधपुर पोकरण-जयपुर दोनों ओर के चालीस लाख रुपये भी गये और दोनों को उसने हानि पहुँचायी। सैकड़ों वीरों के प्राण व्यर्थ में ही नष्ट हो गये। यह पारस्परिक फूट, गृह-कलह का ही परिणाम है।

जब दोनों मेवाड़ी वीर परस्पर बातचीत कर रहे थे, उसी समय दौलतसिहजी की सुपुत्री रमा ने आकर कहा, पिताजी आपको घूमने आये कितना अधिक समय हो गया ? मैं आपको बहुत देर से ढूँढ रही थी।

दौलतसिह - क्यों बेटी, क्या आवश्यक कार्य है ?

रमा - महाराणाजी ने आपको शीघ्र बुलवाया है।

दौलतसिह - चलो बेटी चलते हैं। अच्छा अजीतसिहजी, अभी तो मैं जा रहा हूँ, फिर कभी मिलेंगे और देश में संगठन व समृद्धि और जनता की भलाई की योजनाओं पर विचार विमर्श करके उन्हें कार्यान्वित करेंगे।

---

## सतह

राजस्थान का भौतिक दृष्टि से सर्वोच्च सुन्दर नगर जयपुर को महाराजा जयसिंह ने अपनी तीव्र बुद्धि, ज्ञान और वैभव के बल पर बड़े बड़े तत्कालीन शिल्प निर्माण प्रवीण कलाकारों की सहायता से बसाया। उनके उच्च कोटि के परामर्शदाता भी कला मर्मज्ञ, विद्वान और भारतीय संस्कृति के पुजारी थे। उनके परामर्श और चातुर्य से परिपूर्ण बुद्धि वैभव विलास का ही चमत्कार है कि जयपुर की सुन्दरता, भव्य भवन और लम्बी चौड़ी सड़क, हवामहल, जन्तर मन्तर, अम्बेर का किला, त्रिपोलिया बाजार, महल देखने योग्य स्थानों का निर्माण करके उसको गुलाबी नगर के रूप में संसार में विख्यात कर दिया। बाद में भी उन्नति निरन्तर होती रही, जो जगत विख्यात है।

राजमहल का वह भाग जहाँ महाराजा साहब अपने प्रमुख दीवान (प्रधानमंत्री), मंत्री मण्डल के सदस्य, राज दरबार के प्रमुख सरदार, ठाकुर, जागीरदार, विद्वान परामर्शदाता आदि से विचार विमर्श करते, उसी भव्य भवन में दरबार लगा हुआ था। महाराजा जगतसिंह बहुमूल्य रत्नों· हीरे मोती, जवाहरात से मंडित स्वर्ण सिंहासन पर विराजमान हैं।

उनके दोनों ओर प्रथम पंक्ति में विशेष सामन्त, सरदार, मंत्री, सेनापति आदि राज्य के प्रमुख शासनाधिकारी विद्यमान हैं।

महाराजा जगतसिंह सबकी ओर उन्मुख होकर कहने लगे, आम्बेर राज्य के कर्णधारो, आधार स्तम्भो ! वीर सरदारो एवं विद्वान परामर्श· दाताओ ! आज एक विशेष प्रयोजन से आप सबको आमंत्रित किया गया है। आपको आज अवकाश के दिन भी बुलाया गया। आपको कष्ट अवश्य हुआ होगा, यदि अनुमति हो तो आपके समक्ष कुछ निवेदन करूं ?

एक सामंत आदरपूर्वक खड़े हुए और कहने लगे, क्या महाराजा साहब की दृष्टि में हमारी सम्मति का कुछ मूल्य है ? यदि है तो कृपया स्पष्ट बताने का कष्ट करें ?

दूसरा सामंत - क्या महाराजा साहब इस सभा के माननीय सदस्यों की सम्मति का उतना मूल्य समझते हैं जितना कि आपके पूर्वज पुरुष समझते आये हैं ? आज तक आपने कब हमारी राय, इच्छाओं, आकांक्षाओं की चिन्ता की है ? आप तो शायद हमें अपना शत्रु समझते है।

म. जगतसिंह - आपकी इन बातों का क्या अभिप्राय है ? मैं यह समझता हूँ कि जो कुछ मैं करना चाहता हूँ, उसको आप सुनना भी नही चाहते हैं। इस राजगद्दी की कभी भी ऐसी अवमानना और ऐसी अवहेलना नहीं हुई। मुझे आश्चर्य है कि आप अपने हृदय में ज्वालामुखी छिपाये बैठे है जिसका मुझे पहले किसी ने आभास भी नही दिया।

तीसरा सामंत - श्रीमान यह भी स्पष्ट है कि राज्य के सामन्तों का, उन स्वामी-भक्त सरदारों का जो राज्य के रक्त से संबंधित परिजन है, उनका ऐसा अपमान भी पहले कभी नही हुआ जैसा कि आपके द्वारा किया जाता है।

महाराजा - यह आप लोगो का भ्रम है, सन्देह का इलाज तो बड़े-बड़े वैद्यों के पास भी नही है।

चौथा सामंत - यह आप क्या कह रहे है ? भ्रम है ? बड़ा आश्चर्य है । पुरुषोत्तम भगवान राम के वंशज चन्द्रवंशी प्रतिष्ठित कछवाहा कुल प्रमुख महाराजा जगतसिंहजी जयपुर नरेश एक वैश्या को लेकर इस पावन सिंहासन पर वैठकर इसे कलंकित करें और हमें आपके साथ उसके सामने भी सिर झुकाना पड़े, यह हमारा अपमान नही है तो और क्या है ?

पहला सामंत - यही नहीं श्रीमान् ! राज्य के ऊँचे ऊँचे पदों पर दरजी, नाई, कहार, मोची तथा वैश्याओं के रिश्तेदारो की नियुक्ति की जाती है और उच्च वंश के राज्य के स्वामी भक्त लोगो को अपने अधिकारों से वंचित करते है, यह सब अब सहन नहीं हो सकता, श्रीमान् ।

महाराजा - यह आपके अधिकार क्षेत्र की बातें नही हैं । आज राज्य के हित में जो उपयुक्त समझा जाता है, वही किया जा रहा है । उच्च जाति, उच्च वंश का व्यक्ति ही श्रेष्ठ हो, मैं ऐसा नही मानता । नागरिकों मे से यदि कुछ चुने हुए विशेषज्ञ व्यक्तियों को अवसर दिया जाय तो वे भी अपनी प्रतिभा का परिचय दे सकते है । मैंने भागवत में पढ़ा है कि आने वाले युग में जाति, धर्म, लिंग, वर्ग की मर्यादा भंग हो जायेगी, किसी भी जाति का व्यक्ति शासक बन सकता है । आपको अपनी सीमाओ में ही सोचने का अधिकार है ।

दूसरा सामंत - इस राज्य की स्थापना, विस्तार और रक्षा में हमारे पूर्वजों ने भी अपने रक्त से सिंचन किया है महाराजा साहब । इस राजगद्दी की प्रतिष्ठा, मर्यादा और सुकीर्ति को कलंकित न होने देना हमारा भी कर्त्तव्य है ।

चौथा सामंत - हमारा स्पष्ट निवेदन है कि यदि महाराजा साहब किसी भी महत्वपूर्ण कार्य में हमारी सम्मति, सहयोग की आशा करते है तो सर्वप्रथम केसरवाई और रसकपूर को जयपुर राज्य से निर्वासित करने की कृपा करें ।

महाराजा - केसरवाई और रसकपूर के मुझसे जो सम्बन्ध है, वह व्यक्तिगत जीवन के सम्बन्ध है । इन गतिविधियों में आप लोगों का हस्तक्षेप आपके अधिकार के वाहर की बात है ।

पहला सामंत - आप भूलते है महाराजा साहव ! राज्य का कोई भी कार्य व्यक्तिगत नही होता है । हमे मर्यादा पुरुषोत्तम रामचन्द्र के वंशज

होने का गर्व है, जिन्होंने एक तुच्छ धोवी के कहने पर सती साध्वी सीताजी को पुन: वन में भेज दिया था। वह जनता के परामर्श, रक्षा का राजहित में ही परिणाम था। वह स्थिति प्रजातंत्र वाली थी लेकिन आप तो खुले आम ...... ।

महाराजा - भगवान रामचन्द्र अवतार थे, हम साधारण व्यक्ति हैं। हमसे ऊंचे आदर्श की आशा करना भी भूल होगी। यह कलियुग है। आज आप खुद ही बताइये, कौन सा राजा है जो आदर्श है, जिसे हम सच्चरित्र कह सकें। सब लोग अपने वस्त्रों में नंगे हैं। भगवान राम ने सीता के निर्वासन के पश्चात् दूसरा विवाह नहीं किया, किन्तु आजकल के राजा बहुपत्नीवादी हैं। इस पर भी सन्तोष नहीं होता है तो उनकी कुदृष्टि दासियों और जिन्हें नीच कहते हैं, उनकी रूपवती स्त्रियों पर रहती है। वह गुप्त पाप आपको नजर नही आता? क्या आप सभी इस परिभाषा के अन्तर्गत शत प्रतिशत पूर्ण चरित्रवान हैं?

दूसरा सामंत - स्पष्ट बात के लिये पहले ही क्षमा चाहते हुए कहना चाहता हूं कि आप तो विलासिता का बिलकुल नग्न प्रदर्शन करते हैं। राजमहलों में कुछ भी होता रहे, उससे राजगद्दी का सम्मान कम नहीं होता है। आप तो एक वैश्या को राजरानी का सम्मान देते हैं जो केवल राजपूत रमणी को ही मिलना चाहिये। आप केसरबाई और रसकपूर को हाथी पर साथ वैठाकर तीज त्यौहारों पर नगर में निकलते हैं, दरबार में साथ लेकर बैठते है। और हमेशा आशा करते हैं कि हम उन्हें महारानी-पटरानी का सम्मान दें और उनके आगे भी शीश झुकावें। ये बातें असहनीय हैं। हम राज की सेवा करते हैं, आत्मसम्मान के साथ। हमने अपने हाथ बेचे हैं, अपना स्वाभिमान नहीं बेचा है, अपनी मर्यादा नही छोड़ी है। हम उसके सामने सिर झुकाने के स्थान पर अपना सिर कटाना पसन्द करते है श्रीमान्!

महाराजा - शायद आप लोगों को इस बात का पूर्ण ज्ञान नही है कि केसरबाई व रसकपूर का जीवन उतना ही पवित्र है जितना एक राजपुत्री का होता है।

तीसरा सामंत - महाराजा साहब-आप वीर क्षत्रीय जाति का अपमान कर रहे हैं? एक विधर्मी वैश्या से क्षत्रीय वीरागना की तुलना करते हैं? बड़ा आश्चर्य है कि आप.... ।

महाराजा ने जब स्थिति को बिगड़ते हुए देखा और सभा में विद्रोह के स्वरों को दबाना कठिन लगा तब वे तनिक नरम पड़ गये और कहने लगे, मेरे वीर और बुद्धिमान सामन्तो, मैं स्वीकार करता हूँ कि कुछ कार्य मैंने राजमर्यादा और परम्परा के विरुद्ध किये हैं। इसमें मेरा व्यक्तिगत दोष कम है। मुझे जिस वातावरण में रखा गया, जिन संस्कारों को मैंने ग्रहण किया, वह आपके संस्कार और वातावरण से भिन्न है। प्रत्येक मनुष्य अपने वातावरण की उपज होता है। कभी कभी वंश परम्परा से अधिक वातावरण का प्रभाव पड़ता है। मेरे कुछ सुधारवादी कार्य आपको उचित नहीं लगते। वैश्याओं के समाज को किसने पैदा किया ? हमारे इसी समाज ने ही पैदा किया। मैं पूछता हूं-भोली नवयुवती जिसमें रूप है, गुण है, पाप पंथ से बचना चाहती है तो क्या उसे फिर नरक कुण्ड में धक्का दे देना अपराध बन जाता है ? क्या इससे राजवंश का अपमान होता है ?

चौथा सामंत - आप उसे आश्रय दें, सम्मान दें, उसे चाहे हीरे जवाहरातों से पूर्ण रूप से ढक दें, किन्तु राजपूत वीरांगना का स्थान देना कहां तक उचित है ?

पहला सामंत - आप उसके नाम पर जागीर दे सकते है, महल बनवाकर दे सकते हैं-अपने अवकाश का समय उसे दे सकते है किन्तु आप उसे राजगद्दी पर, सार्वजनिक स्थानों पर अपने पास नहीं बैठावें तो उत्तम रहेगा।

दूसरा सामंत - दुख इस बात का है कि आपने रसकपूर को हमारे मुकदमों का न्याय करने का भी अधिकार दे दिया। वे वीर सामन्तों के भाग्य-निर्णय का कार्य भी करते हैं। यह कहां तक न्याय संगत है ? कहां तक उचित है ? आप हमारी स्थिति में आकर सोचिए, श्रीमान्।

महाराजा - मैं अच्छी तरह जानता हूं कि आप मेरे जीवन की सच्चाई को स्वीकार नही करेंगे। आप लोग इस बात के समर्थक हैं कि पाप परदे के पीछे पनपता रहे। आप यह नहीं चाहते कि पाप के पथ पर जाने वाले को अपने जीवन को सुधार कर पुण्य मार्ग पर जाने का अवसर दिया जाय। जो व्यक्ति अनजाने, अनचाहे कारणों से, दबाव से कुपथ पर चला गया हो, उसकी सन्तान भी उसी मार्ग पर चले, क्या समाज का यही सही विधान है ? यदि कुपथ-गामी को सुपथ पर आने का अवसर नही दिया जाएगा तो समाज में फिर सुधार कैसे आयेगा ? बताइये आप।

तीसरा सामंत - महाराज साहब ! रूप की उपासना, वासना की तृप्ति, रस रंग की उत्तेजना, कामवासना का नग्न प्रदर्शन, निर्लज्ज संभोग को सुधार का जामा पहनाने का निष्फल प्रयत्न व्यर्थ है। हमारी प्राचीन परम्पराएं, मर्यादाएं, संयम रखने की विधियां, रीति रिवाज, रूढ़ियां विशद दीर्घकालीन अनुभवों का परिणाम हैं। इनका पालन करना प्रत्येक मनुष्य का कर्त्तव्य है। विशेष रूप से यह एक शासक के लिए अत्यन्त आवश्यक है। कहावत है यथा राजा तथा प्रजा। आशा है आप इन बातों पर गंभीरता से विचार करके अपनी स्थिति का विश्लेषण करके आत्म-चिन्तन द्वारा अच्छा परिणाम निकालने का कष्ट करेंगे।

चौथा सामंत - महाराजा साहब! आपका अकारण विरोध, अपमान अथवा असम्मान करने का हमारा तनिक भी विचार नहीं है। सार्वजनिक स्थानों पर जब आपके व्यक्तिगत जीवन, व्यक्तिगत कार्यों की आलोचना, असम्मानपूर्ण बातें सुनते हैं तो हमें बहुत दुख होता है। हिन्दुओं का सूर्य कहलाने वाले मेवाड़ के महाराणा भीमसिंहजी की तीनों लोकों की सर्वोत्तम सुन्दरी, रूप गुण की राशि कृष्णाकुमारी से जब आपका संबंध निश्चित हो चुका है, हम सब चाहते हैं कि आपका यश और कीर्ति सुगंध ऐसी फैल जाये, जिससे भावी महारानी के हृदय में आपके प्रति सम्मान आदर और प्रेम की भावना उत्पन्न हो, विकसित हो और उनको आत्म-सुख और गौरव की रत्नराशि प्राप्त हो। हमारी यही शुभकामना आपके लिये है।

महाराजा - मुझे वास्तव में इस बात का दुख है कि मेरे अनुचित व्यव-हार से आप लोगों को इतनी मानसिक पीड़ा हुई। आपके दिलों को कुछ ठेस पहुँची। आपसे एक निवेदन है कि आप मुझसे किसी प्रकार की प्रतिज्ञा तो नहीं लें, किन्तु मुझे भी स्वात्म-चिन्तन का अवसर देने का कष्ट करें तो मैं योग्य शासक, सुयोग्य राजा, उत्तम पति और सर्वोत्तम मनुष्य बनने का भरसक प्रयत्न करूंगा।"

पहला सामंत - हमें वास्तव में इस बात की प्रसन्नता है कि आपने हमारे सुझावों को मान लिया, उस पर आत्म चिन्तन कर व्यावहारिक सुधार करने का आश्वासन दिया। आपकी बुद्धिमानी की हम सराहना करते हैं।

दूसरा सामंत - अब हमें आज्ञा दीजिये महाराजा साहब कि हमें क्या करना है? हमसे आप क्या सेवा करवाना चाहते हैं? हम सब तैयार हैं।

महाराजा - क्या आप लोगों को मालूम है कि जोधपुर के वर्तमान महाराजा मानसिंह ने अपने भतीजे और मेरे सगे भानजे अमरसिंह (धोकल) की धोखे से अमीरखां द्वारा हत्या करवाई है ? वास्तव मे अमरसिंह (धोकल) ही अपने पिता भीमसिंहजी के स्वर्गवासी होने के पश्चात् राजगद्दी का अधिकारी था.... ।

अभी महाराजा की बात पूरी भी नहीं हुई थी कि यकायक एक सैनिक ने झुक कर महाराज का अभिवादन किया और कहा, दुहाई हो महाराजा साहब की ।

महाराजा - क्या बात है ?

सैनिक - महाराजा साहब, कुछ महीनों पहले आपके द्वारा हमारी भावी महारानी के लिये जो पहरावा, आभूषण, मेवे मिठाई आदि सिंजारे पर सगाई का सामान मेवाड़ भेजा गया था, उसे खारी नदी के उस पार शाहपुरा के निकट मार्ग में ही जोधपुर की सेना और अमीरखां की फौज ने लूट लिया था । क्या यह हमारा अपमान नही था ?

दूसरा सामंत - इसका क्या और भी कोई कारण हो सकता है ?

सैनिक - श्रीमान ! उनका कहना है कि मेवाड़ की राजकुमारी का विवाह वर्तमान जोधपुर नरेश मानसिंह से ही होगा ।

महाराजा – यह नहीं हो सकता । यह नितान्त असंभव है ।

तीसरा सामंत - हां, महाराजा साहब, जब तक एक भी कछवाहा वीर राजपूत जीवित है, मेवाड़ की राजकुमारी कृष्णा का विवाह जोधपुर नरेश से नही हो सकता है । अगर वह राजरानी बनेगी तो केवल जयपुर महाराज की ही, वरना किसी की नहीं ।

महाराजा - यह हमारा सरासर अपमान है । मैं इसका जोधपुर के राठौरों से अवश्य बदला लूंगा । उनकी इस उद्दण्डता का दण्ड भी शीघ्र देना पड़ेगा । हमें शीघ्र ही पूर्ण सैनिक तैयारी करके मारवाड़ पर आक्रमण करना चाहिये ।

चौथा सामंत - अवश्य महाराज । हमें सैनिक तैयारी करके शीघ्र ही जोधपुर को परास्त करके मेवाड़ की राजकन्या से विवाह करना चाहिये ।

महाराजा - तो आज का दरबार समाप्त होता है । अब आप सभी कछवाहों के राजवंश की प्रतिष्ठा की रक्षा के लिये, मान-मर्यादा की

के लिये अधिकाधिक त्याग और बलिदान करेंगे, इसका मुझे पूर्ण विश्वास है।

सब लोग महाराजा की जय बोलते हुए खड़े हो जाते हैं। महाराजा अपने महल में चले जाते हैं। सभी उपस्थित शासन अधिकारी सामन्त आदि अपने अपने स्थानों पर चले जाते हैं।

---

## अठारह

उदयपुर के पश्चिमी सीमान्त क्षेत्र में एक खेत के किनारे पेड़ की छाया के नीचे बैठकर संग्रामसिंह जो हुक्का पी रहे थे। अब वे सरदार की सैनिक वेशभूषा में नही थे। धोती और मेवाड़ी अंगरखो, केसरिया पगड़ी, भव्य ललाट पर तेजस्विता दृष्टिगोचर हो रही थी। वे विचार-मग्न बैठे हुए अकेले ही हुक्के का आनन्द ले रहे थे।

कुछ देर में घूमते हुए दौलतसिंहजी आ गये। उनको अपने निकट आते देखकर संग्रामसिंहजी खड़े हो गये और आदरपूर्वक दौलतसिंहजी का अभिवादन करते हुए स्नेहपूर्ण आलिंगन करते हुए गले से लग गये।
संग्रामसिंह - आप कब आये ?

दौलतसिंह - बस आ ही तो रहा हूँ। लगभग एक महीने मेवाड़ के बाहर ही रहा। कार्तिक मेले में पुष्कर का स्नान करने तथा कुछ घूमने फिरने चला गया था। साथ में राजघराने की कुछ महिलाएं, पुरुष और राजकुमारी कृष्णा भी गई थीं।

संग्रामसिंह - चलो बहुत अच्छा हुआ। यात्रा और भ्रमण करने में आनन्द आता है, ज्ञानवृद्धि होती है। साथ ही दैनिक कार्यों की एकरसता भी समाप्त होकर जीवन में नई स्फूर्ति का अनुभव होता है। और पुष्कर की तीर्थ यात्रा तो वैसे ही धर्म कार्यों में, आत्मिक उन्नति और मोक्ष प्राप्ति में सहायक है। मैं यहां खेत पर हूँ, इस बात का आपको कैसे पता लगा ?
दौलतसिंह - पहले मैं आपके निवास स्थान पर गया था। वहां से खेत पर आपके पधारने का समाचार विदित हुआ। हृदय में एक तीव्र इच्छा हो रही थी कि मैं आपसे मिलूं इसलिये यहाँ आ गया। आप ने आजकल ये

कैसा ठाट बना रखा है। तलवार छोड़कर हल को अपना लिया है। ध्वंस को त्यागकर निर्माण का पथ अपना लिया है।

संग्रामसिंह - क्या करता ? खाली मस्तिष्क शैतान का घर होता है, इसलिये प्रत्येक व्यक्ति को किसी न किसी उपयोगी सत्कार्य में लगे रहना चाहिये। यही सत्पुरुषों का लक्षण है। अतः मैंने कृषि कार्य को महत्व दिया है। इसमें अब मुझे आनन्द भी आने लगा है।

दौलतसिंह - राजस्थान के राज दरबारों में क्या शक्तावत वीर क्षत्रीय के लिये उपयुक्त स्थान की कमी है ? आपकी वीरता का क्या यही मूल्य है ?

संग्रामसिंह - इस युग की कुटिल राजनीति से मुझे घृणा हो गई है। जिस घृणित वातावरण से मैं घबरा गया था, अब उस कीचड़ में जाने की लालसा नहीं है। मेरे लिये अपने श्रम से धरती को हरा भरा करने और सुख समृद्धि की ओर बढ़ने का यही मार्ग उत्तम है। इस जीवन मे मुझे शान्ति का, आनन्द का अनुभव हो रहा है भाई दौलतसिंहजी।

दौलतसिंह - किन्तु मातृभूमि मेवाड़ में चारों ओर अशान्ति है। उस अशान्ति, विद्रोह और अराजकता, असुरक्षा को दूर करना भी हमारा परम कर्त्तव्य है। सुरक्षा के लिये हल की नहीं, तलवार की, प्रबल भुजाओ की शक्ति की आवश्यकता है। हमारी जन्म भूमि पुकार रही है, हमारी परम्परा, आबरू की लाज़ रखने के लिये धरती माता पुकार रही है। बाप्पा रावल की राजगद्दी का, मेवाड़ का मान रखना हमारा परम कर्त्तव्य है। इसके लिये आपको शीघ्र तैयार होना है।

संग्रामसिंह – दौलतसिंहजी ! हम में विशाल दृष्टिकोण का अभाव है। हमें केवल मेवाड़ या राजस्थान ही नहीं किन्तु संपूर्ण भारत माता की सामूहिक रक्षा का प्रयत्न करना चाहिये। पर देखने में आता है कि हम छोटे छोटे स्वार्थो में ही इतने संलग्न रहते है कि संपूर्ण राष्ट्र की रक्षा की बात ही गौण हो जाती है। अभी मेवाड़ पर ऐसा क्या सकट आ गया जिसके लिये आप इतने चिन्तित प्रतीत हो रहे है ?

दौलतसिंह - आपके उत्तम विचारो और संपूर्ण भारत की रक्षा के विचारों का मैं समर्थक हूं। किन्तु इस समय तो अपने घर में ही ज्वाला धधक रही है। मेवाड़ भूमि पर तीन ओर से आक्रमण की संभावना है। इसमें

हमारी स्थिति बिलकुल ही बिगड़ने की पूर्ण संभावना है। राजकुमारी कृष्णा के विवाह को लेकर दो राजघरानों में प्रतिद्वन्द्विता हो रही है। एक ओर जयपुर का राजघराना जहाँ कृष्णाकुमारी की सगाई का टीका भेजा गया, जिसे स्वीकृत कर लिया गया, अब महाराज जगतसिंह दल बल सहित विवाह करने हेतु अपनी शक्तिशाली फौज को लेकर आने वाले हैं। और दूसरी ओर जोधपुर के वर्तमान महाराज मानसिंहजी भी कृष्णा से विवाह करने हेतु जिद कर रहे हैं। उनका कहना है कि पहले कृष्णा की सगाई का नारियल जोधपुर के महाराजा भीमसिंह के लिये भेजा गया था, जोधपुर के राजा से संबंध स्थापित हो गया था, उनकी मृत्यु के पश्चात् वर्तमान राजा मानसिंहजी विवाह के अधिकारी हैं अतः विवाह जोधपुर नरेश से होना चाहिये। अगर यह विवाह नहीं हुआ तो यह सपूर्ण राठौर जाति का अपमान होगा।

सग्रामसिंह - बड़ा विचित्र तर्क है जोधपुर नरेश का, विवाह तो व्यक्ति से होता है. राजगद्दी से नहीं। जब भीमसिंहजी स्वर्गवासी हो गये तो मानसिंहजी के साथ विवाह करने का कोई प्रश्न हो नहीं उठता।

दौलतसिंह - मानसिंहजी ने सुना है कि डाकुओं के भयंकर सरदार खूनी और हत्यारे लुटेरे अमीरखां को अपना मित्र बनाया है। उसे लाखों रुपये खर्चे के या रिश्वत में दिये गये है। और आगे भी लाखों रुपये देने का वादा किया है। यदि जोधपुर नरेश के साथ विवाह से इन्कार किया जाएगा तो जोधपुर और अमीर खां की शक्तिशाली सेनाएं मेवाड़ पर आक्रमण करके जन, धन की भयंकर हानि करेंगी। इसमें कोई सन्देह नही है।

संग्रामसिंह - हम वास्तव में एक विकट समस्या में फंस गये है। इस संकट से बचने का मार्ग शीघ्र ढूंढना चाहिये।

दौलतसिंह - क्योंकि आप लगभग दो वर्षों से उज्जैन चले गये थे, मालवा की पुण्य भूमि को आपने यात्राएं की हैं अतः आप राजस्थान के समाचारों से अवगत नहीं हैं। पाँच छः महीने पहले महाराज जगतसिंह जयपुर नरेश ने कृष्णा के टीके को स्वीकार कर लिया था। सावन की तीज पर सिंजारे के लिये बहुमूल्य कपड़े, जेवर, मेवे फल आदि उदयपुर कृष्णा के लिये भिजवाये थे। शाहपुरा भीलवाड़ा के निकट मार्ग में ही अमीरखां,

राठौर और दौलतराव सिंधिया ने उस सामग्री को लूट लिया। जयपुर के सौ डेढ़ सौ सिपाही व अधिकारियों को मौत के घाट उतार दिया। इसे महाराजा जयपुर ने अपनी प्रतिष्ठा का प्रश्न बना लिया। इसके विरोध-स्वरूप जयपुर जोधपुर की सेनाओं में एक भयंकर युद्ध हो चुका है। मानसिंह पराजित होकर जोधपुर के किले में जाकर सुरक्षित हो गये अन्यथा वे युद्ध क्षेत्र में ही काम आ जाते।

संग्रामसिंह - वास्तव में इस घटना से जयपुर नरेश और मेवाड़ का अपमान हुआ है। मानसिंह ने विवाह करने की अभी भी हठ छोड़ी है या नहीं ?

दौलतसिंह - यदि हठ छोड़ दें तो फिर उन्हें राठौर कैसे कहेंगे ? ये कन्नौज के राजा जयचन्द की परम्परा को व्यर्थ ही अपनाते है। मानसिंह जितने वीर हैं, उतने हठधर्मी और अभिमानी भी हैं। अपनी इच्छा, अपना स्वार्थ पूरा करने हेतु वंश की मर्यादा, राज्य का हित, देश की सुरक्षा का ध्यान नही रखते हैं। इसका स्पष्ट प्रमाण है कि अपने भाई के लड़के अमरसिंह (धोकल) की जिस अमीरखा ने धोखे से हत्या की, उसको लाखों रुपये देकर अपने पक्ष में लड़ने हेतु तैयार कर लिया है। अमीर खां के पास आग उगलने वाली तोपें हैं, बन्दूकें हैं, पिस्तौल हैं। उसी के बल पर मानसिंह अपनी बरात चढ़ाकर उदयपुर की ओर शीघ्र प्रस्थान कर पहुँचने वाले हैं।

संग्रामसिंह - और जयपुर वाले ?

दौलतसिंह - जयपुर वाले भी पूर्ण रूप से संगठित होकर बीकानेर के वीरों की सहायता से नवीन हथियारों के साथ शीघ्र ही बारात सजाकर उदयपुर आने वाले हैं। अब मेवाड़ दरबार की स्थिति इतनी संकटपूर्ण हो गई है कि इनमें से किसी भी एक पक्ष का समर्थन करने पर दूसरे पक्ष का कोप-भाजन होना ही पड़ेगा।

संग्रामसिंह - मेरे विचार से विवाह तो वहीं होगा, जहाँ पर टीका भेजा, और स्वीकार हुआ है। अभी सिसोदिया वंश का खून पानी नही हो गया है। हमारी तलवारों को जंग नहीं लगा है। हमारे बाणो की अपार राशि समुद्र में नही डूब गई है।

दौलतसिंह - यही तो चिन्ता का सबसे बड़ा कारण है। यह भी सुना है कि जवानसिंह जोधपुर नरेश के पक्ष में है।

संग्रामसिंह - यह तो और भी बुरा है। महाराणा भीमसिंह की इच्छा के विरुद्ध राज-परिवार के किसी सदस्य के अनुचित पक्षपात से संपूर्ण मेवाड़ की हानि हो सकती है। मेरा अनुमान है कि मेवाड़ की सेना में भी दो दल हो गये होंगे। एक दल जोधपुर नरेश का और दूसरा दल जयपुर नरेश का समर्थन करेगा। यह मेरा अनुमान है।

दौलतसिंह - संग्रामसिंहजी, वेतन-भोगी सेना की नैतिकता का कोई भरोसा नहीं है। वह न्याय-अन्याय नहीं देखती, यही तो परम्परागत बुराई है। कुछ सैनिक अंधे होकर एक पक्ष का समर्थन करेंगे तो दूसरा पक्ष लड़ने में असावधानी और निरुत्साह से कार्य करेगा। मेरे विचार से पहले का वह सैनिक संगठन अच्छा था जब प्रत्येक व्यक्ति को राज्य में सैनिक शिक्षा दी जाती थी और ऐसे धर्म युद्ध के, प्रतिष्ठा के, सुरक्षा के युद्ध-अवसर पर उन्हें बुलाया जाता था। इस प्रकार देश की सैनिक शक्ति किसी एक व्यक्ति के हाथ बिक नहीं जाती थी।

संग्रामसिंह - दौलतसिंहजी, आपने तो मेरी भुजाओं में पुनः विद्युत का संचार कर दिया है। मेवाड़ की इस दयनीय धधकती ज्वाला वाली संकट-पूर्ण परिस्थिति का अनुभव करके और संभावी विनाश की कल्पना-मात्र से मेरा खून खौल उठा है। जितने भी शक्तावत मेवाड़ अथवा आस-पास के राज्यों मे बिखरे हुए है, उन्हें शीघ्र बुलवाकर मैं एक अजेय सैनिक शक्ति का निर्माण करूंगा। चाहे महाराणा साहब मुझे बुलावें अथवा नहीं, मैं मेवाड़ मातृभूमि की रक्षा के लिये अपने प्राणों की बलि चढ़ाने को तत्पर हूँ। उन्होंने खड़े होकर बड़े उत्साह और जोश के साथ मातृभूमि को प्रणाम किया और धरती की माटी का तिलक लगाया।

दौलतसिंह - आपने तो विचित्र परिवर्तन का संकेत एवं प्रमाण दिया है। मुझे इस बात की हार्दिक प्रसन्नता है कि क्षुद्र व्यक्तिगत स्वार्थों से बहुत ऊपर उठकर आप राष्ट्र एवं समाज के हित में बलिदान हेतु तत्पर हैं। आप जैसे वीरों पर हमारे देश को अभिमान है। एक बात विचारणीय है कि तोपखाने और बन्दूकों के आक्रमण के सामने हमारे पुराने हथियार कैसे सामना करेंगे ?

संग्रामसिंह - युद्ध में आत्म-विश्वास और सूझ-बूझ का भी महत्व होता है। केवल हथियारों के संग्रह से कुछ नहीं होता। उनको चलाने का अभ्यास, पुनअभ्यास भी आवश्यक है। फिर जोधपुर के महाराज मानसिंह

किराये के सैनिक और विश्वासघाती अमीर खां को लेकर सफलता की यदि आशा करते हैं तो यह उनकी भूल ही होगी।

दौलतसिंह – इस संभावी युद्ध में हमें जोश में आकर अपने प्राणों का वलिदान करना ही आवश्यक नहीं, हमें अपना रक्षा और मान मर्यादा को सुरक्षित रखने के उद्देश्य की पूर्ति भी करना है।

संग्रामसिंह - हमें तो अपना कार्य गंभीरता से, पूर्ण शक्ति व विश्वास से करना है। भगवान कृष्ण ने गीता में कहा है-कर्मण्यवादिके....... ....

दौलतसिंह - हमारा प्रयत्न, हमारा संगठित होकर सपूर्ण शक्ति से एक होकर युद्ध करना कभी भी व्यर्थ नही जाएगा। आप के जैसे आदर्श कर्मवीरो की मेवाड़ को आवश्यकता है। वीर पुरुष मातृभूमि के सुख का साथी न बने तो कोई विशेप बात नही है। किन्तु यदि राष्ट्र पर संकट के वादल घिर आवें, मानवता का विनाश निकट हो तो सच्चा कर्मवीर वही है जो संकट में बिना भेदभाव, मानापमान की भावना के रक्षा में सक्रिय भाग ले और देश को सफलता तक ले जाने में समर्थ हो इसीलिये मैं आपको सादर बुलाने आया हूँ।

संग्रामसिंह - मैं तत्पर हूँ। चलिये मैं अभी आपके साथ चलता हूँ। मुझे एक क्षण का विलम्ब भी अनुचित लगता है। हमारी तनिक सी शिथिलता और असावधानी से संपूर्ण मातृभूमि का विनाश हो सकता है। इस प्रकार मेवाड़ के नर-रत्न संग्रामसिहजी तुरन्त तैयार होकर दौलतसिंह जी के साथ अपने घर पर आ गये। घर में जाकर तुरन्त अपना वीर सैनिक वेश धारण किया। हाथ में तलवार ली तथा अपने अन्य हथियारो को तैयार करने लगे। अपने वीर शक्तावत सैनिकों को मेवाड़ भूमि और आसपास के राज्यों से बुलवाने हेतु संदेश-वाहक भेज दिये।

मातृभूमि की रक्षा के लिये, अपने सिसोदिया वंश की प्रतिप्ठा की रक्षा के लिये जिस वीर ने भी जहाँ भी सुना, उसने तुरन्त उदयपुर मेवाड़ की ओर प्रस्थान किया। इस प्रकार संग्रामसिहजी ने हजारों शक्तावतों को उदयपुर में एकत्रित कर, उन्हे चूण्डावतों से व्यक्तिगत भेदभाव भुलाकर जी-जान से मेवाड़ की रक्षा हेतु तैयार कर लिया। वे दौलतसिहजी के साथ दीवान अजीतसिहजी तथा महाराणा भीमसिहजी से मिले। विखरी हुई शक्ति के संगठित होने और संकट से निपटने की तैयारी मे महाराणाजी को वल मिला। उन्होंने सभी राजपूतों से मेवाड़ की रक्षा का आग्रह किया। चारों ओर रणक्षेत्र में लड़ने का अभ्यास होने लगा। सेना में नया जोश आ गया।

# उन्नीस

राजवाटिका की शोभा दर्शनीय थी। वैसे ही उदयपुर अरावली पर्वतमाला की रम्य पर्वत-श्रेणियों से घिरा हुआ है। इस नगर की शोभा वर्षा ऋतु में और भी बढ़ जाती है, किन्तु इस समय वसन्त ऋतु की शोभा चारों ओर आच्छादित है। रंग-बिरंगे फूलों से विभिन्न प्रकार के लता-कुंज सुशोभित है। आम के पेड़ों पर कोयल बैठी है। इधर उधर उचक फुदक कर अपना मनोरजन कर रही है। साथ ही अपनी सुमधुर वाणी से वातावरण को सुन्दर, सरस एवं सुरम्य बना रही हैं।

राजकन्या कृष्णाकुमारी अपनी सहेलियों के साथ राजवाटिका में भ्रमण करते हुए आनन्द से घूम रही है। कोयल की कूक उसके हृदय मे मिलन की हूक उत्पन्न कर रही है। कोयल की मधुर ध्वनि सुनकर कृष्णाकुमारी संभवतः यह विचार करके कहती है कि सखी कोयल-अभी तुम अपनी मधुर वाणी मे बोलने का कष्ट मत करो क्योंकि मैं अकेली हूँ, मेरा प्रियतम नही है। सारे संसार की जो कठोरता है, उससे मेरी भाग्यलिपि लिखी है। इस कठोरता में मधुरता का संयोग होना असंभव लगता है। संसार में सब ओर स्वार्थ की आंधी चल रही है। तुम्हारे गीतों की मधुर ध्वनि सुनने का किसे कहां अवकाश है? आत्मा को आनन्दित कर देने वाले तुम्हारे गीतों का मूल्य इस ससार के लोगों की दृष्टि मे शून्य के समान है। इस उद्यान रूपी सुनहली सृष्टि का जो स्वामी है, वह बड़ा निष्ठुर, निरंकुश और निर्दय है। तुम्हारी वाणी के मनमोहक आकर्षण से मृग-गण मोहित हो जायेगे तो बहेलिये अपने तीक्ष्ण बाणों से उनके प्राणों का हरण कर लेगे। इस संसार के लोगों के हृदय की आंखें सर्वदा बन्द रहती हैं। अतः हम अपने हृदय की पीड़ा को किसी भी रूप में प्रदर्शित करेंगे तो भी लाभ होने की कोई आशा नही है। कोयल को सम्बोधन करके कृष्णा कहती है कि इस संसार में चारों ओर मुझे विष ही विष दृष्टिगोचर हो रहा है। यदि तू अपनी अमृत-वाणी से कुछ अमृत की वर्षा कर भी देगी तो भी मानव-जीवन के विष मे डूबे जीवन को सुधार कर पुनः अमृतमय बनाना कठिन ही नहीं, असंभव है।

जब कृष्णा एक संगमरमर के चबूतरे पर बैठ कर पूर्णरूपेण रससागर में ओतप्रोत होकर अपनी मधुर वाणी में गाने में तल्लीन थी, तभी रमा ने प्रवेश किया। रमा ने कहा-वाह ! वाह ! राजकुमारी जी आपने तो सोने में सुहागा बिखेर दिया है। इधर गाने में आप अपनी सुध बुध भी भूल गई हैं। उधर महारानीजी आपकी बड़ी आतुरता से प्रतीक्षा कर रही है। आज आप सूर्योदय के पूर्व ही वाटिका में पधार गई थीं। आज आप की मनोदशा अच्छी ही दृष्टिगोचर हो रही है।

राज. कृष्णा - नहीं रमा। मैं अभी नहीं आऊगी। आज प्रकृति की शोभा देखने में बहुत आनन्द आ रहा है। इस समय चारों ओर आनन्द की वर्षा हो रही है। प्रकृति नटी आज सोलह सिंगार करके रूपवती लग रही है। प्रकृति में नवयौवन का संचार हो रहा है। इस हृदय को लुभाने वाले दृश्यों में मेरी आत्मा प्रसन्नता का अनुभव करती है। मैं संसार के दुखों से मुक्ति पा जाती हूँ। मैं स्वर्ग के आनन्द का लाभ ले रही हूँ। वे मुस्कराते हुए रंगबिरंगे फूल, शीतल मन्द सुगन्ध पवन, विविध गध से परिपूर्ण सौरभ, ये तितलियाँ, ये कोयल, ये उषाकाल के मनोहर दृश्य-मेरी आत्मा को आनन्दित करने के प्रचुर साधन हैं। कोयल की कूक मेरे हृदय में संगीत की अमृत वर्षा करती है। इतना सुन्दर दृश्यावलोकन का अवसर पता नहीं भविष्य में मिले या नहीं, अतः मुझे अभी इस वातावरण में मुक्त पवन का आनन्द लेने दो। माताजी से कहला दो-हम शीघ्र आ रहे हैं। महलों का घुटा घुटा जीवन नीरस हो गया है। वैभव की गतिहीनता मेरे जीवन को गतिशील नहीं बना सकती। मनुष्य को केवल सोने-चांदी और छप्पन प्रकार के व्यंजनों की लालसा ही नही होती। इनके होते हुए भी जीवन की रिक्तता से मैं व्यथित हूं। घर में माता-पिता का प्यार ही पर्याप्त नही है, युवा अवस्था में पति का प्यार, बच्चों की चहल-पहल जीवन में सुख का आधार है।

रमा - वास्तव मे आपके विचार बहुत सुन्दर और उपयुक्त है। कम आयु में भी आप में दार्शनिकता का आभास आपके गुणो में चार चांद लगा देता है। अब अधिक समय शेष नही है। कुछ ही महीनों में आप राजरानी बनेंगी। अतुल सम्पत्ति, विपुल वैभव और सुविस्तृत राज्य की स्वामिनी बनेंगी। प्रभुता से सर्वशक्तिमान राजा की प्राणप्रिय बनेंगी।

राज. कृष्णा - नही रमा। मुझे इस वैभव मण्डित जीवन में आनन्द नहीं

आता है। मुझे स्वाभाविक जीवन चाहिये। मुझे अप्राकृतिक बन्धन, जीवन में एकरसता और रीति रिवाजों की चक्की में पिसते रहने में आत्मिक आनन्द नहीं मिलता है। उधर देखो, पक्षियों के झुण्ड उड़कर मुक्त आकाश में जीवन का आनन्द ले रहे हैं। नील गगन में हंसों की शुभ्र पंक्तिया सुशोभित हो रही हैं। पानी में बगुले और सारस स्नान करके प्रसन्नता का अनुभव कर रहे हैं। मैं तो यह भी चाहती हूँ कि अपने उद्यान में पिंजरों में बन्द पक्षियों को स्वतंत्र कर दूं। जब मनुष्य स्वछन्द, स्वतंत्र रहना चाहता है तो इन प्राणियों को अपने मनोरंजन के लिये क्यों बंधन में डालता है? समझ में नहीं आता। मुझे भी ऐसी ही स्वतंत्रता चाहिये। मैं राज वैभव के भार से प्राणों को बोझिल बनाने में आनन्द नहीं ले सकती हूं।

रमा - बड़े आश्चर्य की बात है कि आप संसार के बन्धनों से, रीति रिवाजो से इतनी चिंतित है। मानव जीवन ही क्या, संसार ही एक दूसरे के मोह पर आधारित है। यह पृथ्वी सूर्य के चारों ओर घूमती है, चन्द्रमा भी पृथ्वी से प्यार करता है। अतः पूर्णतः मुक्ति मिलना तो कठिन है। जब साधारण मनुष्य को भी घर-गृहस्थी के बन्धन मे रहना आवश्यक है तो फिर आपने तो राजघराने में एक राजकुमारी का जन्म लिया है। क्या इस जीवन में आपको आनन्द नही मिलता है? तो क्या राजकुमारी का जीवन लेना व्यर्थ है? क्या इस जीवन की कोई उपयोगिता नहीं है?

राज. कृष्णा - राजकुमारी बनना ही तो मेरा दुर्भाग्य सिद्ध हो रहा है। मेवाड़ की राजकुमारी को किसी न किसी राजा की राजरानी बनना अनिवार्य है। फिर वह राजा या महाराजा साहब चाहे अवगुणों के भंडार हों, चाहे उनके दस-पन्द्रह रानियां पहले भी हों। जब वे रानियों से सन्तुष्ट नहीं होते तो पचासों उपपत्नियां और सौ दो सौ वेश्याएं भी रखे तो उन्हें कहने वाला कौन है? ऐसी स्थिति में जब एक राजकन्या को राजरानी बनाने पर बाध्य किया जाता है तो ऐसे जीवन से मुझे घृणा हो जाती है।

रमा - लेकिन इसमें हमारा क्या वश है कृष्णा। सिसोदिया राजवंश राजपूतों मे सर्वश्रेष्ठ है। उनकी राजकुमारी क्या छोटे मोटे ठाकुर उमराव अथवा जागीरदार की पत्नी बनेगी? यह सर्वथा असंभव है।

राज. कृष्णा - क्या प्रत्येक स्त्री के लिए विवाह की फांसी गले में डालना

नितान्त आवश्यक है ? क्या इससे मुक्ति का विकल्प हमारे समाज-शास्त्र मे नहीं है ?

रमा - आपके तर्क बड़े विचित्र हैं । आप नारी-धर्म की अनिवार्य बातों को फाँसी का फन्दा समझती हैं । नारी का जन्म इस ससार में अपना सब कुछ देने के लिये ही होता है । जैसे धरती माता अपने पुत्र पुत्रियों को सर्वस्व दान देती है, नारी भी दानशीलता की प्रतिमूर्ति है । त्याग का दूसरा रूप ही नारी है । यदि वह कुछ अपने लिये ससार से लेती भी है तो संसार भर की वेदना, अभिशाप, कण्टकों का ताज और विष की गागर को अमृत का सागर समझ कर प्रसन्नता से ग्रहण करती है । घर को ही अपने कर्मक्षेत्र का विकल्प बनाकर सब प्रकार की गृहस्थी की चिन्ता से मुक्त करके अपने स्वामी को अपने कर्त्तव्य के कर्मक्षेत्र में भिजवाकर अपना गौरव बढ़ाती है । दीपक की भाति जलकर वह अंधकार को दूर करती है । यही नारी जीवन की सार्थकता है । चलो राजकुमारीजी, अब बहुत विलम्ब हो रहा है । महल में चलकर आपके मेंहदी महावर लगाने का कार्य मुझे शीघ्र पूरा करना है । महारानी की आज्ञा है ।

राज. कृष्णा - बहिन रमा । आज मेरा मन मेंहदी महावर लगवाने का नही हो रहा है । बहुत दिनों से जो चित्र अधूरा है, उसे अब पूरा करना है ।

रमा - कौन सा चित्र, राजकुमारीजी, क्या वह मीरांबाई का विषपान करने वाला ?

कृष्णा - नही । वह तो पूरा हो गया । अब तो भगवान शंकर के विषपान वाला चित्र · जय नीलकण्ठ भगवान, शिवशकर की जय ।

रमा - आपको ये विषपान ही विषपान के चित्र बनाने में क्या आनन्द आता है ? क्या इसके अतिरिक्त विषय ही नही मिलते है ?

राज. कृष्णा - मेरे संपूर्ण मन मस्तिष्क के अन्तरिक्ष में विषमय बादल ही दृष्टिगोचर होते है । ऐसा आभास होता है कि नदियों और झरनों मे विषजल प्रवाहित हो रहा है । शीतल मंद पवन मे भी विषगंध घुल गई है । संसार के अधिकतर प्राणी भी मुझे विष में डूबे हुए दृष्टिगोचर होते है । मुझे वर्तमान मानवों की अपार जनसंख्या में एक भी मानव ऐसा दिखाई नही देता है जो शंकर के समान संसार में व्याप्त सभी क्षेत्रों में

विष का पान करके पृथ्वी को विषहीन बना दे और फिर चारों ओर अमृत का रस सिंचन कर धरती को ही स्वर्ग बना दे। लेकिन संसार को विषमय विनाश से बचाने वाला एक भी प्राणी दिखाई नहीं देता है।

रमा - राजकुमारीजी ! आप तो पागल जैसी बातें कर रही हैं। आपको क्या हो गया है ?

कृष्णा - हाँ, हाँ, रमा। मैं वास्तव में अब पागल हो गई हूँ। मेरा मस्तिष्क इन समस्याओं के दबाव से फट रहा है। तुम सारे संसार में ढिंढोरा पिटवा दो कि कृष्णा अब पागल हो गई है। शायद पागलेपन में ही मुझे शान्ति मिल सके। मैं मनुष्यों से घृणा करती हूँ। मैं रंग-बिरंगे फूलों से प्यार करती हूँ। प्राणियों से ये फूल अच्छे हैं जो आत्मिक शान्ति प्रदान करते है। कोयल के अर्थहीन गीतों में स्वर्गिक संगीत की सरसता मिलती है। आकाश के तारे मेरे हृदय में प्रेम के तारों को झंकृत करके आत्म-विभोर कर देते हैं। चन्द्रिका युक्त यामिनी में चन्द्रमा की चंचल किरणें अपने मनमोहक नृत्य से मुझे सुख माधुर्य प्रदान करती है। क्या रखा है गृहस्थ जीवन में रमा ?

राजकुमारी कृष्णा भाव-विभोर हो जब वर्णन कर रही थीं, उसी समय उद्यान में घूमते हुए महाराणा भीमसिंहजी ने भी राजवाटिका में स्फटिक शिला पर बैठी राजकुमारीजी और रमा की ओर पदार्पण किया, राजकुमारी के बिल्कुल निकट आकर उसके कंधे पर स्नेहपूर्ण हाथ रखकर कहने लगे-बेटी कृष्णा। आज क्या बात है ? राजवाटिका में बैठी एक दार्शनिक की भांति संसार की गतिविधियों का वर्णन आत्म-विभोर होकर कर रही है। कुछ देर से मैं लताकुंज की ओट में खड़ा हुआ तुम्हारी बातें सुनने में खो गया था।

कृष्णा - पिताजी ! आपने ..........सुना है।

महाराणा - हाँ बेटी। मेरा भी यही विचार है कि सज्जन मनुष्यों का मरने की अपेक्षा सम्मानपूर्वक इस ससार में जीवित रहना कठिन है।

कृष्णा - हाँ, पिताजी। भगवान शंकर की भांति गले मे हलाहल धारण करके जीवित रहना मनुष्य तो क्या यदि देवतागण भी धरती पर उतर आए तो उनके लिए भी यहाँ जीवित रहना असभव हो जाएगा। इसलिए मैं अपने मन का बोझ हल्का करने के लिए शंकर के गरलपान नीलकण्ठ का चित्र बना रही हूँ जो कुछ दिनों में ही पूरा होने वाला है।

महाराणा - कृष्णा मैं सोचता हूँ कि..........

कृष्णा - आप क्या सोचते है पिताजी ?

महाराणा - यही कि क्या तू आयु पर्यन्त इसी प्रकार के चित्र बनाती रहेगी ? क्या जीवन पर्यन्त प्रकृति सौदर्य के गीत ही गाती रहेगी ? क्या तुझे इसी में सन्तोष मिलता है - क्या यही जीवन आनन्दमय है ?

कृष्णा - हाँ, पिताजी । मेरा जीवन-स्वर्ग सगीत और चित्र-कला में ही परिपूर्ण है । मैं संसार के बंधनों से सर्वथा मुक्त रहना चाहती हूँ । मै आपकी मनोदशा, आर्थिक अभाव और राज्य की विपन्न अवस्था से स्वय ही बड़ी चिन्तित हूँ । मैं शीघ्र ही आपको इन कष्टों से मुक्त देखने की हार्दिक अभिलाषा रखती हूँ और ईश्वर से रात-दिन यही कामना करती हूँ कि आप प्रसन्नता से सुखपूर्वक निश्चित हो मेवाड़ माता की रक्षा करें, इसके गौरव को, इसकी समृद्धि को कई गुणा बढ़ावें ।

कृष्णाकुमारी अपने मन की बातें स्वतन्त्रता पूर्वक जब कह रही थी, उसी समय महारानीजी ने भी उस स्थान पर प्रवेश किया ।

इस दृश्य और बातों को सुनकर महारानीजी ने कहा - वाह ! भई ! मैं तो महलों में प्रतीक्षा करते करते थक गई । यहाँ देखो तो पिता और सुपुत्री मे गंभीर विचार-विमर्श हो रहा है । बातों में इतना आनन्द आ रहा है कि भोजन करने की भी किसी को चिंता नहीं है । कृष्णा ने तो महाराज प्रातःकाल से कुछ भी नहीं खाया है, न ही दुग्धपान किया है । सूर्योदय से पूर्व ही इसका वाटिका भ्रमण चल रहा है । रमा से और आपसे न जाने ऐसा क्या गंभीर विचार-विमर्श हो रहा है, न जाने भविष्य की कौन सी योजना बन रही है कि जिससे दुनियादारी को भूल बैठी है !

कृष्णा - माताजी, मैं तो ....... ।

महाराणा - तुम भी आओ न महारानी । देखो कितना सुन्दर मौसम है । चारों ओर का प्राकृतिक वातावरण कितना मनमोहक है, चारो ओर संगीत का वातावरण हमको आत्म-विभोर करने में सक्षम है, समर्थ है ।

महारानी - राजकन्या कृष्णा के विवाह के अब कुछ ही दिन शेष हैं । आपको तो घर गृहस्थी की, दुनियादारी की तनिक भी चिन्ता नहीं है । न जाने आप किस संसार के सपनों मे खोये रहते है ? मुझे तो इन दिनो

आपकी मनोदशा पर आश्चर्य हो रहा है। मैं तो माता हूं, गृहिणी हूं। मुझे तो इतनी चिन्ता हो रही है कि कृष्णा के विवाह की, इतनी बड़ी तैयारियाँ, इतने कम समय में कैसे परिपूर्ण होंगी ?

महाराणा - आपका कथन सर्वथा उचित है – महारानी ! हाँ, बेटो, हम भी इस संसार के प्राणी हैं, मनुष्य हैं। कोई पशु-पक्षी तो नहीं। हमें अपनी प्रतिष्ठा, अपने राजवंश, अपने जातिगत गौरव और उच्च स्तर के अनुसार तुम्हारे विवाह की तैयारियाँ करना आवश्यक है। हम साधारण मनुष्य नहीं, इतने बड़े राज्य के मालिक हैं और तुम हमारी प्राणों से प्रिय राजस्थान की राजकमलिनी हो, इसलिए अब हमें शीघ्र चलकर आवश्यक कार्य सम्पन्न कराने के लिए प्रबन्ध करना है। कहावत है कि विवाह माडकर देखो और मकान बनवाकर देखो – इन कार्यों में जितना भी खर्च करो, उतना कम प्रतीत होता है।

अच्छा कृष्णा और रमा आप दोनों शीघ्र महलों में चलकर भोजन आरोगने की तैयारी कराओ। हम दोनों भी आ रहे हैं। रमा और कृष्णा, राजवाटिका से महलों की ओर चली गयीं। महाराणा और महारानी थोड़ी देर वहीं बैठ गये। महाराणा ने कृष्णा की मनोव्यथा के विषय में महारानी को अवगत कराया। कृष्णा और रमा से सुनी हुई प्रमुख बातों, विचारों का आदान-प्रदान किया।

वार्तालाप के दौरान ही महाराणा ने पिछली रात को संग्रामसिंह और दौलतसिंह से हुई गम्भीर और चिंताजनक वार्तों से संक्षेप में महारानीजी को अवगत कराया। महारानीजी को यह सुनकर बड़ा आश्चर्य हो रहा है कि जोधपुर नरेश ने अपने भतीजे की निर्दयता-पूर्वक हत्या करवा दी। जयपुर नरेश जगतसिंहजी भी इससे कितने दुःखी हो गए है।

महाराणा - क्योंकि जोधपुर महाराजा भीमसिंहजी का वीर बालक अमरसिंह जगतसिंहजी का भानजा लगता था।

महारानी - हम क्षत्रीय राजवंशों मे फूट, गृहकलह है, परस्पर संगठन का नितान्त अभाव है। यही हमारे देश का दुर्भाग्य है। इससे बड़े दुःख की बात यह है कि जोधपुर के वर्तमान राजा मानसिंह ने लाखों रुपये देकर उस भयंकर पिंडारी डाकू अमीरखां की सहायता प्राप्त की।

महाराणा - अमीरखां भयंकर भी है और विश्वासघाती भी । उसने सवाईसिंह और उमरावसिंह से भी एक बड़ी राशि प्राप्त कर अमरसिंह की रक्षा का वायदा किया था ।

महारानी - भगवान बचाये ऐसे दुष्टों से । मैं तो बस यही चाहती हूँ कि अपनी कृष्णा का विवाह शान्तिपूर्वक जयपुर नरेश जगतसिंहजी से हो जाए क्योंकि कृष्णा की भुआ की भी यही इच्छा है ।

महाराणा - भगवान एकलिंगजी के आशीर्वाद से सब कार्य सफल होंगे - ऐसा मेरे हृदय में पूर्ण विश्वास है । अपना उद्देश्य अपने जीवन के सभी कार्य वश के गौरव और परम्परा के अनुसार पूर्ण करना है ।

महारानी - मुझे तो वैसे कृष्णा का भविष्य उज्ज्वल और सुखमय ही प्रतीत होता है ।

महाराणा और महारानीजी इस प्रकार बातचीत करते हुए उठ गये दोनों ने फिर धीरे-धीरे महलों की ओर प्रस्थान किया । वहां जाकर अपने दैनिक जीवन के कार्यक्रमों में संलग्न हो गए ।

——

# बीस

महाराणा भीमसिंहजी अपने दरबार में उच्च शानदार सिंहासन पर विराजमान हैं । उनके दरबार एवं राज्य के प्रमुख उच्चाधिकारी भी उस समय उपस्थित हैं । जब कभी कोई विशेष मंत्रणा, परस्पर विचार विमर्श का अवसर होता है, किसी गंभीर विषय पर मंत्री-मण्डल की बैठक बुलाना आवश्यक होता है, उस समय ऐसा आयोजन होता है । कल रात को ही जोधपुर महाराजा मानसिंहजी की तरफ से दूत बनकर अमीरखां उदयपुर में अपने एक छोटे से दल के साथ आया था । गुप्तचरों से सूचना प्राप्त करके अजीतसिंह (दीवान) ने उसके दल को उदयपुर में सहेलियों की बाड़ी के सामने बड़े मैदान में शिविरों मे उनके ठहरने का प्रबंध करवा दिया । उनकी सुरक्षा के प्रबन्ध कर दिये गये । दरबार में महाराणा के दोनों ओर अजीतसिंह, जवानदास बैठे हुए थे । सुरक्षा के प्रबन्ध बड़े-कड़े

थे। सेना के उच्च अधिकारी भी वहां पर महल के बाहरी भाग में अपनी वेशभूषा में सुसज्जित उपयुक्त स्थानों पर खड़े हुए थे।

दरबार में पठान सरदार अमीर खां बड़े ठाट से हथियारों से सुसज्जित वीर वेश में महाराणाजी की अनुमति से दो रक्षा-सैनिक की सहायता से उपस्थित हुए। यह अमीर खां के उदयपुर आने का पहला अवसर था। राजपूत सरदार भी जो दरबार में विराजमान थे, कुछ लोग हुक्का पी रहे थे। एक हुक्का पठान सरदार अमीरखां के लिए भी मंगवाकर पहले ही रखवा दिया गया था। अमीरखा को दूत के योग्य बैठने का उचित स्थान व कुर्सी दी गई जिसपर गद्दी तकिया लगा हुआ था।

अजीतसिंह—कहिये अमीरखांजी, आप ही पठान सरदार है इस समय आप जोधपुर महाराज मानसिंह के दूत के रूप में हमारे दरबार में उपस्थित हुए हैं। कहिये मानसिंह जी ने क्या संदेश भिजवाया है ?

अमीरखां—मैं मेवाड़ के राजवंश की गौरवशाली परम्परा का आदर करता हूँ। यहां की मान मर्यादा, वीरता की हिन्दुस्तान मे बड़ी चर्चाएं सुनी है। आशा है आप उसकी धवलकीर्ति को बनाये रखने का उचित कार्य करेंगे। आशा है मेरा कुछ संकेत तो समझ गये होंगे ?

महाराणा—आप तनिक स्पष्ट रूप से कहिये कि अब जोधपुर नरेश ने क्या विशेष अपेक्षा का संदेश आपके द्वारा भिजवाया है।

अमीरखां - जोधपुर महाराजा परम प्रतापी मानसिंहजी ने स्पष्ट कहलवाया है कि महाराणा साहब राजकन्या कृष्णा का विवाह वर्तमान नरेश मे करने का आश्वासन दें - अन्यथा हमे लाचार होकर बल प्रयोग के द्वारा उस कार्य को करवाना पड़ेगा जिसके लिए हम सक्षम है - समर्थ हैं। आपके सम्मान को कोई आंच नहीं आये, मर्यादा और गौरव भी बना रहे इसलिये विवाह सम्बन्धी बात के लिये प्रथम और अन्तिम बार प्रार्थना कर लेना हम उचित समझते है।

महाराणा - राजकन्या का टीका महाराजा भीमसिंहजी राठौर की मृत्यु के पश्चात् हमने जहां उपयुक्त समझा, भेज दिया। अम्बर नरेश को हमने उपयुक्त समझा। एक स्थान पर टीका चढ जाने के पश्चात् प्रण से हट कर किसी अन्य व्यक्ति के लिये-टीका भेजना हमारे वंश की परिपाटी नही है।

अमरीखां - महाराणाजी, लेकिन टीका सबसे पहले जोधपुर भेजा गया था। क्या यह बात सच नहीं है ?

महाराणा - यह घटना बिलकुल सच है लेकिन महाराजा भीमसिंह तत्कालीन नरेश को हम उपयुक्त समझते थे जिन्हे हमारा दामाद बनाने का सम्मान देना चाहा था टीका उसके लिये ही भेजा था। वह भी केवल बातचीत हुई थी। रीति नीति के अनुसार टीका नहीं भेजा गया था।

अमीरखा - बातचीत तो हुई थी, क्या यह बात पर्याप्त नहीं है ? अब मानसिहजी उनके खानदान के ही है, उनके छोटे भाई है। वर्तमान शक्तिशाली शासक है। स्वस्थ, वीर, आयु, वैभव आदि हर बात में वह आप की कन्या के लिये योग्य वर हैं।

महाराणा - मुझे मारवाड़ वर्तमान नरेश के गुणों पर कोई भी सन्देह नही है। मुझे उनसे सबंध करना ही नही था, इसलिये मैंने उनके बारे में कुछ सोच विचार हो नहीं किया।

अमीर खाँ - फिर तो इसका अर्थ यह हुआ कि आप अम्बर (जयपुर) नरेश से अधिक प्रभावित या भयभीत हैं। उनकी विशाल सेना के बल से आप डर गये है ?

महाराणा - इससे डरने का कोई प्रश्न ही नहीं उठता। सगाई विवाह के सम्बन्ध बहुत मोच समझकर अपने समाज, जाति, वंश और बराबर के स्तर के व्यक्ति से किया जाता है। हमने जब एक बार विवाह संबंध निश्चित कर दिया तो अकारण ही उसे बदलने की आवश्यकता को भी उचित नहीं मानते।

अमीरखां - लेकिन महाराणा साहब अगर हमारी बात नही मानी गई तो इसका परिणाम अच्छा नही होगा।

महाराणा - इसका उत्तरदायित्व कन्या के पिता पर है। यह आप जानते ही होंगे।

अमीरखां - आपको शायद इसके अन्त की कल्पना भी नही होगी। इसका परिणाम बहुत विनाशकारी और खून को नदियां बहाने वाला भी सिद्ध हो सकता है। मै सच कहता हूँ अन्त दुखद होगा, खतरनाक भी होगा।

महाराणा - अमीरखां ! सिसोदिया वश के वीर लोग दुःखों और भयंकर खतरो का सामना करने में समर्थ हैं।

अजीतसिंह - महाराणा साहब, मेरा भी इस विषय में एक निवेदन है कि जैसे कि समाचार मिले हैं, जयपुर नरेश जगतसिंह के चरित्र और कुछ अनुचित गतिविधियों को लेकर वहां सरदारों में, आम प्रजा में घोर असन्तोष है। राजकन्या का जीवन वहां सुखी सुरक्षित और वैभवशाली होगा इसमें मुझे तो सन्देह है। मेरे विचार से जान-बूझ कर हमारी कृष्णा के जीवन को आग में झोंक देना उचित नहीं है।

(महाराणाजी के चेहरे पर तनिक रोष उत्पन्न हुआ और कहने लगे) अजीतसिंहजी, इसका अभिप्राय यह है कि आप भी इन लोगों से मिले हुए हैं इसीलिये इनके पक्ष का समर्थन कर रहे हैं।

अजीतसिंह - नहीं नहीं महाराणा साहब। मैं केवल वास्तविक परिस्थितियों का विश्लेषण करके आपके समक्ष प्रस्तुत कर रहा हूँ। मैं भी कृष्णा के उज्जवल भविष्य को अंधकार में डालना नहीं चाहता हूँ।

महाराणा - अजीतसिंह—आपको यह विदित ही है की बाप्पारावल की राजगद्दी के स्वामी का वचन सदैव एक ही होता है। अब जयपुर नरेश चाहे मेरी पुत्री के योग्य नहीं हों, चाहे वह अवगुणों के आगार हों, चाहे मेरी पुत्री की सौभाग्य लक्ष्मी रुठ जाय—फिर भी मैं अपने दिये हुए वचन से विमुख नहीं होऊंगा। भगवान रामचन्द्रजी ने भी कहा है 'प्राण जाय पर वचन न जाई--रघुकुल रीति सदा चली आई।' साराश यह है कि हमारा विवाह संबंधी निश्चय अटल है, अपरिवर्तनीय है, अडिग है।

अमीरखां - महाराणा साहब। इसका मतलब यह होगा कि मेवाड़ की उत्तरी, पूर्वी, सीमा पर जो बारातें ससैन्य युद्ध सामग्री से पूर्ण रूपेण सुसज्जित होकर ठहरी हुई हैं—वे उदयपुर नगर में धूमधाम से प्रवेश करेंगी, यदि आपके वीर सैनिकों ने मुकाबला भी किया तो सारे उदयपुर शहर में खून की नदियां वह जायेंगी। उदयपुर के तमाम जल सागर इंसानों के खून से लबालब भर कर लाल हो जायेंगे।

महाराणा - (जोश में) अमीरखा! तुम एक दूत की सीमा से बाहर जा रहे हो। तुम्हारी जितनी सीमा है, उसी में रहकर बात को विनम्रता पूर्वक ही प्रस्तुत करना चाहिये। रक्तपात का डर दिखाने से हम डरते

वाले नहीं हैं। मेवाड़ तो सदा ही खून को होली खेलता आया है। क्या तुमने कभी मेवाड़ के वीरों के इतिहास को नहीं सुना है ?

अमीरखां - लेकिन महाराणा साहब। वह समय बदल गया है। महाराणा प्रताप और राणा सांगा का जमाना नहीं है। न वैसे वीर ही अब पाये जाते हैं। मैं अपने तोपखाने और बन्दूकों को विनाशकारी ताकत लेकर महाराजा जोधपुर की तरफ से लड़ूंगा। तब आपके किलों को दीवारें मिट्टी में मिल जायेंगी।

महाराणा - अरावली की घाटियों में मेवाड़ के राजवंश के लिये बहुत स्थान है। महाराणा प्रताप के वंशज राज वैभव, शानशौकत, महलो का सुख चैन, स्वादिष्ट भोजन आदि सुख साधनों को तिलाजलि देने को सदा तैयार रहते है। वे चाहे मर मिटें किन्तु अपने हठ को छोड़ने के लिए तैयार नही हो सकते।

अमीरखां-लेकिन महारानाजी! वक्त की जरूरत के अनुसार यह कोई बुद्धिमानी की बात नहीं है। थोड़ी सी बात के लिये अपने राज्य का, अपनी जनता के सुख चैन का, उनकी सम्पति का और हजारों जवानों के प्राणों का वलिदान कर देना, मैं तो उचित नही समझता हूँ। मैंने और मेरी फौज के वीर जवानों ने भी यह प्रण किया है कि महाराजा जोधपुर नरेश की आपकी लड़की से शादी किये बिना वापिस जोधपुर नहीं लौटेंगे, चाहे हमें कितना भी नुकसान उठाना पड़े।

महाराणा - मैं भी जयपुर नरेश से ही कृष्णा का विवाह करने को वचन बद्ध हूं, अमीरखां। अच्छी तरह समझ लो।

अमीरखां - महाराणाजी ! मैं आपको और साफ साफ बता दूं कि दौलतराव सिंधिया ने भी उसकी सारी फौज जोधपुर महाराजा की ओर से लड़ने के लिये हमारे पास भेज दी है। आपकी जरा सी हठ के कारण राजपूताने की बड़ी बड़ी दो रियासतों मेवाड़ और जयपुर का सर्वनाश हो जायेगा, अब इसमें मुझे कोई शक नही है।

महाराणा - किसी की लाल आँखें और अगणित फौज, युद्ध-सामग्री की बहुलता देखकर सिसोदिया वंश के वीर डरने वाले नहीं है। हम किसी को अनुचित रूप से प्रसन्न करने के लिये पिंडारी पठान सरदार को धमकी में आकर हमारा निश्चय बदलने को बिलकुल भी तैयार नहीं है। सिसो-

दिया वंश सदैव अपनी परम्परा पर प्राणों का उत्सर्ग करता आया है और हम भविष्य में भी करेंगे - यह हमारा अन्तिम निर्णय है।

अमीरखां - आपकी इच्छा है। मैं तो आपके हित के लिये, आपके राज्य के कल्याण के लिए समझाने आया था। खैर ! आपकी इच्छा है। बस आपसे एक आखिरी बात और करना चाहता हूं, वह यह है कि कल संध्या तक का समय आपको और भी गंभीरता से सोचने समझने के लिये देता हूँ। अगर आपने अनुकूल उत्तर नहीं दिया तो परसों सुबह से ही मेरी तोपें उदयपुर नगर पर आग बरसाने लग जायेंगी और इसका आखिरी नतीजा क्या होगा आप खुद ही समझदार हैं, अन्दाज लगा सकते हैं। इच्छा अब मैं जाता हूँ। खुदा आपको सदबुद्धि प्रदान करे, ऐसी मेरी आशा है। ऐसा कहते हुए अमीरखां अपने स्थान से उठ गया और अभिवादन करके दरबार के बाहर चला गया। सब लोग उसे जाते हुए देखते ही रह गये। वहां के उपस्थित लोगों को उलझन में डालते हुए वह चला गया।

सब लोग अमीरखां की चुनौती की गंभीरता को ध्यान में लाने पर आश्चर्य में पड़ गये। कुछ समय तक सन्नाटा छा गया। फिर जवानदास कहने लगे - महाराणाजी ! इस भयंकर और विनाशकारी परिस्थिति से बचाव का कोई सक्षम उपाय शीघ्र ही हमें सोचकर उसके अनुसार कार्य करना चाहिये। वास्तविकता को जान बूझ कर नजरअंदाज करना भयंकर भूल होगी। हमारी सेनाओं की स्थिति कोई बहुत अच्छी नहीं है। इस समय तीन तीन सुदृढ़ सेनाओं से टक्कर लेना धर्मयुद्ध नही आत्म-हत्या ही सिद्ध होगी।

महाराणा के निजी कक्ष में बातचीत हो रही है।

महाराणा - आपका कथन शत प्रतिशत सत्य नहीं है। घोर निराशा के समय मनुष्य आत्म हत्या की बात ही सोचता है। बिना कारण ही किसी की धमकी के आगे झुक जाना कायरता है। सत्य की रक्षा, अपने वंश-गौरव की रक्षा हेतु बलिदान हो जाना ही वास्तविक वीरता है, हमें युद्ध के विध्वंसात्मक प्रभाव से डर कर अपने सिद्धान्तों तथा वचनो की हत्या नहीं करनी चाहिये।

अजीतसिंह - महाराणाजी ! मुझे एक उपाय सूझता है वह यह कि महाराजा मानसिंह के हृदय में मनुष्यता के भावों को जगाने का प्रयत्न करे।

उनको अपने तुच्छ स्वार्थ के लिये हजारों वीरों का हत्या-काण्ड रोकने के लिये उत्प्रेरित किया जाय। मुझे तो विश्वास है कि जोधपुर नरेश परिस्थिति की गंभीरता पर विचार करेंगे तो भयंकर युद्ध से बचा जा सकता है।

महाराणा - कितने भोले हो अजीतसिंह ? राजपूत होकर, राजपूत की हठ को नहीं जानते। सच्चे-राजपूत का हृदय पत्थर से भी कठोर होता है। क्या आपको भीष्म-प्रतिज्ञा का ज्ञान नहीं है ? क्या हमारे पूर्वज महाराणा प्रताप की प्रतिज्ञा और धर्म हठ को नही जानते ?

अजीतसिंह - श्रीमन्, चट्टानों के बीच में सुसप्त रूप से बहने वाली कलकल निनादिनी मन्दाकिनी की धारा निरन्तर बहती रहती है। राजपूत के हृदय के मर्म को छूने की चतुराई भी होनी चाहिये। समय को देखकर अपनी शक्ति और क्षमता के आधार पर हमें कार्य करना चाहिये।

महाराणा - ऐसी चतुराई का गुण धारण करने वाला सक्षम व्यक्ति अपने में से कौन है, बताइये ?

अजीतसिंह - आप ही महाराणाजी। सर्वथा उपयुक्त और सक्षम है।

महाराणा - आप क्या कहना चाहते हैं ? आप का कथन बिलकुल अस्पष्ट और निरर्थक है। इस बात को थोड़ा समझाकर कहियेगा।

अजीतसिंह – बात कुछ अटपटी है। शायद आपको बुरी भी लगे किन्तु इस भयंकर परिस्थिति से पार उतरने का इसके सिवाय कोई उत्तम मार्ग नहीं है और यह कार्य आपको शीघ्र और गोपनीय विधि से करना होगा जिसका अपने राज परिवार में भी जिक्र नहीं होना चाहिये।

महाराणा - आप तो पहेलियां बुझा रहे हैं - जो भी आप कहना चाहते है, स्पष्टतः कहिये।

अजीतसिंह - महाराणा के बिलकुल पास गये और उनके कान के पास जाकर अपना मुंह उस ओर करके धीरे से कहा - आपको राजकुमारी कृष्णा की मृत्यु की आज्ञा लिखित रूप में प्रदान करनी होगी जिनमें आपके हस्ताक्षर और महाराणा पद की मोहर भी लगानी होगी।

महाराणा साहब आश्चर्य एवं दुःख से कांप गये। लाल लाल आंखों से अजीतसिंह को घूर कर देखने लगे। तनिक रोष प्रकट करते हुए कहने लगे - तुमने मुझे क्या इतना कायर पुरुष और निर्दय पिता समझा है ?

तुम्हें ऐसी बात मुंह से निकालने की हिम्मत कैसे हुई ? अपनी बर्बर आकांक्षा को ही आप युक्ति समझते हैं ?

अजीतसिंह - महाराणा साहब - नही - अभी - आपने पूरी युक्तियोजना को समझा ही नही । यह लिखित आज्ञा तो महाराजा मानसिंह की आंखे खोलने मात्र का साधन सिद्ध होगी । राजकुमारी की हत्या करना हमारा उद्देश्य नहीं है । हम उनको यह स्पष्टत: जता देना चाहते है कि जिस अनमोल महिला रत्न की प्राप्त करने के लिये आप सदल-बल हजारों राठोरों के प्राणों की वाजी लगा रहे हैं, उसी राजकमलनी को इस संसार से उठाने का निश्चय कर लिया गया है । यदि यह बात उनकी समझ में आ जावेगी तो मुझे पूर्ण विश्वास है कि वे व्यर्थ के रक्तपात का समर्थन नही करेंगे और अपनी सेनाओं को वापस जोधपुर की तरफ प्रस्थान करने का आदेश प्रदान कर देंगे । मुझे उन पर भरोसा है ।

जवानदास - हां महाराणाजी । जोधपुर नरेश इस आज्ञा के परिणाम से ही कांप उठेंगे । उनके हृदय में छिपी हुई करुणा की धारा उमड़ पड़ेगी और मानसिंहजी इस भयंकर हत्याकाण्ड को कभी भी नही होने देंगे क्योंकि इसमें किसी भी पक्ष का लाभ नही है ।

अजीतसिंह - हां ! महाराज साहब, आप पत्र में लिखने की कृपा करावें कि मेवाड़, अम्बेर (जयपुर) और मारवाड़ के साहसी योद्धाओं के खून से मेवाड़ की पवित्र भूमि को रक्त रंजित होने से रोकने का यही अन्तिम उपाय है । संघर्ष के मूल को, उस युद्ध के हेतु को ही समाप्त कर दिया जाय । इसलिये अत्यन्त दु:ख के साथ मैं राजकुमारी कृष्णा की मृत्यु की आज्ञा प्रदान करता हूं ।

जवानदास ने दवात कलम कागज महाराणा साहब को लाकर तुरन्त दे दिये । उन्हें सोचने विचारने का अवसर भी नही दिया - और जवानदास ने कहा - लिखिये महाराणाजी ।

महाराणाजी ने छाती पर हाथ रखकर बड़े दु:ख के साथ कहा- मेरा मन कांपता है, मेरी आत्मा विद्रोह कर रही है - यह आज्ञा···· ···· है ।

कुछ सोच समझ कर इस भयंकर रक्तपात से बचने के लिये जब अन्य कोई उपयुक्त उपाय समझ में नही आया तो उस समय बड़ी ही लाचारी से जैसे अजीतसिंह ने कहा था, वैसा ही महाराणा भीमसिहजी ने

कागज पर लिख दिया फिर अन्त में अपने हस्ताक्षर भी कर दिये। उस कागज को अश्रु भरे नयनों से देखते हुए महाराणा जी ने अजीतसिंह को दे दिया। उसी समय अजीतसिंह ने पढ़कर वह पत्र उस जवानदास को दे दिया। अजीतसिंह ने जवानदास को हाथ में पत्र देते हुए कहा-लो इस पत्र में महाराणाजी ने राजकुमारी की मृत्यु की आज्ञा प्रदान कर दी है। जवानदास फुर्ती से उठे पत्र को कोट की जेब में रखा और वहा से प्रस्थान करके निजी कक्ष तथा दरबार भवन के बाहर चला गया। महाराणा तथा अजीतसिंह पुनः दरबार भवन में आ गये।

महाराणा - यह तुम क्या कहते हो ?
अजीतसिंह - यदि जोधपुर नरेश समझाने बुझाने पर भी मान लो नही मानें तो हमारे राज्य की भलाई के लिये इसके सिवाय अन्य मार्ग भी क्या है ? मेवाड़ की रक्षा का साधन भी क्या है ?

महाराणाजी एकदम तिलमिला गये, वह उठ खड़े हुए उनके हाथ पैर कांपने लगे - और उन्होंने बहुत जोर से चिल्लाते हुए कहा - यह मेरे साथ धोखा किया है - यह छल है, कपट है, कहां गया जवानदास उसे तुरन्त वापस बुलाओ। वहां से जिस ओर जवानदास गये थे, उधर ही शीघ्रता से महाराणाजी जाने लगे।

अजीतसिंह - महाराणाजी को आगे बढ़कर उन्हें रोकते हुए कहने लगे - आप उत्तेजित नहीं हों महाराणाजी, मेवाड़ की रक्षा के लिये, हजारों वीरों को अकारण ही मौत के घाट उतरवाने के स्थान पर, देश की रक्षा, सुख शान्ति के लिए एक पुत्री का बलिदान बड़ी बात नहीं है। हमारे पूर्वजों ने, सैकड़ो राजकुमारों ने अपना बलिदान देकर देश की रक्षा की है तथा इसके कई ज्वलन्त प्रमाण हैं।

महाराणा - नही अजीतसिंह, मुझे मेवाड़ नहीं चाहिये। मुझे मनुष्यता चाहिये, मुझे मेरी प्यारी पुत्री चाहिये। मुझे और कुछ नहीं चाहिये। मुझे मेरी पुत्री चाहिये, बस और कुछ नहीं।

महाराणाजी दरबार भवन से शीघ्र बाहर जाना चाहते है। महाराणा को रोकते हुए अजीतसिंह ने कहा - महाराणाजी आप बाहर नहीं जा सकते है। बाहर अमीरखां के सशस्त्र सैनिकों का पहरा है।

महाराणाजी ने जैसे ही अजीतसिंह से सारी बातें सुनी तो दुःख से बहुत ही पीड़ित हो गये। वे इतने अधीर इतने व्याकुल हो गये और अपनी

बेबसी से अजीतसिंह से कहने लगे - इसका अर्थ यह हुआ कि
यहां बन्दी बना लिया । यह विश्वासघात है घोर निराशा
महाराणा इधर-उधर टहलने लगे । अनियंत्रित क्रोधानल उ
धधक रहा था फिर विवशता से कहने लगे - ओ अजीतसिंह
चूण्डावत के वंशज अजीतसिंह ! तुम इतनी नीचता का आ
हो, इसकी मुझे कल्पना भी नहीं थी । मैंने तुम पर पूर्ण वि
तुम्हारे कारण ही शक्तावतों पर मैंने अन्याय किया, सं
दौलतसिंह जैसे स्वामीभक्त वीरों के साथ मैंने तुम्हारे सिख
दुर्व्यवहार किया, उनकी सेवाओं का उचित सम्मान नहीं किय
तुमने मुझे शत्रुओं से मिलकर बन्दी बना लिया - विवश कर
प्राणों का प्रकाश प्यारी बेटी कृष्णा ! लम्बी सांस लेकर सी
रखकर, कभी बेचैनी से दु:खी होकर सिर पकड़ते है, पश्चाताप
सोस के सागर में डूब जाते हैं । फिर बहकते हुए से कहते हैं -
अब दुनिया में क्या बचा है ? मैं अपनी फूल सी कोमल राजकन्या
चाहे वर से विवाह नहीं कर सकता । मैं अपनी आत्मा को प्र
के लिये सोचता हू कि मैंने कृष्णा के लिये क्या किया ? एक
राजा होते हुए भी अपनी पुत्री की मांग में सिंदूर भरवाने में
सकटों का सामना करना पड़ रहा है । अभी कृष्णा ने क्या देखा है
वह मासूम है । उसने पिछोला झील देखी है, महलों की उच्चतम
उदयपुर की सुन्दरता देखी है बसन्त मे फूला हुआ उपवन देखा है -
से भरा हुआ आकाश देखा है । परन्तु उसने घर गृहस्थी की तो अभी
माला भी नहीं पढ़ी है । यह राजमुकुट जिसे अपने चरणों में झुकाने के
लगभग एक हजार वर्षों से बड़े-बड़े शक्तिशाली सम्राट प्रयत्न करके
गये (मुकुट दोनों हाथों से उतारते हुए कहते जाते हैं) जिसके लिये सं
हजारों सिसोदिया राजवंश के वीरों ने तथा अन्य राजपूतों ने हँसते-हँ
अपने प्राणों का बलिदान कर दिया, जिस राजवश और इस राजमुकुट
गौरव गरिमा को सुरक्षित रखने के लिये हजारों वीर बालाओं ने जौ
की ज्वाला में अपनी आहुति दे दी - मेवाड़ के मान सम्मान, गौरव
प्रतीत यह मुकुट जो मुगल सम्राटों के सामने भी कभी नहीं झुका (मुकु
को अजीतसिंह के सामने रखते हुए) वही राजमुकुट आज तुम्हारे चरणों
में पड़ा है लो यदि तुम्हारी तीव्र इच्छा हो तो ये राजमुकुट तुम ले लो
परन्तु मेरे प्राणों से प्यारी कमलनयनी कन्या कृष्णा को मुझे सौंप दो,

अजीतसिंह! यदि तुम सच्चे राजपूत हो तो मुझे वचन दो कि कृष्णा की हत्या नहीं करोगे और मेवाड़ की भी रक्षा करोगे।

जैसे ही महाराणा ने राजमुकुट अजीतसिंह के चरणों में रखा, महारानीजी ने अचानक दरबार भवन में प्रवेश किया। महाराणाजी की दशा देख महारानी को बहुत दुःख हुआ। उसने तुरन्त मुकुट अपने हाथों से उठाकर पुनः महाराणाजी के सिर पर आदरपूर्वक रखा और अजीतसिंह की ओर क्रोध प्रकट करती हुई अपनी सहेलियों के सहारे महाराणाजी को वह अपने जनाना महल में ले गई। वहां जाकर उनकी राजसी वेशभूषा उतार दी। सादे कपड़े पहनाये उनकी सेवा सुश्रुषा में कई दास-दासियों को लगा दिया।

महाराणाजी मानसिक परेशानियों से अचेत हो गये थे। महारानी के निरन्तर परिश्रम व वैद्यराज के सहयोग से एक प्रहर के पश्चात् वे कुछ स्वस्थ हो गये; दिन के शेष समय में उन्होंने विश्राम किया।

धीरे धीरे महारानी को आज की सभी घटनाओं और बातचीत का जब सारांश ज्ञात हुआ तो महारानी भी अत्यन्त दुःखी हो गई। उसने अपने भाग्य को कोसा और कहा कि हम राजघराने में उत्पन्न होकर एक साधारण आदमी जितना भी व्यक्तिगत दुःख सुख के सहयोगी नही हैं। विवशताओं से हमारी इतनी खराब स्थिति हो जाएगी कि हम सब तरफ से दुःखी और प्रताड़ित हो जायेंगे कि अपनी पुत्री के प्राणों की रक्षा, देश की रक्षा भी इतनी कठिन हो जायेगी कि मेवाड़ भूमि में भी हम अपना गुजारा नही कर सकेंगे। विधि का विधान भी कितना अजीब है।

महारानीजी इस प्रकार अपने भाग्य की विवशता पर दुखी हो रही थी। कहावत है कि स्त्री का चरित्र और मनुष्य के भाग्य को किसने देखा, किसने परखा है ?

जो मेवाड़ बाप्पारावल के समय से अभी तक किसी भी देशी तथा विदेशी शक्ति के आगे नहीं झुका, वही राजवंश का राज मुकुट आज झुकने पर विवश हो गया। हम वास्तव में इतने निस्तेज हो गये हैं कि मेवाड़ के गौरव की और कृष्णा के प्राणों की रक्षा करना भी कठिन जान पड़ता है।

बेवसी से अजीतसिंह से कहने लगे - इसका अर्थ यह हुआ कि आपने मुझे यहां बन्दी बना लिया। यह विश्वासघात है घोर निराशा में डूबे हुए महाराणा इधर-उधर टहलने लगे। अनियंत्रित क्रोधानल उनके हृदय में धधक रहा था फिर विवशता से कहने लगे - ओ अजीतसिंह ! वीरवर चूण्डावत के वंशज अजीतसिंह ! तुम इतनी नीचता का आश्रय ले सकते हो, इसकी मुझे कल्पना भी नहीं थी। मैंने तुम पर पूर्ण विश्वास किया। तुम्हारे कारण ही शक्तावतों पर मैंने अन्याय किया, संग्रामसिंह और दौलतसिंह जैसे स्वामीभक्त वीरों के साथ मैंने तुम्हारे सिखाये में आकर दुर्व्यवहार किया, उनकी सेवाओं का उचित सम्मान नहीं किया और आज तुमने मुझे शत्रुओं से मिलकर बन्दी बना लिया - विवश कर दिया। मेरे प्राणों का प्रकाश प्यारी बेटी कृष्णा ! लम्बी सांस लेकर सीने पर हाथ रखकर, कभी बेचैनी से दुःखी होकर सिर पकड़ते है, पश्चाताप और अफसोस के सागर में डूब जाते है। फिर बहकते हुए से कहते हैं - मेरे लिये अब दुनिया में क्या बचा है ? मैं अपनी फूल सी कोमल राजकन्या का मनचाहे वर से विवाह नही कर सकता। मैं अपनी आत्मा को प्रसन्न करने के लिये सोचता हू कि मैंने कृष्णा के लिये क्या किया ? एक पिता का राजा होते हुए भी अपनी पुत्री की मांग में सिंदूर भरवाने में भी इतने संकटों का सामना करना पड़ रहा है। अभी कृष्णा ने क्या देखा है ? अभी वह मासूम है। उसने पिछोला झील देखी है, महलों की उच्चतम छत से उदयपुर की सुन्दरता देखी है वसन्त में फूला हुआ उपवन देखा है - नक्षत्रों से भरा हुआ आकाश देखा है। परन्तु उसने घर गृहस्थी की तो अभी वर्णमाला भी नहीं पढ़ी है। यह राजमुकुट जिसे अपने चरणों में झुकाने के लिये लगभग एक हजार वर्षों से बड़े-बड़े शक्तिशाली सम्राट प्रयत्न करके थक गये (मुकुट दोनों हाथों से उतारते हुए कहते जाते हैं) जिसके लिये सैकड़ों, हजारों सिसोदिया राजवंश के वीरों ने तथा अन्य राजपूतों ने हंसते-हंसते अपने प्राणों का बलिदान कर दिया, जिस राजवंश और इस राजमुकुट की गौरव गरिमा को सुरक्षित रखने के लिये हजारों वीर बालाओ ने जौहर की ज्वाला में अपनी आहुति दे दी - मेवाड़ के मान सम्मान, गौरव का प्रतीत यह मुकुट जो मुगल सम्राटों के सामने भी कभी नही झुका (मुकुट को अजीतसिंह के सामने रखते हुए) वही राजमुकुट आज तुम्हारे चरणों में पड़ा है लो यदि तुम्हारी तीव्र इच्छा हो तो ये राजमुकुट तुम ले लो परन्तु मेरे प्राणों से प्यारी कमलनयनी कन्या कृष्णा को मुझे सौंप दो,

अजीतसिंह! यदि तुम सच्चे राजपूत हो तो मुझे वचन दो कि कृष्णा की हत्या नहीं करोगे और मेवाड़ की भी रक्षा करोगे।

जैसे ही महाराणा ने राजमुकुट अजीतसिंह के चरणों में रखा, महारानीजी ने अचानक दरबार भवन में प्रवेश किया। महाराणाजी की दशा देख महारानी को बहुत दुःख हुआ। उसने तुरन्त मुकुट अपने हाथों से उठाकर पुनः महाराणाजी के सिर पर आदरपूर्वक रखा और अजीतसिंह की ओर क्रोध प्रकट करती हुई अपनी सहेलियों के सहारे महाराणाजी को वह अपने जनाना महल में ले गई। वहां जाकर उनकी राजसी वेशभूषा उतार दी। सादे कपड़े पहनाये उनकी सेवा सुश्रुषा में कई दास-दासियों को लगा दिया।

महाराणाजी मानसिक परेशानियों से अचेत हो गये थे। महारानी के निरन्तर परिश्रम व वैद्यराज के सहयोग से एक प्रहर के पश्चात् वे कुछ स्वस्थ हो गये; दिन के शेष समय में उन्होंने विश्राम किया।

धीरे धीरे महारानी को आज की सभी घटनाओं और बातचीत का जब सारांश ज्ञात हुआ तो महारानी भी अत्यन्त दुःखी हो गई। उसने अपने भाग्य को कोसा और कहा कि हम राजघराने में उत्पन्न होकर एक साधारण आदमी जितना भी व्यक्तिगत दुःख सुख के सहयोगी नहीं हैं। विवशताओं से हमारी इतनी खराब स्थिति हो जाएगी कि हम सब तरफ से दुःखी और प्रताड़ित हो जायेंगे कि अपनी पुत्री के प्राणों की रक्षा, देश की रक्षा भी इतनी कठिन हो जायेगी कि मेवाड़ भूमि में भी हम अपना गुजारा नहीं कर सकेंगे। विधि का विधान भी कितना अजीब है।

महारानीजी इस प्रकार अपने भाग्य की विवशता पर दुखी हो रही थी। कहावत है कि स्त्री का चरित्र और मनुष्य के भाग्य को किसने देखा, किसने परखा है?

जो मेवाड़ बाप्पारावल के समय से अभी तक किसी भी देशी तथा विदेशी शक्ति के आगे नही झुका, वही राजवंश का राज मुकुट आज झुकने पर विवश हो गया। हम वास्तव में इतने निस्तेज हो गये हैं कि मेवाड़ के गौरव की और कृष्णा के प्राणों की रक्षा करना भी कठिन जान पड़ता है।

जवानदास और अजितसिंह का षड्यंत्रकारी मस्तिष्क सदैव ही हमें हानि पहुँचाने का प्रयत्न करता है। वह स्वयं का उल्लू सीधा करने में लगे हुए हैं। कृष्णा का विवाह किस महाराजा से होगा, यह निश्चित रूप से किसी को मालूम नहीं है। मेरे प्यारे बच्चों! आप पहले स्वयं की रक्षा करो। ऐसा कहते हुए महाराणाजी की सेवा करती हुई महारानी और अन्य सभी लोग दैनिक कार्यों से निवृत्त हो, विश्राम करने चले गये।

---

# इक्कीस

उदयपुर नगर से लगभग पाँच मील की दूरी पर जयपुर के महाराजा जगतसिंहजी का शिविर लगा हुआ है। उनकी सेना के शिविर आठ वर्ग मील भूमि पर दूर दूर तक फैले हुए है। सब लोग अपने कार्यों में व्यस्त है। कुछ सैनिक युद्ध का अभ्यास कर रहे हैं। सेना अधिकारी गण युद्ध की योजना बना रहे हैं। कुछ गुप्तचर उदयपुर के चारों ओर यह पता लगाने गये है कि यदि राजमहलों में हमारी सेना प्रवेश करेगी तो कौन सा मार्ग सुगम एवं सरल होगा?

दूसरी ओर महाराजा जगतसिंह अपनी घरेलू सादी वेशभूषा में एक उच्चासन पर मसनद के सहारे विराजमान है। अपने पास वाली मसनद एवं तख्त पर बैठी हुई केसरबाई तथा रसकपूर से बातचीत कर रहे हैं। महाराजा की अनुमति से उन्होंने शिविर मे अभी अभी, जयपुर से आकर प्रवेश किया ही है - महाराजा कुछ चिन्तन में बैठे हुए थे - अचानक उन दोनों के प्रवेश पर महाराजा का ध्यान टूटा। केसरबाई कहने लगी - हमारे राजा साहब को केसरबाई का नमस्कार।

महाराजा जगतसिंह-बड़े आश्चर्य की बात है कि तुम यहां तक भी रसकपूर को साथ लेकर आ गई। क्या तुम्हें इतनी दूर आने में कष्ट नही हुआ?

केसरबाई - प्रेम की डोर से बंधे हुए हम यहां भी आपकी सेवा में आ गए। यदि कष्ट भी हो तो भी सहन कर लेना हमारा परम कर्तव्य है। हमारे यहां आने में आपको अचम्भा क्यों हो रहा है? आपने हमें प्रत्येक स्थान

पर आने-जाने का अधिकार दिया है। हम तो आपके प्रेम के दीवाने हैं—जहां पर दीपक वही पतंगा सदैव उपस्थित रहता है।

जगतसिंह - किन्तु यहां आना तुम लोगों का उचित नही है। हमारी सेना के अधिकारी, सैनिक, मेवाड़ के बड़े अधिकारी, राव, उमराव तुम्हें देखेंगे तो क्या कहेंगे ? मेरे रहन सहन एवं चरित्र पर क्या बुरा प्रभाव नही पड़ेगा ?

केसरवाई - महाराजा साहब ! क्या आपको कुछ शर्म सी महसूस होती है ? क्या हमारा आपके साथ आना जाना लज्जा का विषय है ? आपने तो सदैव मुझे उच्च स्थान दिया है, मुझे सर्व साधारण एव राज समाज में बराबर की अधिकारिणी बनाया है। हमें तो इस बात का अभिमान है ? जितना सम्मान एवं प्यार आपने दिया है, उतना शायद ही कोई राजा महाराजा दे सकेगा। रसकपूर को मैं जब से आपके महलों में लाई हूं, यह भी निहायत खुश है और अपने आपको धन्य समझती है। क्यों न रसकपूर ?

रसकपूर - हा - चाची - मैं तो अपने को रानी से भी ज्यादा एक पटरानी का सुख अनुभव करती हूं।

जगतसिंह - मेरे हृदय में तुम्हारे लिये अपार प्रेम है—और सम्मान है लेकिन वह सब मेरा व्यक्तिगत कार्य है। सार्वजनिक रूप से, ससार की लोक लाज का हमें ध्यान रखना पड़ता है—फिर यह जयपुर नहीं है मेरा महल नहीं है—यहां पर मेवाड़ की भूमि है। दूर दूर के राज्याधिकारी यहां मिलने आते है और यहां तो हम थोड़े समय के लिये विशेष कार्य से ही आये हैं। मैं संसार की अपने प्रति राय का आदर करता हूं।

केसरवाई - मैंने अपनी जवानी आपकी सेवा मैं लुटा दी महाराज ! आपकी इच्छानुसार ही में राजस्थान की बेमिसाल सुन्दरी रसकपूर को आपकी सेवा में लेकर आई, क्या हमारे प्रेम के लिये आप अन्य स्त्रियों का त्याग नहीं कर सकते ? आप हमारे खास है - हमारा संसार, हमारी खुशिया आपके चरणों में प्रस्तुत हैं। हम आपको वापस जयपुर ले चलने हेतु विशेष रथ में बैठकर आई हैं।

जगतसिंह - केसर! रसकपूर! प्रेम त्याग एवं बलिदान चाहता है।

केसरवाई - केवल नारी से ही ? पुरुष से क्यों नहीं ?

जगतसिंह - केसर ! आज क्या तुम मुझसे लड़ने आई हो ?

केसरबाई - हां महाराज ! अपने प्यार को हम लुटता हुए कैसे देख सकते है ? आप तो कृष्णाकुमारी से नया विवाह रचाने आये हैं मुझमें और रसकपूर में क्या यौवन नही है ? क्या रसकपूर कृष्णा से कम सुन्दर है ? फिर आपको विवाह करने की ऐसी क्या आवश्यकता है ?

जगतसिंह - राजा गण अनेक विवाह करने के अधिकारी है । यह राजनीति है । इसमें तुम्हें क्या आपत्ति है ?

केसरबाई - एक वैश्या अनेक व्यक्तियों से प्रेम का खेल खेलती है और एक राजा अनेक रानियां रख सकता है । क्या दोनों का कार्य समान नहीं है ? समाज के लोग राजा का सम्मान करते है परन्तु वैश्या का अपमान करते है , उससे घृणा करते है । क्या पुरुषों का महिलाओं के प्रति यह अन्याय नहीं है ? पुरुष प्रधान समाज का विधान हमारे लिये उपयुक्त नही है । हम भी बराबरी का अधिकार चाहती हैं ।

जगतसिंह - इस समय में तुमसे तर्क वितर्क करना नहीं चाहता, केसर । मैं तुम्हारे हृदय की वेदना को, दर्द को समझता हूँ किन्तु अभी मैं बाध्य हूँ । मैं राजकुमारी कृष्णा से इसलिये विवाह कर रहा हूँ कि उस उच्च क्षत्रीय की सन्तान ही राजगद्दी की अधिकारी है । तुम्हारी या रसकपूर की सन्तान राजगद्दी पर नहीं बैठ सकती । अतः मुझे विवाह करना अत्यन्त आवश्यक है ।

केसरबाई - आज तक आप मेरे यौवन से खेलते रहे । रसकपूर के यौवन का भी मन्थन करके तुम सन्तुष्ट नही हुए । हमें दिलासा देते रहे । हमारी इच्छाओं को, हमारी अभिलाषा को आपने आग की धधकती ज्वाला में भस्म करने को छोड़ दिया है । हमारा रोम-रोम झुलस रहा है महाराज ! हम पर अन्याय मत करो । महाराज, आने वाले समय को देखने को तो शायद हम जिन्दा नहीं रहेंगे; पर बड़े-बड़े राज्यों की गद्दी पर हमारी सन्तानें ही राज्य करेगी । उच्च क्षत्रीय वंश की मर्यादा अपने अन्याय की आग में जलकर स्वयं ही नष्ट हो जाएगी - महाराज और भविष्य में हमारा राज्य होगा ।

जगतसिंह - मैं सुदूर भविष्य की चिन्ता नही करता । तुम्हारे अंग समर्पण मे तुम्हारा स्वार्थ, तुम्हारी खुशी है - तुम्हें अर्थलाभ है । मैं तुम्हारे ऊपर

कोई अन्याय नहीं कर रहा हूँ। अन्याय को सहन करना भी त्याग का अंग है, केसर।

केसर - महाराज! आपको धारणा बड़ी अजीब है। आप दौलत की तराजू में हमारे प्रेम को तोलते हैं? हम जिससे प्रेम करती है, उससे बदला लेना भी जानती हैं? मैं अपने रूप की ज्वाला को किसी मंदिर का दीपक नही बनाऊंगी। मैं अपने प्रेम की ज्वाला में हजारों पतगों को जलाकर भस्म करूंगी।

जगतसिंह - मैंने तुम्हे क्या नहीं दिया? उचित से भी अधिक सम्मान दिया मेरे साथ खुले आम हाथी पर बैठा सबने देखा। राजगद्दी पर बैठाया। रसकपूर को भी तुमसे अधिक सम्मान दिया - अब मैं तुम्हें अपना अपमान नहीं करने दूंगा। तुम्हें यहां पर नही आना चाहिये।

रसकपूर - क्योंकि आप राजा हैं - उच्च वंश के राजपूत है? आप की इज्जत अनमोल है और हमारा जीवन घासफूस का ढेर है, जिसकी कोई कीमत ही नही है? अच्छा तो अब हम जाते हैं। आज हमारे जीवन का नया अध्याय आरम्भ होगा। आज सध्या को आपको राजकुमारी से होने वाले विवाह के उपलक्ष में जयपुर सरदारों और सैनिकों के सामने देखने लायक नाच होगा। आप भी इस नाच को देखने के लिये जरूर आइयेगा। केसर और रसकपूर एकदम उठकर हाथ पकड़कर शिविर के बाहर जाने लगती है। दोनों की आँखें क्रोध से लाल हो रही है। महाराजा जगतसिंह भी फुर्ति से अपने स्थान से उठ जाते हैं। उन दोनों को बुलाने के लिए कुछ दूर पीछे पीछे जाते है। पुकारना ही चाहते हैं ठीक उसी समय शिविर के बाहर संग्रामसिंहजी महाराजा जगतसिंह से मिलने के लिये आते हुए दिखाई देते हैं। जगतसिंह ने दोनों हाथों से केसर और रसकपूर को पकड़ रखा था और उनको बाहर जाने से रोक रहे थे।

संग्रामसिंह - दरवाजे में प्रवेश करते ही महाराजा को इस स्थिति मे देखकर कहते हैं - ओह! मैं बहुत बेवक्त आया महाराजा। अच्छा तो अभी वापस जाता हूं।

जगतसिंह - अपने हाथों से उन दोनों को छोड़ देते हैं।

केसरबाई - आप क्यों जाते हैं? आइये! मैं शेरनी नही हूँ एक औरत हूँ।

संग्रामसिंह - मैं शेरनी से तो बिल्कुल नही डरता। पर औरत से कभी

कभी डरना पडता है-। यह कहकर संग्रामसिह शिविर के दरवाजे के बाहर स्वयं ही चले जाते है । जव सग्रामसिह जाने लगे तो महाराजा ने कहा— अजी ! सरदार शक्तावजी आप तो सचमुच ही जाने लगे । केसर के कंधे पर हाथ रखते हुए महाराजा कहते हैं - यह हमारी केसर है, ये प्राणों से प्यारी रसकपूर है । ये मेरी दायीं वायीं आँखें हैं ? ये मेरे जीवन की खुशियों की गंगा जमुना हैं । उनकी उपस्थिति के बिना कृष्णाकुमारी का विवाह करना क्या अधूरा नहीं रहेगा ?

केसरबाई - मैंने सब कुछ जीवन में प्राप्त कर लिया है । मैं रसकपूर को लेकर आज ही जयपुर जा रही हूं जो सम्मान आप ने मुझे प्रदान किया है, वह मेरे जीवन की अमूल्य निधि है । आज केसर आपके राजकाज में आपके गृहस्थ जीवन में भी, कभी भी बाधा बनकर नहीं रहेगी । मैं भी आत्म-सम्मान वाली नारी हूं - मैं आपको विश्वास दिलाती हू कि मेरे कारण आपको प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप में कही भी लज्जित नहीं होना पड़ेगा । अच्छा हम चलते हैं । हाथ जोड़कर, झुक कर दोनों महिलाएं नमस्कार करती हैं और तुरन्त ही राज शिविर से बाहर जली जाती है । उनके बाहर जाते ही कुछ दूर पर खड़े संग्रामसिहजी राज शिविर में प्रवेश करते हुए कहते हैं—महाराज ! केसरवाई को देखकर मेरे हृदय में कुछ श्रद्धा उत्पन्न होती है । कई व्यक्तियों ने इसके वारे में मुझे भिन्न-भिन्न प्रकार की बातें कही थी किन्तु आज इसको प्रत्यक्ष देखकर भ्रम के वादल दूर हो गये । प्रत्युत्तर में महाराज जगतसिह बोले, केसर और रसकपूर मेरे मधुमय जीवन की मधुर पहेली है । इनका पूर्ण रूपेण समर्पण मेरे लिये चिर स्मृति का विषय रहेगा । अब इनके विषय में अधिक सोचना इस समय उपयुक्त नही है । आइये संग्रामसिहजी इस आसन पर वैठिये - दोनों वैठकर बातचीत करते हैं । महाराजा ने पूछा कहिये दूसरे दल का क्या हालचाल है ? उनके रंग ढंग कैसे है ? उनकी तैयारी किस सीमा तक है आशा है आपने अपने गुप्तचरों की सहायता से विस्तृत समाचार प्राप्त कर लिये होंगे ।

संग्रामसिह - महाराज ! स्थिति इतनी विकट है कि अब मेरे पास यहां खाली वैठने का समय विल्कुल नही है । हमें तुरन्त ही कुछ सक्रिय शक्तिशाली कार्य करना है । आप मुझे तुरन्त पांच सौ वीर योद्धा देने की व्यवस्था करावें ताकि सही समय पर, सही एवं उपयुक्त कार्यवाही पूर्ण शक्ति एवं क्षमापूर्वक की जा सके ।

जगतसिंह - लेकिन ! संग्रामसिंहजी !

संग्रामसिंह - महाराज ! पूर्ण योजना आपको में रास्ते में चलते समय बताऊंगा। आप सैनिक दलों में चलकर चुने हुए वीर योद्धा, जो निर्भीक, स्वामीभक्त, युद्ध कौशल में सिद्धहस्त और कर्त्तव्य पर वलिदान हो जाने हों मुझे दे दीजिये।

जगतसिंह - अच्छा ! मैं प्रधान सेनापति को यहां बुलवाकर यह व्यवस्था करवाता हूँ।

संग्रामसिंह - महाराज ! अधिक समय नष्ट नहीं करें। प्रत्येक क्षण वहुत ही मूल्यवान है। हमें शीघ्र यहां से चलकर योद्धाओं का चयन करके उपयुक्त कार्यवाही करना आवश्यक है।

शिविर के वाहर दोनों प्रस्थान कर जाते हैं। आवश्यक व्यवस्था का काम प्रारम्भ हो जाता है। जब लोहा गर्म हो तभी चोट लगाना होता है।

## बाईस

महाराणा भीमसिंह अपने निजी कक्ष में सिर पर हाथ रखे आराम कुर्सी पर आराम से बैठे विचार मुद्रा में तल्लीन हैं। वे इतने गंभीर लगते हैं कि जैसे किसी गंभीर समस्या पर विचार में डूबे हुए हैं। धीरे-धीरे कृष्णा कुमारी चुपचाप उनके कक्ष में पिछले दरवाजे से प्रवेश करती है। कुछ देर शान्त खड़ी रहती है। फिर अपने पिताश्री की स्थिति पर विचार करती हुए उनके निकट पड़ी कुर्सी पर बैठ जाती है। कुछ आहट होने से महाराणा भीमसिंह की तन्द्रा टूटती है। तनिक सिर उठाकर जब महाराणाजी अपनी दाहिनी ओर देखते हैं तो राजकमलिनी कृष्णा को देखकर कहते हैं - वेटी तुम्हें आये कितनी देर हो गई ? मुझे तो पता भी नहीं चला कि तुम कब आकर बैठ गई ?

कृष्णा - अभी अभी आई हूँ पिताजी ! चित्रशाला में मेरा मन नहीं लग रहा था। रमा, राधा, चन्द्रा सब सखियां भी विश्राम के लिये दोहपर में चली गईं। अतः मैं इधर यों ही घूमती पिछोला झील के दृश्य देखती हुई आपके कक्ष में आ गई।

महाराणा - हां बेटी। मैं शासन सचिवालय का आवश्यक कार्य निपटा कर अभी आधे घण्टे से बैठा था और कुछ मानसिक विश्राम लेने की चेष्टा कर रहा था। राज्य की हलचल में परेशानी अधिक है।

कृष्णा - पिताजी, कुछ दिन पहले एक अति भयानक रंग रूप वाला पठान आया था। वह कौन था? और हमारे दरबार में उसके आने का क्या उद्देश्य था?

महाराणा - बेटी, वह डाकुओं का पठान सरदार अमीर खां था, वह रुहेलखण्ड उत्तरांचल से राजपूताना में एक सशक्त फौज व तोपखाना लेकर घूमता है। वह जोधपुर के नरेश मानसिंह का सन्देशवाहक बनकर आया था।

कृष्णा - एक डाकू सरदार किसी राजा का दूत बनकर आया? बड़ा आश्चर्य है। एक संभ्रान्त राजा और डाकू का क्या संबंध?

भीमसिंह - नरवर का ठाकुर मानसिंह भी तो डाकू जैसा ही है। उसने बलपूर्वक षड्यंत्र और धोखे से जोधपुर के महाराजा भीमसिंह को मरवा दिया, असली उत्तराधिकारी भीमसिंह के पुत्र अमरसिंह को कैद कर लिया, बिना किसी अधिकार जबरदस्ती से जोधपुर का राजा बन बैठा। यदि उसकी माता उच्च क्षत्रीय कुल की होती तो भी मैं तुम्हारा विवाह प्रस्ताव उसके पास भेज देता, समझी बेटा।

कृष्णा- पिताजी! शक्ल सूरत, अजीब पहनावे और लाल लाल आंखों वाला। अमीर खां दूर से यमराज जैसा ही नजर आता है। काले घोड़े पर सवार, कपड़े भी काले और लाल, क्रोधाग्नि से जलती रक्तावक्त आंखें आग उगल रही थी। मैंने अपनी सखियों सहित छत पर खड़े हुए उसे देखा था। साक्षात् यमराज का अवतार दिखाई दे रहा था।

भीमसिंह - तुम नहीं जानती बेटी। उस नर-पिशाच को जीवित या मृत पकड़ लाने वाले को अंग्रेजों की गोरी सरकार ने एक लाख रुपयों के पुरस्कार की घोषणा की है।

कृष्णा - पिताजी क्या उसे पकड़ना कठिन है?

भीमसिंह - हां बेटी। उसके साथ एक बड़ी फौज है, हथियार हैं और हत्या, लूटमार का धन लेकर किसी का खून करना, गांवों को लूटना ही उसका खास धन्धा है।

कृष्णा - पिताजी ! तो अमीर खां उदयपुर में आपसे मिलने क्यों आया ?

महाराणा - वर्तमान जोधपुर नरेश मानसिंह की ओर से विवाह प्रस्ताव लेकर आया था। हमने उस प्रस्ताव को जब ठुकरा दिया तो वह हमें भयंकर भीषण आक्रमण, भयंकर युद्ध की धौंस देकर गया। यह राजपूतों का सर्वनाश करने का प्रण करके राजपूताने में आया है। अब वह सीधा जोधपुर जा रहा होगा।

कृष्णा - पिताजी ! आपने मेरे लिये एक विपत्ति को जानबूझ कर निमंत्रण दिया है।

भीमसिंह - बेटी ! तुम यह क्या कहती हो ? तुम रूपवती, गुणवती और उच्च सिसोदिया वंश की क्षत्रीय राजकन्या हो। कोई भी माता पिता अपनी पुत्री को किसी कुपात्र के हाथ में सौंपकर पाप के भागी कैसे बन सकते हैं ? यह दूसरी बात है कि आज मेवाड़ आर्थिक दृष्टि से कमजोर है। लेकिन हम अपने उच्च वंश की प्रकाशित ज्योति कैसे बुझने देंगे ?

कृष्णा - पिताजी मेरे कारण मेवाड़ पर संकट आ रहा है। मैं विनाशकारी हूं। मेरा जन्म अमंगल का प्रतीक है। मैं अकल्याण की खान हूँ। फिर यदि मैं अपने प्राणों को राजस्थान की एकता के लिये, राजपूतों की भलाई के लिये, रक्त की वहने वाली नदियों को रोकने के लिये बलिदान कर दूं तो राजस्थान का, विशेषतः मेवाड़ का बड़ा लाभ होगा।

भीमसिंह - चुप रहो कृष्णा। ऐसी अशुभ बातें मुंह से उच्चारित मत करो। तुम वीरों की सन्तान हो, सिसोदिया वंश की राजकुमारी हो, प्राण त्याग तुम्हारे लिये कोई बड़ी बात नहीं है परन्तु हमारे होते हुए तुम्हें धैर्य नहीं खोना चाहिये। इसमें तुम्हारा दोष भी क्या है ? धीरज रखो बेटी, भगवान एकलिंगजी (शिवशंकरजी) सब ठीक करेंगे।

कृष्णा - पिताजी में निकट भविष्य का एक अत्यन्त भयंकर वास्तविक चित्र अपने स्मृति पटल पर देख रही हूँ। एक अत्यन्त भीषण विनाशकारी युद्ध शीघ्र होने वाला है। यह युद्ध होगा केवल मेरे विवाह को लेकर।

राजस्थान की धरती पर खून की नदियां बहने लगेगी। हजारों वीर अकारण आपस में कट कट कर मर जाएंगे। हजारों स्त्रियां विधवा हो जाएंगी, अगणित बालक अनाथ हो जाएंगे। राजपूतों की शक्ति

आपसी फूट व्यर्थ के अभिमान और विदेशियों की चाल के कारण नष्ट हो जायेगी। विदेशी मुसलमान पठान और अंग्रेज राजपूतों की शक्ति को पहचानते हैं इसीलिये हमें किसी न किसी बहाने आपस में लड़ाकर देश को कमजोर बना रहे हैं। राजपूताने में राजाओं को आपस में लड़कर मर मिटने में देर नहीं लगेगी और फिर अंग्रेजों का, अन्य विदेशियों का ही भारत में राज्य हो जाएगा। पिताजी, मेरे कारण रक्तपात होगा, शक्ति का विनाश होगा हमारी स्वतंत्रता परतंत्रता की शृंखलाओं में न जाने कितने वर्षों के लिये जकड़ जाएगी। राजा लोग-इन विदेशी गोरों का मुकाबला कैसे कर सकेंगे ?

महाराणा - फिर तुम क्या चाहती हो बेटी ?
कृष्णा - मेरी आत्मा तो कहती है कि मेरी मृत्यु से ही यह महासंकट टल सकता है, मैं वीर क्षत्रीय कन्या हूं, वीरांगना हूँ, पिताजी। मेवाड़ की वीर रमणियों ने, महारानी पद्मिनी ने अग्नि की गोद में प्राणोत्सर्ग किया है। आप मुझे भी अनुमति दें पिताजी, मैं भी मेवाड़ मां की रक्षा में अपने प्राणों का बलिदान दे दूंगी।
भीमसिंह – नहीं बेटी। इसकी आवश्यकता ही नहीं है। ऐसी बातें मत सोचो। जाओ विश्राम करो, मैं भी जाता हूँ। इस संकट से बचने का उपाय हमें शीघ्र ही ढूंढना होगा। ऐसा कहते हुए महाराणा महारानी के कक्ष की ओर जाते है।

कृष्णा - हे ईश्वर ! मुझे इतनी शक्ति दो कि इस गुरुतम उत्तरदायित्व को मैं संभाल सकूं। मेरे ही कारण राजपूतों में आपस में ही रक्त की नदियां बहेंगी। राजस्थान कमजोर हो जाएगा। परस्पर फूट को दूर करने में यदि अपने प्राणों की आहुति भी देनी पड़े तो मैं अपने जीवन को धन्य समझूंगी। राजस्थान की एकता, जनता की भलाई, जनकल्याण में यदि मेरे शरीर की हड्डियां भी काम में आयें तो मैं अपने को सौभाग्यवती मान लूंगी। मेरा जीवन सार्थक हो जाएगा। हे ईश्वर !

× × ×

सूरज अपनी दिन भर की थकावट को लिये हुए डूब रहा है। आज आकाश में चारों ओर उदासी का वातावरण है। धूमिल संध्या है, रंग-

बिरंगे बादलों के स्थान पर कृष्णमेघ ही दूर दूर तक दृष्टिगोचर हो रहे हैं।

राजवाटिका में मयूरासन पर बैठी कृष्णाकुमारी अत्यन्त उदास होकर धीरे धीरे एक गीत गा रही है। गीत में निराशा व आत्मोत्सर्ग की भावना प्रकट होती है। गीत का भावार्थ कुछ इस प्रकार है कि मैं विष का प्याला पी लूंगी। मन को प्रसन्न करने वाले सैकड़ों सुख के प्याले मैंने अपने जीवन में पिये हैं जिनके कारण हृदय कमल खिल जाते थे, सुख की वर्षा होती थी। किन्तु अब मेरे जीवन की संध्या आ गई है। दुःख के इन काले दिनों में यदि मुझे विष भी पीना पड़े तो हार्दिक प्रसन्नता होगी। हंस कर प्राण देना और संसार का भला करना ही मानव जीवन का सन्देश है। सदा स्वर्ग में प्राप्त होने वाला आनन्द, प्रेम का रस हमें मतवाला बना देता है। मैंने अपने छोटे से जीवन में सब कुछ पा लिया है। अब यदि मेरे प्राणों का उत्सर्ग भी करना पड़े तो मुझे कोई आपत्ति नहीं है। मैंने विभिन्न प्रकार के गीत गाये हैं, गीतों से मन की सोई भावनाओं में हलचल होती है किन्तु अब दूर से मुझे संगीत की ध्वनि सुनाई दे रही है, उसमें से गला घोटने, विषपान करने की आवाजें मेरे कानों में गूंज रही हैं। कोई अदृश्य शक्ति मुझे मौत के द्वार पर बरबस खींच कर ले जा रही है। यदि मेरा जीवन मनुष्य जाति की भलाई में काम आता है, मेरे प्राणोत्सर्ग से यदि एकता का प्रकाश उत्पन्न होता है, राजपूतों में एकता स्थापित होती है तो मैं अपने इस लघु जीवन को भी धन्य समझूंगी। मेरी आत्मा स्वर्ग के द्वार पर आनन्द प्राप्त करेगी - यही मेरा मोक्ष है। वैवाहिक जीवन में कोई आनन्द नहीं है, आत्मोत्सर्ग में ही सच्चा आनन्द है। अब मुझे जीवन में कुछ भी नहीं करना है। बस रक्त की नदियां बहने से रुक जावें, इसी में हमारी मातृभूमि का कल्याण है। हे भगवान, मुझे ऐसी शक्ति दो कि मैं मानव कल्याण के लिये अपने आप को न्योछावर कर दूं।

रमा ने राजवाटिका में बहुत देर पहले ही प्रवेश कर लिया था। वह कृष्णाकुमारी के पीछे ही आ रही थी। कृष्णा को यह ध्यान भी नहीं था कि थोड़ी दूर पर रमा एक आम के पेड़ के सहारे खड़ी हुई उसकी सब बातें सुन रही थी। उसकी गतिविधियों पर उसका पूर्ण ध्यान लगा था जब कृष्णा ऊंचे हाथ करके अंगड़ाई लेने लगी तब रमा ने जोर से पुक

कर कहा अरी ओ विष पीनेवाली जगत कल्याणी ! जरा इधर तो देख ।
कृष्णा - (तनिक चौककर) ओ रमा, तू कब से खड़ी है ?

रमा - इस संध्या की कालिमा में तेरी अक्ल भी काली पड़ गई है । कैसे बुरे विचार तुम्हारे मस्तिष्क में चक्कर खा रहे हैं ?

कृष्णा - ऐसी कोई बात नही है रमा । मैं तो वैसे ही एक गीत गा रही थी ।

रमा - मुझे धोखा देती हो बहिन् । यदि तुम्हारा मन, तुम्हारा मस्तिष्क सही स्थिति में होता तो क्या ऐसा भयानक गीत गाती ? और विशेषतः ऐसे मंगलमय समय में जब कि तुम्हारे मंगल विवाह के गीत महलों में और उदयपुर के प्रत्येक मोहल्ले में गाये जा रहे हैं ।

कृष्णा - रमा ! पर यह विवाह कैसे हो सकेगा ? जयपुर और जोधपुर नरेशों में से यदि एक भी मनुष्यता के मार्ग पर चलने को प्रस्तुत हों तो उज्ज्वल भविष्य की कुछ आशा की जा सकती है ।

रमा - इस सौन्दर्य की साक्षात् देवी को कौन पुरुष ऐसा होगा जो प्राप्त करने की इच्छा नहीं करेगा ? नारी का रूप ही बड़े बड़े अनर्थों की जड़ है । महारानी पद्मिनी के सौन्दर्य ने मेवाड़ का विनाश करा दिया था । तुम भी कृष्णा उससे कम सुन्दर नहीं हो ।

कृष्णा - इसमें मेरा क्या अपराध है रमा ?

रमा - अपराध तो उस विधाता का है जिसने तुम्हारे शारीरिक सौष्ठव एवं सौन्दर्य की रचना में अपनी संपूर्ण कलाओं को ही समाप्त कर दिया । कलात्मक हृदय की सहृदयता, सरलता और सहज सौन्दर्य की रूप राशि ही तुम पर न्यौछावर कर दी । लेकिन मुझे दुख इस बात का है कि राजपूतों को विधाता ने वीरता के साथ विवेक और सुमति क्यों नहीं प्रदान की ?

कृष्णा - एक बात और पूछूं तुमसे ?
रमा - हा हां, क्यों नहीं ?
कृष्णा - क्या कोई ऐसा उपाय, ऐसी युक्ति नही हो सकती जिससे यह हत्याकाण्ड रुक जाय । मेरे शरीर के इस मांस पिण्ड के लिये हजारो सिसोदिया, कछवाहा और राठौड़ अपने प्राण व्यर्थ में नष्ट नहीं करें ।
रमा - इसका हमारे पास कोई उपाय नहीं है ।

कृष्णा - मुझे एक उपाय सूझता है, वह यह कि दोनों में से कोई भी मुझे प्राप्त नहीं कर सके ।

रमा - तेल और पिट्ठी चढ़ने के पश्चात् कन्या का विवाह रोका नहीं जा सकता । विवाह तो होगा ही और उन्हीं के साथ होगा जिनके साथ महाराणाजी ने तुम्हारी सगाई की है । तुम्हारी भांवरें पडते समय चाहे शहनाइयों की गूंज हो या तलवारों की झंकार - राजपूतों के लिये यह कोई नई बात नही है । राजपूत आन के मान पर ही बलिदान होते आये हैं । तलवारों की झकारों के मध्य ही क्षत्राणियों के विवाह होते रहे हैं । उन्हें ढोल और बाजों की, बांकियों की, शहनाइयों की आवश्यकता नहीं है ।

कृष्णा - इसी कारण बहुत से राजपूत अपनी लड़की को पैदा होते ही मार डालते थे ।

रमा - वह घृणित कार्य तो अब भी कही कहीं होता है, कृष्णा !

कृष्णा - फिर तो मुझे भी क्यों नहीं मार डाला गया, रमा ?

रमा – कुछ लोग लड़कियों को इसलिये मार देते है कि उनके विवाह में अत्यधिक खर्च करना पड़ता है या अच्छे कुल का योग्य वर नही मिलता । अगर वर मिल भी जावे तो दहेज अधिक मांगते हैं अतः मां बाप के सामने एक ही रास्ता रह जाता है । लड़कियों को अविवाहित रखें तो वे नरक में जाते हैं और यदि जहर देकर मार डालें तो उन्हें पाप लगता है परन्तु कृष्णा तुम तो मेवाड़ के राजवंश की शोभा हो, सौन्दर्य की देवी हो । तुम्हारे लिये तो वरों में प्रतिस्पर्द्धा हो रही है । तुम्हारे गुणों पर तो राजा लोग रीझ रहे हैं । तुम्हें ऐसी बुरी बात की ओर तनिक भी घ्यान नहीं देनां चाहिये ।

कृष्णा - रमा ! यह सौन्दर्य, यह सौभाग्य किस काम का जिसके कारण हजारों व्यक्ति मृत्यु का वरण करें ? वह स्वर्ण आभूषण किस काम का जिससे कान ही टूट जायं । वह अमृत किस काम का जिससे अमर होने के स्थान पर लाखों लोग नष्ट हो जाय ? इस प्रकार दोनों सखियां वाद-विवाद कर रही थीं कि एक दासी दौड़ी हुई आई और उसने रमा ! रमा ! कह जोर से पुकारा । दासी ने कहा - रमा तुम्हें महारानीजी शीघ्र बुला हैं । जल्दी करो अन्यथा वह अप्रसन्न हो जाएंगी ।

रमा - अच्छा राजकुमारीजी ! मुझे महारानीजी शीघ्र बुला रही हैं। आप यहां आराम से बैठिये। मैं थोड़ी देर में वापस आती हूं। दो चार दिन में विवाह के पश्चात् आप मेवाड़ से दूर चली जाएंगी इसलिये आज यहां एकान्त में बैठकर तुम-से-बातें करने में बड़ा आनन्द आ रहा है। मेरा मन तुम्हें छोड़ने का हो ही नहीं रहा है। मैं ये गई और यह आई। इतना कहकर रमा चली गई। जोर से कहा -, यह आई महारानीजी। वह महल में चली गई।

कृष्णा उसी स्थान पर पुनः बैठ गई। अंधेरा बढ़ रहा था, कृष्णा के मन में विभिन्न प्रकार के विचार चल रहे थे।

थोड़ी देर में अंधेरा कुछ और घना होने गया। पेड़ के पीछे से अपने शरीर को पूर्ण रूप से ढके हुए चेहरे पर नकाब चढ़ाकर जवानदास एक हाथ में म्यान से निकली हुई तलवार लेकर पीछे से कृष्णा की गर्दन पर वार करना चाहता है। ठीक उसी समय कृष्णा सचेत होकर बड़े ध्यान से जवानदास की ओर घूरकर देखने लगी। जवानदास कृष्णा की तीव्र दृष्टि से कांप उठा। उसे पसीना आ गया। हृदय घबरा गया। हाथ से तलवार छूटकर भूमि पर गिर पड़ी। वह थर थर कांपने लगा। बोली बन्द हो गई। विस्मय और अज्ञान की अवस्था में वे किंकर्तव्यविमूढ़ हो गया।

कृष्णा - इस विचित्र वेशभूषा में नकाब चढ़ाये क्या काका जवानदास हैं ? आप इस तरह कांप क्यों रहे है ? आप आये हैं नंगी तलवार लेकर। कहिये, क्या मेरा वध करना चाहते थे ? जवानदास नकाब हटाते हुए भर्राई हुए आवाज में कहते हैं, हां, मैं···· मैं······पापी हूँ कृष्णा। मुझे माफ कर दो राजकुमारीजी. – मैं सचमुच नीच हूं, मैं नराधम हूं, पापी हूं कहते कहते कृष्णा के पैरों में गिर कर क्षमा याचना करने लगता है।

कृष्णा - उठो काकाजी ! उठो ! वास्तव में मेरे सौभाग्य चन्द्र को ही ग्रहण लग गया है। विनाश काल में बुद्धि भी विपरीत हो जाती है। जवानदास कृष्णा के पैरों को छोड़कर खड़े हो जाते हैं। ठीक उसी समय कुछ दासियों के साथ महारानीजी कृष्णा के सन्निकट आ जाती है।

महारानी – क्या बात है कृष्णा ? कृष्णा जवानदास की ओर संकेत करके कहती है, माताजी इनसे ही पूछिये क्या बात है ? ये तलवार लेकर मुझे क्यों मारने आये हैं ?

महाराणी - जवानदास की ओर अत्यन्त क्रोधाग्नि भरी लाल आँखों से देखकर जोर से कहती है, क्या बात है ? तुम्हे शर्म नहीं आती ? एक युवा अबोध बेटी पर तुमने तलवार उठाई। तुम्हें-तुम्हें ... डूब मरना चाहिये। महारानी कहती ही चली गई। उनके शान्त होने पर जवानदास ने अपने कोट की जेब में से एक पत्र निकाला। उसे पूरा खोलकर महारानीजी को दिया। महारानीजी ने पत्र हाथ में ले लिया और सबको उसी तरह महाराणा के महल में चलने का आदेश दिया। जवानदास को चार महिला अंगरक्षकों ने चारों ओर से घेर लिया। उनकी तलवार उठाई और महाराणा के निवास की ओर सब लोग राजवाटिका से बाहर निकल कर चले गये।

अंधेरा बढ़ रहा था। कुछ समय पश्चात् दीपक और मशालों की रौशनी में सब लोग महाराणाजी के कक्ष में बैठ गये।

महारानी ने जवानदास के दिये हुए पत्र को ध्यानपूर्वक पढ़ा। इसमें महाराणा ने कृष्णा की हत्या करने का आदेश दिया था। राजकुमारी कृष्णा माता के हाथ से पत्र लेकर पढ़ने लगती है।

महारानी - बस मेवाड़ के वीरों की वीरता बालिकाओं के प्राण लेने पर ही उतर आई है। इसीलिये वीरों ने लम्बी लम्बी तलवारें कमर में बांध रखी हैं। क्या आपको अपनी पुत्री की हत्या करते हुए दया नही आती। क्या आपकी वीरता " यही है ?

जवानदास - महारानीजी ! सभी सरदारों और महाराणाजी ने विचार करके देखा कि मेवाड़ की सुरक्षा और मान मर्यादा की रक्षा का कृष्णा के बलिदान के अतिरिक्त कोई उत्तम उपाय नही है। मैं तो केवल महाराणा और मंत्री परिषद् की आज्ञा का पालन करने आया था। परन्तु मैं बेटी कृष्णा को देख स्वयं ही हार गया।

कृष्णा - इस पत्र के अनुसार पिताजी की आज्ञा का पालन होना चाहिये। माताजी, आप वीर राजपूतानी हैं और मैं एक वीर राजपूत बाला हूँ। मैं किसी भी स्थिति में आपके दूध को, पिताजी के गौरवशाली राजवंश के गौरव को नष्ट नहीं होने दूँगी। अपने देश की भलाई, विनाश को रोकने का सफल प्रयत्न और राजस्थान की एकता के लिये मेरे शरीर का ब दान भी हो जाय तो श्रेष्ठ रहेगा। हजारों योद्धाओं के प्राण तो मां। ऐसा शुभ अवसर तो मां बड़े सौभाग्य से ही प्राप्त होता है।

महारानी - मेरी प्यारी वेटी कृष्णा, अभी इस वलिदान की कोई आवश्यकता ही नहीं है।

कृष्णा - लेकिन माताजी।

महारानी - वाद विवाद करने के लिये मेरे पास कोई भी समय नहीं है। इस समय तुझे मेरी आज्ञा माननी पड़ेगी। मैं महाराणाजी से मिलकर इस पत्र की विश्वसनीयता, वास्तविकता तथा वैधता का पता लगाऊंगी। इस समय मुझे पिछोला महल में जाना अत्यन्त आवश्यक है।

जवानदास - महारानीजी! जग मन्दिर महल में आपको जाने का मार्ग निर्वाध नही मिलेगा। वहां चारों ओर अमीरखां के पठान सरदारों का पहरा लगा हुआ है।

महारानी - मैं भी तलवार धारण करूंगी। मैं भारत के प्राचीनतम वीर योद्धाओं के क्षत्रीय कुल की वीर पुत्री और सिसोदिया वंश की वीर नारी हूँ। क्षत्रीय नारी हाथ में तलवार लेकर निर्भीकता से जिस ओर निकल पड़ती है, रास्ता अपने आप साफ हो जाता है। जो कोई भी उसके मार्ग में वाधक वनता है, वही मिट्टी में मिला दिया जाता है। समझे जवानदास। महारानीजी तनिक रमा की ओर मुड़कर उससे कहती हैं, वेटी रमा, शीघ्र वताओ संग्रामसिहजी कहां हैं?

रमा - पिताजी अपनी हवेली में ही विराजमान होंगे। इस समय वे कही भी बाहर नहीं जाते हैं।

महारानी - अच्छा तो तू मेरे साथ शीघ्र चल वेटी।

रमा - राजमाताजी लेकिन यहाँ कृष्णा को कौन देखेगा? उसे आजकल अकेली छोड़ना भी उचित नही है।

महारानी - तू जल्दी लौट आना वेटी। तव तक राधा कृष्णा की देखभाल बड़ी सावधानी से करेगी। तुम मेरे साथ शीघ्र आ जाओ। वहां से महारानी, रमा प्रस्थान करके शीघ्र चली जाती हैं। राधा वहां आ जाती है। राधा धरती पर पड़ी तलवार उठाकर जवानदास को देती है।

राधा - वस इसी हिम्मत के वल पर तुम मुझे मेवाड़ की महारानी बनाने की वात कह रहे थे। क्या यही तुम्हारी वीरता का नमूना है जो एक युवती की हत्या भी नहीं कर सके? राजाज्ञा को भी भंग किया है तुमने जवानदास।

जवानदास - कृष्णा तो कली से भी अधिक कोमल है। खरगोश जैसी निष्पाप आँखें, विनम्र व्यवहार को देखकर कठोरता और निर्दयता पराजित हो गई। कृष्णा की तीक्ष्ण आँखें किसी भी वीर के वज्र हृदय को भी पानी पानी कर देती हैं।

राधा - लेकिन नारी हृदय को पानी पानी कर देने की उसमें भी क्षमता नहीं है। जवानदासजी तुम्हारे अपूर्ण छोड़े हुए कार्य को अजीतसिंह की आज्ञा से मैं अवश्य पूरा करूँगी। इस समय इसी कार्यवश मैं यहाँ आई हूँ। मेरी बातें कुछ समझ में भी आ रही है अथवा नहीं ?

जवानदास – कैसे पूरा करोगी ?

राधा एक शीशी दूर से हाथ में लिये हुए बतलाती है - बस इससे।

जवानदास - यह क्या है ?

राधा - विष है। हाँ तुम अब जाओ। रात्रि का समय बहुत हो गया है। फिर दोनों अपने-अपने निवास पर चले जाते हैं।

---

# तेईस

चारों ओर पानी ही पानी दृष्टिगोचर हो रहा है। उदयपुर में पिछोला झील है। उसके बीच में एक सुन्दर महल बना हुआ है। इसे वैसे जगमन्दिर महल भी कहते हैं। कुछ लोग इसे पिछोलामहल भी पुकारते हैं। यह महाराजा भीमसिंह के आराम का विशेष स्थान था। व्यक्तिगत जीवन में राजकाज से अवकाश प्राप्त करके सूर्य महल से पश्चिम की ओर पिछोला झील के मध्य स्थित इस वैभव सम्पन्न राजमहल में सपरिवार महाराणा विराजमान है। सूर्यमहल तथा शीशमहल से लगभग एक मील की दूरी पर 'जलमहल' अपनी शोभा में अद्वितीय है।

महाराणा भीमसिंहजी के दीवान (महामंत्री) अजीतसिंह तथा संग्रामसिंह महाराणा से विशेष परामर्श हेतु इसी जलमहल जगमन्दिर में आये हुए हैं। महारानी भी महिलाओं के दल बल सहित इसी महल के एकान्त भाग में ठहरी हुई है। इसी महल में एक मन्दिर है जहाँ

भगवान कृष्ण की पूजा होती है। समय संध्या का है। चारों ओर का वातावरण शान्त है और प्रकृति में भी उदासीनता छाई हुई है। पक्षियों के झुण्ड उड़ उड़ कर पश्चिम की ओर जा रहे हैं। भुवन भास्कर दिन भर की निरन्तर यात्रा करते हुए मन्द गति से अस्ताचल की ओर बढ़ रहे हैं।

महल के बाहर के खुले भाग में महाराणा भीमसिंह गंभीर सोच-विचार करते हुए इधर-उधर बेचैनी से टहल रहे हैं। दूसरे दरवाजे से बाहर निकल कर अजीतसिंह महाराणा के समक्ष आते है। महाराणाजी की ओर तनिक झुक कर अजीतसिंह सम्मानसूचक नमस्कार करते है। महाराणा उनके अभिवादन का उत्तर देते हुए कहते हैं - अजीतसिंह।

अजीतसिंह - महाराणाजी।

महाराणा - अपनी तलवार उठाओ।

अजीतसिंह - क्या बात है महाराणाजी। आज आप बहुत परेशान दिखाई दे रहे है।

महाराणा - बस बस अब बहुत सह लिया - अब मेरा जीना भी व्यर्थ है। अपनी तलवार उठाओ और मेरी गर्दन धड़ से अलग कर दो।

अजीतसिंह - आप धीर वीर पुरुप है, आपकी स्थिति देकर बहुत दुख हो रहा है महाराणाजी। राजा के कठोर कर्तव्य को निबाहना बहुत कठिन कार्य है। राजमुकुट पहनना बहुत सरल है परन्तु उस पद की जिम्मेदारी जिसमें त्याग करना, मोह से दूर रहना, व्यक्तिगत रागद्वेप से दूर रहना आवश्यक कार्य हैं। एक सच्चे शासक को कठोर कर्तव्य की बलिवेदी पर अपने हृदय की कोमल भावनाओं को बलिदान करना होता है।

महाराणा - अजीतसिंह, मैं स्वयं बलि का बकरा बनने को प्रस्तुत हूँ। मैं नही रहूंगा तो मेवाड़ पर छाये युद्ध के बादल स्वत: ही दूर हो जायेंगे।

अजीतसिंह - बलिवेदी पर आपको स्वयं की बलि देने से कोई लाभ नहीं है। आवश्यकता पड़ने पर जैसे स्वर्गीय महाराणा लाखा ने एक एक करके अपने ग्यारह पुत्रों को वीर वेश में सजा कर स्वयं राजमाता और वीरांगनाओं ने उन सबको रणभूमि में भेजा था, सभी राजकुमार वीरतापूर्वक लड़ते हुए वीरगति को प्राप्त हो गये, उनकी आंखों में किसी ने आंसुओं की एक बूंद भी नहीं देखी थी। आज मेवाड़ की रक्षा के लिये,

हजारों राजपूतों का रक्तपात रोकने के लिये क्या आप अपनी एक मात्र पुत्री का वियोग सहन करने को तैयार नहीं है ? समय की अनुकूलता को देखते हुए कृष्णा के प्राण बलिवेदी पर चढ़ाना आवश्यक है। तभी मेवाड़ का संकट दूर हो सकता है।

जब अजीतसिंह और महाराणा में यह वार्तालाप हो रहा था, ठीक उसी समय सहसा नंगी तलवार लिये हुए संग्रामसिंह, महारानी और कुछ वीर सैनिकों का प्रवेश हुआ। चारों ओर से महाराणा तथा अजीतसिंह को घेर लिया गया।

अजीतसिंह के सामने तलवार लेकर जब सग्रामसिंह निकट आ गया, उस समय अजीतसिंह ने तनिक तीखी कर्कश आवाज में तैश के साथ कहा - संग्रामसिंह। तुम यहां कैसे आये ? क्या मार्ग में तुम्हें किसी ने भी नहीं रोका ? संग्रामसिंहजी ने वीरवाणी और पूर्ण शक्ति लगाकर उत्तर दिया, सच्चे क्षत्रीय वीर को रोकने की शक्ति किसमें है ? तुम्हारे विशेष चतुर पहरेदार भी अनन्त निद्रा में लीन हैं। तुम्हारे षड्यंत्र और अपवित्र माया-जाल का भण्डाफोड़ हो चुका है, अजीतसिंह।

महारानी ने तनिक आगे बढ़ते हुए एक पत्र हाथ में लेकर खोला और महाराणाजी की ओर क्रुद्ध दृष्टि से देखते हुए जोर से कहा - महाराणाजी क्या यह पत्र आपने ही लिखा है ? क्या ये हस्ताक्षर आपके ही हैं ? क्या यह राजचिन्ह की मोहर अपने हाथ से आपने लगाई है ? मुझे सच सच बताओ महाराणाजी।

महाराणा - महारानीजी ! आप मुझ पर विश्वास रखे। मैं सच ही कहूँगा। यह पत्र मुझे धोखा देकर बहुत दबाव देकर अजीतसिंह ने ही लिखवाया है। यह सब इनकी कृपा है। अजीतसिंह की तरफ संकेत करते हुए महाराणा ने जोर देते हुए कहा, अजीतसिंह ही चाहते है कि कृष्णा के बलिदान से मेवाड़ पर आया हुआ सैनिक संकट टल जायगा। फिर इनको निष्कंटक राज सुख भोगने का अच्छा अवसर मिल जायेगा। इनके मन में जो कलुषित विचार हैं, अमीरखां से मिलकर जो योजना बनाई है, इसमें तो पूरे राज-परिवार का जीवन ही सकट में है। ऐसा लगता है अजीत स्वय महाराणा बनना चाहते हैं ? और क्या क्या " कहूँ ?

व्यग्र होते हुए महाराणा ने महारानी से पूछा - हमारी प्राणों से प्यारी कृष्णा हमारी जीवन ज्योति कहाँ जगमगा रही है ?

संग्रामसिंह - हाँ महाराणाजी। हमारे पूर्वजों के पुण्य प्रताप से कृष्णा अभी भी जीवित है। उस कायर दासी पुत्र जवानदास ने तलवार लेकर कृष्णा के प्राण-हरण करने का प्रयास किया था परन्तु हमारी बेटी के निष्पाप हृदय, प्रकाशित पुण्य प्रतिभा तेज को अपनी पापी आँखों से देख भी नहीं सका। काँपने लगा। तलवार हाथ से छूट गई। मुझे तो महाराणाजी ऐसा आभास होता है कि बाप्पारावल तथा अन्य पूर्वजों की आत्माओं ने इस कलयुगी पापी जवानदास के हाथों की शक्ति को क्षीण कर दिया। इस प्रकार किसी दैवी शक्ति ने कृष्णा के प्राणों की रक्षा की है।

महारानी - संग्रामसिंह शक्तावतजी बिलकुल ठीक कहते हैं, अन्यथा इस कंस ने तो कृष्णा को यमलोक पठाने में कोई कसर बाकी नहीं रखी थी। इस पाप का, इस विश्वासघात का फल ईश्वर इन्हें अवश्य देगा।

अजीतसिंह - परिस्थिति इतनी सकटमय है, हालात इतने खराब हो गये हैं कि राजकुमारी के बलिदान अथवा राजकुमारी को सुरक्षित दूर देश भिजवाने के अतिरिक्त कोई भी दूसरा उपाय मेवाड़ की रक्षा का नहीं हो सकता है। अन्यथा प्राणों से प्यारा सम्पर्ण मेवाड़ हजारों लाशों की शमशान भूमि बन जायेगा।

संग्रामसिंह सपूर्ण जोश में क्रोध में चिल्लाते हुए कहने लगे-धिक्कार है अजीतसिंह! एक वीर चूण्डावत सरदार के मुँह से ऐसी कायरतापूर्ण भाषा सुनकर आश्चर्य हो रहा है। क्या तुम उन्ही वीर चूण्डा के वंशधर हो जिन्होंने अपने छोटे भाई की भलाई के लिये अपने मेवाड़ राज्य के उत्तराधिकार को लात मार दी थी और अपने छोटे भाई के प्राणों की रक्षा के लिये अपने दो पुत्रों को बलिवेदी पर चढाने में तनिक भी संकोच नहीं किया? क्या तुम उन फत्ता जयमल की सन्तान हो जिन्होंने महाराणा के चितौड़ छोड़ देने पर स्वयं सम्राट अकबर की विशाल सेना से भयंकर संघर्ष करते हुए हँसते हँसते अपने प्राणो की आहुति दे दी थी? पुरुष ही नहीं उनकी माता, बहिन और वीरांगनाओं ने जौहर की ज्वाला मे कूद कर अपने सतीत्व की रक्षा की। शत्रुओं को भी मुक्त कण्ठ से उनकी वीरता का प्रशंसा करनी पड़ी। अब तुम निर्लज्ज होकर अपने पूर्वजों की कीर्ति पताका को कृष्णाकुमारी के रक्त से रंगने का पुण्य कार्य करना चाहते हो। क्या तुम अपनी पुत्री को भी इसके साथ बलिदान कर सकते

हो ? बोलो अजीतसिंह ! मेवाड़ की पावन पुण्य भूमि पर तुम्हारे अपवित्र इरादे कभी भी फलीभूत नही होंगे - कभी नही होंगे - समझ ?

अजीतसिंह - शक्तावत सरदार ! चूण्डावतों के लिये तुमने जो सम्मान सूचक बातें स्वीकार की हैं, उसके लिये तुम्हें धन्यवाद देता हुँ । परन्तु मेरे भाई आज की स्थिति कुछ और है । हजारों राजपूतों की हत्या केवल एक राजकुमारी के बलिदान से रोकी जा सकती है । सिसोदिया वंश में अपनी सन्तान के प्रति इतना मोह, इतनी ममता इससे पहले मैंने कभी नहीं देखी जैसा दृश्य आज में देख रहा हूँ । व्यर्थ के रक्तपात से कोई लाभ नहीं है । भयंकर युद्ध और रक्तपात से बचने का इसके अतिरिक्त कोई भी कारगर मार्ग नही है । आप ठण्डे मस्तिष्क से विचार करके देख लीजिये ।

संग्रामसिंह - राजकुमारी कृष्णा हमारे प्यारे सम्पूर्ण मेवाड़ की, सूर्यवंशी सिसोदियों की सम्मान की प्रतीक है । उसकी हत्या सम्पूर्ण मेवाड़ के गौरव की हत्या होगी । हम सब यदि सगठित हों, वीरतापूर्वक एक मत से उठें तो ये हठी राठौरों और षड्यन्त्री डाकू सरदार अमीरखां की सेना हमारे वीरों की तलवारों, भालों और तीरों के सामने टिक नही सकेगी । वे मैदान छोड़कर भाग जाएंगे, इसमें मुझे कोई संदेह नहीं है । सम्पूर्ण शक्तावतों की संगठित शक्ति मेवाड़ की रक्षा के लिये कृष्णा सहित सिसोदिया परिवार की सुरक्षा के लिये बिना शर्त आपके साथ है । यदि इस धर्म युद्ध मे, इस गौरवरक्षा के संघर्ष में मान लो, हम शत्रुओं को पराजित नहीं कर कर सके तो कम से कम अपनी मान-रक्षा में अपने प्राणों को बलि-वेदी पर चढ़ा कर यश प्राप्त करेंगे । अपने वंश की कीर्ति को कलंकित नहीं होने देंगे ।

महारानी - अगर हमारे राजपूत पुरुषों की तलवारें शत्रु से लोहा लेने और शत्रुओं के मनोरथ को विफल करने में सफल नही होंगी, तो फिर हम वीरांगनाएं जौहर की ज्वाला में भस्म होकर अपने प्राण देने में तनिक भी संकोच नहीं करेंगी । केवल राजकुमारी कृष्णा ही नही, बल्कि राज-परिवार में जितनी भी महिलाएं हैं, हँसती-हँसती धधकती जौहर ज्वाला में कूद कर अपने प्राणों की आहुति दे देंगी । यह न समझो अजीतसिंह कि हमें राजकुमारी के जीवन का मोह है, हम अपनी ममता को अपनी गौरवशाली परम्परा, सतीत्व रक्षा पर न्यौछावर कर सकते हैं ।

संग्रामसिंह - अधिक से अधिक यह होगा कि हमें राजमहल का सुख छोड़ना होगा। सिसोदिया वंश की प्रत्येक पीढ़ी ने अपने जीवन में भयानक संघर्ष और उलट-फेर देखे है। चित्तौड़ में तीन बार साक्ता (शाका) हुआ है। तीन बार हजारों वीर बालाओं, कन्याओं और सौभाग्यवती महिलाओं ने, वीरांगनाओं ने अपने तन की आहुति से अग्नि यज्ञ को पवित्र किया है। हमारे पूर्वजों ने महाराणा प्रताप और महाराणा अमरसिंह के साथ जंगल में कई वर्षों तक जंगली फलों और कन्द मूल पर अपने जीवन के सैकड़ों वर्ष व्यतीत किये है। ककरीली पथरीली पहाड़ियों पर सोकर अपनी विपदा के दिन काटे पर अपने सम्मान को, अपनी मान-मर्यादा को नहीं छोड़ा। इसीलिये युग युग से अभी तक उनके यश की कीर्ति पताका उच्च गगन में फहरा रही है।

महारानी - हमारे छोटे-छोटे शिशुओं ने, बाल गोपाल ने घास की रोटी खाकर अपनी इज्जत को बनाये रखा था। उन दिनों मे भी ये ही चूण्डावत थे, उन्ही के साथ विपन्नावस्था में शक्तावत थे, सिसोदिया थे-पुरुष, महिलाएं, बच्चे सभी ने अपार दुःख दर्द सहते हुए, वीरतापूर्वक सकट में भी अपना सम्मान बनाये रखा। और आज उसी वंश के राजपूत बिना पुरुषार्थ प्रदर्शित किये मानवता विहीन शत्रु की नीचता और हठ के सामने सहर्ष अपना सिर झुकाने में संकोच नहीं कर रहे हैं।

अजीतसिंह - महारानीजी, आज भी चूण्डावतों का रक्त पानी नही हो गया है। लेकिन कोई भी समझदार व्यक्ति जानबूझ कर अपना सर्वनाश अपने हाथों से नहीं कराना चाहता है। जब संग्रामसिंहजी जयपुर नरेश की सहायता से चूण्डावतों का सर्वनाश करने पर कार्यरत हैं तब चूण्डावत लोग जोधपुर नरेश की सफलता मे साथ क्यों न दें? हमने अपना रक्त व्यर्थ में बहाने का ठेका नही लिया है। हम जो भी कर रहे हैं, वही ठीक है।

संग्रामसिंह - वाह भाई वाह अजीतसिंहजी! ईर्ष्या में अंधे मत बनो। संग्रामसिंह ने अपनी छाती पर पत्थर रखकर अपनी बपौती छोड़कर बियावान जंगल में अपना डेरा डाल रखा है। अपने अधिकारों की प्राप्ति के लिये कभी भी नीच उपायों का सहारा नही लिया। आपको यदि यह शंका है कि यह सब मेरे द्वारा आयोजित कोई षड्यंत्र है तो उठाओ अपनी तलवार और मेरी गर्दन को धड़ से अलग कर दो।

संग्रामसिंह धारा प्रवाह बोलते हुए अपना सिर नीचे झुका कर अजीतसिंह के सामने बैठ जाते हैं और फिर तलवार चलाने का बार-बार आग्रह करते हैं।

महारानी - क्या आपको अभी भी इनकी बातों का विश्वास नही होता अजीतसिंह ?

संग्रामसिंह - हां भाई, हां, उठाओ तलवार देखते क्या हो ? अपने भाई के रक्त से अपनी ईर्ष्या की प्यास बुझाओ, भोली बालिका के रक्त से मेवाड़ के यश को कलंकित मत करो-अजीतसिंह। यदि कृष्णा की हत्या की गई तो युग युग तक संसार के लोग मेवाड़ के राजपूतों के नाम पर थूकेंगे, घृणा करेंगे और कहेंगे कि वे कायर थे इसलिये राठौरों से युद्ध करने से डर गये और राजकुमारी कृष्णा को जान से मार डाला। हमारे कीर्ति चन्द्रमा पर पूर्ण ग्रहण लग चुका है। इसकी जिम्मेदारी अब वर्तमान शासन प्रवंधकों के हाथ मे है, वे ही इसके उत्तरदायी हैं।

अजीतसिंह सहसा निरुत्तर हो गये। उनका कठोर हृदय पिघल गया। उनकी आंखों में लज्जा के भाव उत्पन्न हो गये। स्वय आगे बढ-कर दोनों हाथ बढ़ाकर कहने लगे-उठो भाई संग्रामसिहजी, आपने मेरी आँखें खोल दी हैं। वास्तव में ईर्ष्या की आग ने मुझे अंधा कर दिया था। महाराणा साहब के पैरों में अजीतसिंह पूर्णतया झुक जाता है फिर कहता है मुझे क्षमा कीजिये महाराणाजी ! मैंने सचमुच ही आपको बहुत कष्ट दिया है। मैं इस पद के योग्य नहीं हूँ। मुझे मेरा हृदय धिक्कार रहा है मैं आपसे क्षमा चाहता हूँ। संग्रामसिंह का मार्ग बिलकुल ठीक है। महारानीजी भी मुझे क्षमा करे कि स्वार्थवश मेरे दिल की कमजोरी से मैंने कृष्णा की हत्या कराने की नीच बात सोची थी। अब ऐसा नही होगा। मेरी इस कलुषित धारणा, अनुचित कार्य और अपराध पर मुझे सख्त दण्ड देने की व्यवस्था करावें।

महाराणा - अजीतसिंहजी, आपके अपराध का दण्ड तो आपको वास्तव में दिया ही जायगा, अवश्य दिया जायगा। चिन्ता न करें।

अजीतसिंह - दीजिये महाराणाजी, अवश्य दीजिये। मेरे शरीर को चक्की में पिसवा देने की व्यवस्था करावें। मैं दण्ड का भागी हूं।

महाराणा भीमसिंह - आपके लिये बस उपयुक्त दण्ड यही है कि मेरे सा आज चूण्डावत और शक्तावत दोनों भाई गले मिल जाओ। भवि

कभी भी दोनों एक दूसरे को नीचा दिखाने का प्रयत्न नहीं करोगे। यही मेरी इच्छा है। बस यही भावना है, यही कामना है।

महाराणाजी के कहने पर दोनों भाई अजीतसिंह तथा संग्रामसिंह जी भरत और राम की तरह गले मिलते हैं। बहुत देर बाद अलग हो जाते हैं। उन्हें गले मिलते हुए देखकर महाराणा, महारानी और उपस्थित लोगों को वास्तव में हार्दिक आनन्द प्राप्त होता है। महाराणाजी कहते है, बहुत दिनों से मेवाड़ की दोनों भुजाएं एक दूसरे को काटने के प्रयत्न में थीं, इसलिये मेवाड़ विकलांग हो गया था, असहाय और शक्तिहीन हो गया था। शत्रु मेवाड़ को अपाहिज और निर्जीव समझकर लालच भरी निगाहें डाल रहे थे। अब मुझे किसी बात का भय नहीं है। अब हम राठौर, अमीरखां, मराठों और जयपुर नरेश-चारों से टक्कर लेने में सक्षम है। हमारी एकता से वे अवश्य ही सोच समझ कर निर्णायक कदम उठावेंगे।

संग्रामसिंह, वाह भाई आनन्द आ गया। आज विधाता ने बिछुड़े हुए भाइयों को पुनः मिला दिया है, इसी में हमारी जाति का, धर्म का, कर्त्तव्य का, हमारी जनता का कल्याण निहित है।

संग्रामसिंह ने कहा, अच्छा अब हम सब लोग महलों में चलें और भोजन के पश्चात् अब हम शत्रु से किस प्रकार युद्ध लड़ने की व्यवस्था करें, इस पर विचार विमर्श करेंगे। योजना बनायेंगे और उसे कारगर रूप में सफलता पूर्वक क्रियान्वित करके हमें विजय प्राप्त करने का भी पूरा प्रयत्न करना है।

इस प्रकार मेवाड़ के भाग्य-विधाता जलमहल से नाव में बैठकर पुनः सूर्यमहल में पिछोला के तट पर आ जाते है। सामूहिक भोजन के पश्चात् प्रमुख सेनाधिकारी, महाराणा, चूण्डावत सरदार अजीतसिंह, दौलतसिंह, संग्रामसिंह महारानी आदि ने युद्ध करने, मोर्चाबन्दी करने की योजना पर विचार विमर्श किया और विश्राम करने के लिये मध्य रात्रि में अपने-अपने निवास स्थान पर चले गये।

——

# चोबीस

सहेलियों की वाड़ी के सामने एक विशाल मैदान में सैंकड़ों शिविर लगे हुए है। उन शिविरों में जोधपुर की सेना के उच्च कोटि के अधिकारीगण ठहरे हुए हैं। एक बड़ा शानदार तम्बू है, जिसमें जोधपुर नरेश मानसिंह राठौर ठहरे हुए हैं। उनकी रक्षा के लिये चारों तरफ सैनिक हथियारों सहित पहरा दे रहे हैं। हर प्रकार की साधन-सुविधाएं सेना के लिये प्राप्त हैं। एक बहुत बड़ी सेना उदयपुर और एकलिंगजी के बीच ठहरी हुई है, जिसका संपर्क-सूत्र महाराजा मानसिंह के शिविर तथा प्रधान सेनापति के मुख्यालय से सीधा संबंधित है। संध्या का समय है। चारों ओर मशालों और दीपकों का प्रबंध है। कई स्थानों पर प्रकाश के लिये बड़े लैम्पों का प्रबंध है। संध्या समय सैनिक अपने खेल-कूद तथा सैनिक प्रशिक्षण एवं अभ्यास में संलग्न हैं।

महाराजा मानसिंह के शिविर के बाहर एक बड़ा मैदान है। उस मैदान में महाराजा मानसिहजी और मेवाड़ के वीरवर दौलतसिहजी धीरे-धीरे घूमते हुए इधर-उधर दिखाई दे रहे हैं। दौलतसिहजी ने महाराजा की ओर देखकर कहा, महाराजा मैं आपको शिविर के बाहर इसलिये लेकर आ गया हूँ कि मुझे आपसे एकान्त में कुछ आवश्यक बातचीत करना है। कुछ बातों पर आपसे विचार-विमर्श करना है, वह आपके और मेरे बीच की गोपनीय बातें हैं। मैं अमीरखां के सामने इन बातों को करना उचित नही समझता हूँ। शिविर के अन्दर का हाल यह है कि अमीरखा आपको अकेला छोड़ता ही नही है। अच्छा हुआ, अमीरखां कहीं दूर घूमने चले गये हैं। उचित समय देखकर ही मैने आपको यहां आने का कष्ट दिया। आशा है महाराज इस कष्ट के लिये मुझे क्षमा करने की अनुकंपा करेंगे।

महाराजा मानसिंह - इसमें कष्ट की कोई बात नही। आप वयोवृद्ध हैं। दौलतसिहजी, देखिये कितनी सुहावनी सुन्दर चांदनी रात है। यहाँ बाग बगीचे, सुन्दर सागर की पाल पर घूमने में बहुत आनन्द आता है। उदयपुर तो बिलकुल झीलों को नगरी है। सुना है, कश्मीर के प्राकृतिक दृश्य

मनमोहक हैं, विपुल सौन्दर्य राशि वहां बिखरी हुई है किन्तु उदयपुर वास्तव में राजस्थान का कश्मीर है। वसन्त ऋतु का सुन्दर वातावरण और भी चित्ताकर्षक है, मन-भावन है । शीतल मन्द सुगन्ध वायु मन को प्रफुल्लित कर रही है, दौलतसिंहजी।

दौलतसिंह - इस समय आप और मैं दो विरोधी दलों में हैं फिर भी आपको मेरे साथ बाहर आने में कोई संकोच नहीं हुआ। आपने मुझ पर इतना विश्वास कैसे कर लिया ? आश्चर्य है।

मानसिंह - दौलतसिंहजी मुझे आपके विषय में पूर्ण ज्ञान है। मेवाड़ के श्रेष्ठ वीरों मे हैं आप। युद्धभूमि में आप दुश्मन से यमराज की तरह लड़ते है। किसी से डरने या प्रभावित होने का कोई प्रश्न ही नही है। आपका हृदय जल के समान स्वच्छ एवं निष्पाप है। धोखा देना आपके स्वभाव में ही नहीं है। छल-कपट और षड्यंत्रों से आप कोसों दूर है। छल विद्या तो आपने बिल्कुल सीखी ही नहीं है।

दौलतसिंह - महाराज ! लेकिन आपने तो अवश्य सीखी है। आप तो षड्यंत्रों के श्रेष्ठ खिलाड़ी हैं।

मानसिंह कुछ मुस्कराते हुए कहने लगे, हाँ! यह सब मुगल दरबार का उपहार है। या यों कहिये पुरस्कार स्वरूप यह विद्या मुझे प्राप्त हुई है। दौलतसिंहजी ! जोधपुर और अम्बेर राजवंशों को दिल्ली की राजनीति मे सम्मिलित होना पड़ता है, अतः वहाँ का कुछ प्रभाव तो हमारे व्यवहार में आ ही जाता है।

दौलतसिंह - दिल्ली से जो राजनीतिक छल विद्या जोधपुर आई है, (मुस्कराते हुए कहते है) आपने उसका प्रयोग मेरे विरुद्ध अभी तक तो नहीं किया है। क्या अभी आप छल विद्या में कच्चे है ?

मानसिंह - छलविद्या में कच्चा होता तो मैं जोधपुर का नरेश कैसे बन सकता था ? मैं आपके प्रभावशाली व्यक्तित्व से प्रभावित हो गया हूँ। आपका अनादर करना मेरे लिये संभव नहीं है। जिस महान् आत्मा में किसी के प्रति अहित की भावना नही है, जो दूसरों के दुखो को भी अपना दुख मान लेते है, जो उचित व न्याय को ही अपना आधार मानते हैं, ऐसे भोले शिवशंकर से भला कौन ऐसा होगा, जो छल-कपट करने की

हिम्मत भी करे ? आप सच मानें कि मैंने छल-कपट एवं षड्यंत्रों के बल पर ही पूरे मारवाड़ व विरोधी सरदारों और जागीरदारों का विनाश सफलतापूर्वक किया है ।

दौलतसिंह - लेकिन महाराज । मेरी धारणा है, उसी राजा का शासन दीर्घकाल तक सुचारू रूप से चल सकता है जो अपने साथियों तथा सरदारों का मन निर्मल चरित्र, पवित्रता और जीवन की सच्चाई से जीतने का प्रत्यक्ष कार्य करे । यदि हम उनको सुधारने के स्थान पर उनका नाश करने का विचार करेंगे तो राज्य की शक्ति नष्ट हो जायेगी और अन्त में उसका प्रभाव राज्य की सुरक्षा पर पड़ता ही है, इसमें सन्देह नहीं है ।

मानसिंह - जब गले का हार ही फांसी का फन्दा बन जाये तब तो मनुष्य को उचित कार्यवाही करनी ही पड़ती है । कहावत है, मरता क्या न करता !

दौलतसिंह - मेरा विचार तो यह है कि हमें शंकर के समान शक्ति का संचय करना चाहिये जिनके शरीर पर विषधर सर्प भी शान्ति से इधर उधर फिरते रहते हैं । शिवशंकर के शरीर पर उन विषधरों के विष का कोई प्रभाव नहीं पड़ता । लेकिन इस समय मैं इन बातों पर वाद-विवाद करने के लिये आपके पास नहीं आया हूँ । मुझे तो आपसे राजकुमारी कृष्णा के विवाह के विषय में कुछ चर्चा करनी है । मुझे आपसे पूर्ण आशा है कि आप शान्त चित रहकर गंभीरता से विचार करेंगे क्योंकि उत्तेजना व क्रोध में मनुष्य अपना विवेक खो देता है ।

मानसिंह - (हँसते हुए) इसीलिये आप मुझे खुले हुए उद्यान में ले आये हैं, जहाँ ठण्डी हवा और सुगंधमय वातावरण में क्रोध स्वतः ही शान्त हो जाता है ।

दौलतसिंह - महाराज की समझदारी को मैं सराहना करता हूं । अब आप अपने आपको हमारी स्थिति में रखकर कृपया देखिये, [illegible] क्षत्रिय कन्या की सगाई किसी एक जगह हो जाने के पश्चात् और फिर उसकी बारात भी आ जाने पर दूसरे स्थान पर उसका विवाह कर देना संभव है ? क्या ऐसा कोई अन्य उदाहरण राजपूतों के इतिहास में मिल सकता है ?

मानसिंह - जान-बूझ कर मेरा अपमान करने के लिये ही [illegible]

का टीका जयपुर भेजा गया था। इसी जोम में आकर जयपुर नरेश जगत-सिंह ने जोधपुर की सेना पर धोखे से आक्रमण करके भारी हानि पहुंचाई है। मेरे भतीजे अमरसिंह को भी उन्हीं ने निर्दयतापूर्वक मरवाया है। इसलिये अब जयपुर नरेश से बदला चुकाने के अतिरिक्त और कोई चारा नहीं है। यह विवाह अब मेरे लिये प्रतिष्ठा का विषय बन गया है। आप ही बताइये मैं और क्या कर सकता हूं ?

दौलतसिंह - हम राजपूत लोग आपसी लड़ाई, ईर्ष्या, द्वेष की अग्नि में जल रहे है। जन-धन का नाश बड़े पैमाने पर हो रहा है। हमने विवेक को गिरवी रख दिया है। हम अपनी जातीय शक्ति को व्यर्थ में नष्ट कर रहे हैं। वीर पुरुष वीरों का सम्मान करते हैं। सिसोदियों ने सदैव ही राठोरों का सम्मान किया है। महाराणा लाखा से लेकर अब तक राठौड़ों का सम्मान करना हमारी परम्परा रही है। यह बात दूसरी है कि राजकुमारी कृष्णा का टीका महाराज भीमसिंहजी जोधपुर नरेश के लिये भेजा था और उनकी मृत्यु के उपरान्त ही जयपुर नरेश को उपयुक्त समझ कर टीका जयपुर विधिपूर्वक भेजा गया, जिसे उन्होंने स्वीकार कर लिया। तब आपने तत्काल कोई विरोध नहीं किया। जयपुर नरेश ने जब राजकुमारी के लिये सावन की तीज पर पहली बार सिंजारा भेजा, तब राठौड़, अमीरखां और सिंधिया के सैनिकों ने उसे लूट लिया। क्या यह राजपूत कन्या और जयपुर नरेश का अपमान नहीं था ? हमारे लिये जयपुर नरेश भी किसी भी स्थिति में जोधपुर नरेश से कम नहीं हैं, यह बात स्वयंसिद्ध है।

मानसिंह - ऐसा तो आप समझते है व्यक्तिगत रूप से किन्तु महाराणाजी और जयपुर नरेश तो ऐसा नहीं समझते हैं। अब तो राठौड़ों की तलवारें ही फैसला करेंगी कि राजकुमारी कृष्णा के योग्य वर कौन हो सकता है ?

दौलतसिंह - एक राजकुमारी का साधारण विवाह ही राजस्थान के राज-वंशों के लिये इतने महत्व का प्रश्न नहीं है। राजपुताने मे व्याप्त अनेक ज्वलन्त प्रश्नों पर व्यक्तिगत तथा सामूहिक रूप में संगठित रूप से गंभीरता-पूर्वक विचार करके, निर्णय लेकर उपयुक्त कार्यवाही सही समय पर करना चाहिये - अन्यथा केवल मेवाड़ या मारवाड़ ही नही, सम्पूर्ण राज-स्थान विदेशियों की बेड़ियों में जकड़ जायेगा। राजपूतों का स्वत्व नष्ट हो जायगा। उनके पूर्वजों के उज्ज्वल नाम को पानी देने वाला भी नहीं

बचेगा। अतः छोटी-छोटी बातों में उलझ कर अपनी सैनिक शक्ति, धन, जन, व्यापार, व्यवसाय आदि को नष्ट करना - समझदार शासकों के लिये अनुपयुक्त है, चुनौती है।

मानसिंह - श्रीमान्, आपके विचार ठीक है। इस बात को कुछ और भी स्पष्ट करने का श्रम करें।

दौलतसिंह - बात केवल राजस्थान की नही है। संपूर्ण भारतवर्ष की स्वतंत्रता से मेरा अभिप्राय है। मान लीजिये - आज आप अमीरखां और सिंधिया की सहायता से जयपुर और उदयपुर पर विजय प्राप्त कर लेंगे, किन्तु क्या धन का लोभी अमीर खां दीर्घकाल तक बिना धन प्राप्त किये भी आपका सहायक बना रहेगा ? मुझे तो यहां तक समाचार मालूम है कि अमीर खां ने आपसे और सवाईसिंह दोनों से चालीस लाख रुपये लिये, फिर भी अमरसिंह की निर्दयतापूर्वक उसने हत्या की है, जिसे आपकी आत्मा भी अवश्य स्वीकार करेगी, इसमें मुझे तनिक भी संदेह नही है। मैं तो ऐसा मानता हूँ कि सिंधिया और अमीरखां राजपूताने के लिये राहू केतु हैं, शनीचर है, हमारे जानी दुश्मन हैं, जो समस्त राजपूतों की शक्ति को, मान-मर्यादा को नष्ट करके अपना राज्य स्थापित करना चाहते हैं। ये भारतीय संस्कृति के बैरी है। ये हमारी गौरवमयी परम्पराओं के प्रकाश को उलूक की तरह देखते है। हो सकता है, यह पहले आपको जन-धन से चूसकर निस्सहाय बनाकर फिर जयपुर नरेश का पल्ला पकड़ेंगे - फिर उन्हें कमजोर करके मेवाड़ पर आक्रमण करेंगे। इस प्रकार यदि हममें फूट रही, हम व्यक्तिगत ईर्ष्या-द्वेष की भट्टी में जलकर बारी-बारी से नष्ट होते रहे तो एक दिन सम्पूर्ण राजपूत जाति का पृथ्वी पर से नामो-निशान मिट जायगा।

मानसिंह - कुछ बातें आपकी सत्य है किन्तु आपको यह विदित है कि जयपुर नरेश कछवाहे राजपूत भी हम राठौड़ों का सर्वनाश करने पर उतारू हैं।

दौलतसिंह - इस विषय में मेरा विनम्र सुझाव है कि पहले आप अपना मन साफ कर लीजिये। आपको एक प्रत्यक्ष उदाहरण प्रस्तुत करता हूँ कि जब जयपुर और जोधपुर की सामूहिक सैन्य शक्ति ने मराठों के सरदार सिंधिया का मुकाबला किया था तो मराठों को मार खानी पड़ी

'थी। वे राजस्थान के पूर्व दक्षिण में भागकर चले गये थे किन्तु पुनः विभक्त हो जाने पर हमें लाखों रुपये प्रति वर्ष इनको व्यर्थ में देना पड़ता है। यही स्थिति अमीरखां की भी है। हमारी आपसी फूट का लाभ उठाकर ही ये हमारे शोषक बने हुए हैं। मेरी मान्यता है कि पहले आप स्वय कृष्णाकुमारी से विवाह के इच्छुक नही थे लेकिन सिंधिया और अमीरखां के कहने में आकर आपने विवाह का निश्चय किया। सिंधिया स्वयं भी कृष्णाकुमारी से विवाह का इच्छुक था किन्तु जब उसे महाराणा भीमसिंह ने मुंह-तोड़ उत्तर दिया और सोलह लाख रुपये की थैली चौथ या कि उत्कोच के रूप में उसको नहीं दी गई, तब वह जोधपुर गया और विवाह के बहाने उत्तेजित करके लाखों रुपयो की राशि आपसे भी प्राप्त कर ली और फिर जयपुर नरेश से सघर्ष की स्थिति उत्पन्न होने पर वह आपसे विश्वासघात करके मैदान में से हट गया। इसी तरह अमीरखां को धन का लालच देकर आपके सहायक जयपुर नरेश ने तोड़ लिया। अब आप स्वय देख लीजिये कि इस प्रकार हम राजपूतों की स्थिति कितनी हीन हो गई है कि हम विधर्मियों का, विदेशियों का तो विश्वास करते हैं और एक भाई दूसरे राजपूत भाई का गला काटने को तत्पर है।

मानसिंह – क्या करें दौलतसिंहजी, आजकल वास्तव में राजपूताने के नक्षत्र ठीक नही है। जो हमारे भाग्य में लिखा है वह अवश्य पूरा होगा। विधि ने जो लेख भाग्य लिपि लिख दिये हैं, वे अवश्य पूरे होंगे।

दौलतसिंह-महाराज! कर्मवीर, बुद्धिमान और संघर्षशील वीर अपनी कर्मठता से भाग्य के नक्षत्रों की गति को, उनकी दिशा को बदल सकते है। केवल भाग्य का भरोसा करना अकर्मण्यता है। यह तो आप निश्चयपूर्वक सत्य समझिये कि यदि प्रत्येक राज्य अपनी डेढ़ चावल की खिचड़ी अलग-अलग पकाता रहा तो हमारे राज्य दो-तीन पीढ़ी से अधिक नहीं चल-सकेंगे। पृथ्वी के जिन विस्तृत भूभागों की सैकड़ों वर्षों से हमारे पूर्वज अपने रक्त से सींचते आये हैं, जिनकी वीरता और बलिदान की साक्षी प्रत्येक टेकरी में है, वे सदा सर्वदा के लिये हमारे अधिकार से निकल जाएगी। पृथ्वी पर हमारा आधिपत्य भविष्य मे नष्ट हो जाएगा, इसमें सन्देह नही है।

मानसिंह - दौलतसिंहजी। क्या आपको विश्वास है कि हम राजस्थान के राजा लोग आपस के झगड़े छोड़कर एक सूत्र में कभी सगठित हो सकते

हैं ? मुझे तो यह कार्य निकट भविष्य में असंभव लगता है क्योंकि कोई भी शासक अपना स्वार्थ, अपनी आन, अपनी जिद छोड़ने को तैयार नही है। प्रत्येक व्यक्ति अपने अभिमान में चूर अपने को तीसमारखां समझता है।

दौलतसिंह - क्यों नहीं ? यदि प्रत्येक व्यक्ति अपनी सूझ-बूझ से अपने कर्तव्य का पालन करे, अपनी त्रुटियों का मूल्यांकन स्वयं करे, दूसरे की त्रुटियों का अनुसरण नहीं करे, सद्गुणों को अपनावे तो वहुत कुछ कार्य अपने आप ही सुधर जाएँगे। हमें हित और निज मान से देश के मान को ऊंचा स्थान देना चाहिये। स्वयं त्याग और उदारता का परिचय देना चाहिये। राजस्थान में हजारों वीरों को व्यर्थ के रक्तपात से वचाने का एक मात्र हल यह है कि आप राजकुमारी कृष्णा के विवाह का बन्धन स्वयं अपने हाथ से जयपुर नरेश जगतसिंह के साथ बांधने का पावन कार्य करें, तो आपका नाम राजस्थान के इतिहास में एक त्यागी वीर, उदार, महामना के रूप में अमर हो जाएगा।

मानसिंह - दौलतसिंहजी, आप तो मेरी अत्यन्त कठिन एवं कठोर परीक्षा ले रहे हैं। मेरे लिये यह कार्य तो अग्नि परीक्षा से भी कठिन है।

दौलतसिंह - मानसिंहजी ! यह हमारे देश के लिये संक्रमण काल है। परिवर्तन के लिये अन्त: सलिला प्रवाहित है। प्रत्येक राजा अपने लाभ की दृष्टि से राष्ट्र व्यापी प्रश्नों पर विचार करता है। फूट ने अपना शत-प्रतिशत विषमय प्रभाव लोगों की नस-नस में भर दिया है। एक राज्य दूसरे राज्य को प्रत्यक्ष हानि पहुंचाकर उसे हड़पने अथवा नष्ट करने के प्रयत्नों में संलग्न है। हमारा देश पूर्णतया गृह-युद्ध के कगार पर खड़ा है। यदि विदेशी आक्रमण हो जाय तो सभी भारतवासी उसका मुकावला करने को उद्यत नहीं हैं। इतिहास के पृष्ठो को यदि ध्यान से पढ़ें तो मालूम होगा जब तक भारतीय केन्द्रीय सत्ता प्रबल, सगठित रही तब तक विदेशियों की हिम्मत भी नहीं होती थी कि भारत पर आक्रमण करें। भारत में जिस समय चन्द्रगुप्त मौर्य, अशोक, विक्रमादित्य का शासन था, विदेशी आक्रामक इधर आने का साहस भी नही करते थे। किन्तु सम्राट हर्ष के पश्चात् हमारी आपसी फूट का लाभ उठाकर मुस्लिम लुटेरों ने समृद्ध भारत में लूट-मार करके, तलवार के वल पर इस्लाम धर्म का

प्रचार प्रसार किया और धीरे धीरे अपनी सल्तनत कायम की। जब तक हमारी आन्तरिक एकता संगठित रही, तब तक किसी विदेशी का साहस नहीं हुआ कि भारत पर आक्रमण करे तथा इधर आँख उठाकर भी देखे।

मानसिंह - आपका कथन बिलकुल सत्य है।

दौलतसिंह - हाँ महाराज ! जब सम्राट पृथ्वीराज और जयचन्द में फूट पड़ गई, उस समय देश अनेक छोटे-छोटे राज्यों में विभाजित हो गया। केन्द्रीय सत्ता अत्यन्त क्षीण हो गई। फूट की बेल विषवृक्ष बनकर फैल गई। प्रत्येक राज्य व्यक्तिगत लाभ की स्पर्धा में पड़ गया। उस समय विदेशियों ने हमारी कमजोरी का लाभ उठाया। गुलाम-वंशीय तुगलकों की शक्ति भी जब कमजोर पड़ गई, पठान लोग भी जब विभाजित हो गए तब बाबर ने भारत पर आक्रमण किया। तोपखाने की मदद से उसने सफलता प्राप्त की। राजपूतों ने अपने पुराने तीर कमान, तलवार, कटार, भाला बर्छी के अतिरिक्त नये हथियार न तो बनाये, न उनको कही से खरीदा या चलाना ही सीखा। आज हम एक चौराहे पर खड़े हैं। संगठन का अभाव है। क्षुद्र स्वार्थों की आंधी में हम राष्ट्रीय उद्देश्यों को भूल गये हैं।

मानसिंह - इस स्थिति के लिये केवल राजपूत ही उत्तरदायी नही है। आजकल तो भारत में मराठे हैं, पठान हैं, मुसलमान हैं और अंग्रेज अपनी व्यापारिक रीति नीति के साथ भारतवासियों को आपस में लड़ाकर, कमजोर बनाकर संपूर्ण भारत में अपना राज्य स्थापित करने का प्रयत्न कर रहे हैं। उन्हें पूर्वी तथा दक्षिणी भारत में पर्याप्त सफलता भी मिली है। कुछ भारतवासी ही गद्दारी करके उनका साथ दे रहे है।

दौलतसिंह - वास्तव में यही सच्ची बात है। जब तक भारतवासी अपनी स्वतंत्रता के अधिकारों के प्रति सचेत एवं सावधान नहीं रहेंगे, तब तक भारतवर्ष का भाग्योदय कभी नही हो सकता है। मराठों के उत्कर्ष के समय भारतवासियों को जो आशा उत्पन्न हुई थी, उनकी आपसी फूट, लूट-खसोट, आर्थिक शोषण के कारण अब वह धूमिल हो गई है। वीरवर शिवाजी ने जिस अखिल भारतीय राष्ट्रीय उत्थान की भावना से स्वाधीनता यज्ञ आरम्भ किया था, उसी राष्ट्रीय भावना के महत्व को उनके वंशज भूल गये। उनकी शक्ति, उनकी तलवार हिन्दुओं का संहार करने
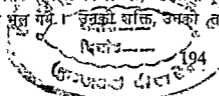
के लिए अपने भाइयों पर उठने लग गई, यह कितने दुर्भाग्य की बात है ?

मानसिंह - जब चारों ओर का वातावरण इतना दूषित हो रहा हो, राष्ट्रीय चेतना का ह्रास ही निरन्तर गतिमान हो तो ऐसी स्थिति में हम राठौर लोग क्या कर सकते है ?

दौलतसिंह - हम सबसे पहले आपसी ईर्ष्या द्वेष, लड़ाई झगड़े और संघर्ष को समाप्त करें, स्वार्थी लोगों के भड़काने में नही आवे । अपनी सब प्रकार की सामाजिक, आर्थिक, सैनिक शक्तियों की श्रीवृद्धि करें, उसमें प्रवीणता लाने का भरसक प्रयत्न करें । हम अपने अपने राज्य की रक्षा के योग्य बनें । फिर केन्द्रीय शक्ति के रूप में संगठित होने का सफल प्रयत्न करें । सब संगठित होकर एक आवाज में शेर के समान दहाड कर जयघोष करें तो सफलता हमारे चरण चूमेगी । इस दुनिया में कमजोर का कोई साथी नहीं होता है ।

मानसिंह - बहुत अच्छा दौलतसिंहजी । आपकी बातों, युक्तियों, तर्क में अजेय शक्ति है । मैं आपकी बातों से सहमत हूँ । आपके ऊचे आदर्शो एवं विचारों के अनुसार राज्यहित में, राष्ट्रहित में समाज और क्षत्रिय जाति के हित में अधिकाधिक योगदान करने की प्रतिज्ञा करता हूँ । आपका परामर्श वास्तव में हमारे लिये शुभ एवं कल्याणकारी है ।

दौलतसिंह - महाराज, आपकी बाते सुनकर मुझे भी अपार आनन्द प्राप्त हुआ । मेरा मनोरथ सफल हो गया है। आपका हृदय वास्तव में पवित्र है । अच्छे वातावरण में आप बहुत अच्छे बन जाते है । ईश्वर आपको सद्बुद्धि, सद्ज्ञान एवं दीर्घायु प्रदान करे । आप वीरवर दुर्गादास राठौर की शानदार परम्परा के प्रतीक है । अब हम यहां से चलकर जयपुर नरेश महाराजा जगतसिंह से मिलना चाहते है । हम जयपुर नरेश को लेकर मेवाड़ के राजमहलों में चलेंगे ताकि हम व्यर्थ के रक्तपात से बचकर कुछ सन्तोषजनक परिणाम निकालने में सफल हो सकें । यदि समझदारी और विवेक से काम करेंगे तो मेवाड़ पर अथवा संपूर्ण राजस्थान के आकाश में प्रच्छन्न दुश्चिताओं के बादल दूर हो सकते हैं । हजारों निरपराध लोगों के खून की होली खेलने से हम सरलतापूर्वक बच सकते हैं । हमारा भविष्य उज्ज्वल होगा, इसमें सन्देह नही है महाराज । भारत माता पुनः अपने गौरव के शिखर पर आसीन होगी ।

दौलतसिंह जी की बात समाप्त होते होते ही सहसा अमीरखां का प्रवेश हुआ। अमीरखां ने महाराजा मानसिंह तथा चूण्डावत सरदार दौलतसिंहजी को बातें करते हुए देखकर कुछ आश्चर्य प्रकट किया। फिर कहने लगे - महाराजा साहब आप यहां है ? मैं तो बहुत देर से आपको आपके शिविर में तथा आसपास तलाश कर रहा था। ओ हो, यहां तो दौलतसिंहजी भी मौजूद हैं।

दौलतसिंह - हाँ खानसाहब, मैं भी महाराजा साहब से ऐसे ही मिलने आ गया था। अच्छा हुआ, पठान सरदार अमीरखां के भी दर्शन हो गये। आपसे मिलने का सौभाग्य मिला, इसके लिये मैं आपका आभारी हूं।

अमीरखां - अच्छा, तो आप मुझे बनाते हैं ? क्या आप सच्चे दिल से मुझसे मिलने पर खुशी जाहिर करते हैं।

दौलतसिंह - अमीरखां जी। मैं सच्चे दिल से आपका आदर करता हू। आपको बनाने का प्रश्न ही पैदा नहीं होता। मुझे तो आपसे विस्तार-पूर्वक बहुत सी बातें करनी हैं। आपके पास एक बहुत बड़ी पूर्ण प्रशिक्षित सेना है, विध्वसंकारी तोपखाना है, बन्दूकें है, नये पुराने प्रकार के हथियारों को चलाने में आपके सैनिक प्रशिक्षित हैं। आपके पास वीरता, बुद्धि चतुराई और अदम्य साहस है, जिसका सदुपयोग भारतवर्ष की रक्षा के लिये हमें करना चाहिये। हम आपसी छोटी छोटी लड़ाइयों में अपनी शक्ति को नष्ट करके महान राष्ट्रीय एकता एवं संगठन को कमजोर बना रहे हैं। यह कोई बुद्धिमानी की बात नही है।। हमें मिल जुलकर विदेशियों का मुकाबला करना चाहिये अमीरखांजी।

अमीरखां - क्या आप इस देश पर हमारा स्वत्व, हमारा अधिकार मानने को तैयार हैं।

दौलतसिंह - क्यों नही ? हमारी संस्कृति वसुधैव कुटुम्बकम् का सन्देश देती है। पृथ्वी पर रहने वाले सभी मनुष्यों को परस्पर भाई भाई की तरह सभ्यता, एकता को स्थापित करते हुए रहना चाहिये। हम सब सुखपूर्वक जीवें और दूसरों को भी जीने दें यह हमारा ध्येय है। यदि आप भी भारत भूमि को अपनी मातृभूमि, पितृभूमि, धर्म भूमि, कर्म भूमि, मानकर नेकनियती से, मिलनसारी से चलें तो हमें कोई आपत्ति नही है अमीरखांजी। आज भारत में लाखो मुसलमान है, अब यह सम्भव और

व्यावहारिक दिखाई नहीं देता कि उन्हें पुनः मक्का मदीना या अरब राज्यों में भिजवा दिया जाय। जब हिन्दू मुसलमानों को भारत में रहना ही है, तो फिर आपस में क्यों कट कट करके मरें ? क्यों दुश्मनी रखे, और क्यों एक दूसरे का नाश करने का विचार रखे ? अगर हम सब भारतवासी मिलजुल कर प्रेम, सहानुभूति सह-अस्तित्व के साथ रहे तो कोई भी विदेशी शक्ति हमें परास्त नहीं कर सकती। मेल-जोल से रहने सहने में, एक दूसरे के धर्म, भाषा, संस्कृति तथा धर्म का आदर करने में, एक दूसरे से ज्ञान-विज्ञान सीखने में ही हमारी और देश की उन्नति निर्भर है। अब तो अमीरखां जी आपको विश्वास हो गया होगा कि हमारे विचार कैसे हैं ? हमारी धारणा एवं मान्यता क्या है ?

अमीरखां - दौलतसिंहजी ! मुझे भी आपसे मिलकर दिली खुशी हुई है। आप वास्तव में मेवाड़ के बहुत ही समझदार लोगों में से है। आप एक कीमती रत्न हैं। आपके विचार बेहतरीन हैं, लेकिन हिन्दुस्तान के सभी रहने वाले हमारे बारे में ऐसा सोचें तो सबके लिये ये बातें फायदेमन्द साबित होंगी।

दौलतसिंह - हमें संकुचित मनोवृत्ति छोड़कर देश के हित में विस्तृत दृष्टि से सोचना चाहिये। हम सब भाई की तरह एक दूसरे की सहायता करे। भारतदेश को अपना स्वयं का ही घर समझें। भारत का मान बढ़ाये, यही मेरी आपसे प्रार्थना है। इस समय तो मेरे पास समय का अभाव है। मैं कल फिर आपसे मुलाकात करूँगा। आप निश्चिंत रहिये। ईश्वर आपको सद्बुद्धि प्रदान करे। अच्छा अमीरखांजी।

अमीरखां की ओर से ध्यान हटाकर दौलतसिंहजी महाराज मानसिंह की ओर उन्मुख होते है। उन्हें मार्गदर्शन करते हुए शिविर में चलने का निवेदन करते है। दोनों वहां से शिविर की ओर चले जाते हैं। इन दोनों को मैत्रीपूर्ण ढंग से बात करते हुए अमीरखां बड़े आश्चर्य की दृष्टि से देखता ही रह जाता है।

सद्भाव बनाने व युद्ध के बादलों को तितर-बितर करने के प्रयत्न स्वरूप विरोधियों के शिविर में जाकर साहस-पूर्वक मेवाड़ के वीर दौलतसिंह का महाराज मानसिंह से विचार-विमर्श करना राजस्थान व भारत के इतिहास में चिरस्मरणीय रहेगा।

——

# पच्चीस

मेवाड़ के इतिहास प्रसिद्ध सूर्यमहल के पश्चिमी छोर पर सूर्य अपनी अन्तिम किरणें डाल रहा है। संध्या का समय है। उदयपुर मेवाड़ का वातावरण अत्यन्त उदासी से भरा हुआ है। जोधपुर और जयपुर के सेना अधिकारी, महाराजा मानसिंह तथा महाराजा जगतसिंह नगर से कुछ दूर अपने अपने शिविरों में ठहरे हुए है।

अमीर खां की पठानों की सेना अपना तोपखाना लिए हुए युद्ध होने की स्थिति में जोधपुर मारवाड़ की सहायता पर लड़ने को बिलकुल तैयार है। महाराजा जयपुर की सेना के शिविर उदयसागर के पास के मैदान में सैकड़ों की संख्या में लगे हुए हैं। जोधपुर तथा अमीरखां की सेनाएं बेदला ग्राम के पूर्वी भाग के पास मैदान में सैकड़ों शिविरों में ठहरी हुई है। अमीरखां की सेना में युद्धाभ्यास के लिए कभी कभी तोपो को चलाया जाता है जिसका उद्देश्य जयपुर तथा मेवाड़ के वीर सैनिकों को भयभीत करना है।

महाराणा भीमसिंह ने कृष्णा की हत्या करने के लिए चुपचाप जवानदास के द्वारा वयोवृद्ध वीरवर दौलतसिंहजी को कहलवाया तब दौलतसिंहजी ने सन्देश वाहक से उसी समय कहा कि राजकन्या की हत्या करने के बजाय मुझे अमीरखां की हत्या करने का काम सौंपा जाता तो वह मेरी वीरता के उपयुक्त था। एक कन्या की हत्या कराने वालों को ऐसा सन्देश मुझे भिजवाने के पहले चूड़ियां पहन लेना चाहिये अथवा स्वयं ही आत्महत्या कर लेना चाहिये। यह पाप करना मेरे लिये असंभव है। जाओ जवानदास, महाराणा से कह दो, यह बातें आपको शोभा नही देती। जवानदास ने महाराणा को उनका उत्तर निवेदित कर दिया फिर महाराणा ने परिस्थिति से लाचार होकर यह कार्य जवानदास को सौंप दिया।

जब जवानदास राजकुमारी कृष्णा की हत्या करने के उद्देश्य से तलवार लेकर राजवाटिका में गये और सफल नहीं हुए तो उनकी हिम्मत ने

जवाव दे दिया। तब कृष्णाकुमारी को पुनः मरवाने का काम अजीतसिंह को सौंपा गया। प्रत्यक्ष में कई व्यक्तियों के समक्ष तो अजीतसिंह ने कृष्णा की हत्या नहीं करवाने की बात कही थी किन्तु अजीतसिंह ने पुनः एकान्त में महाराणा भीमसिंह को प्रभावित करके कृष्णाकुमारी को स्वय तलवार लेकर मारने का इरादा किया।

महाराणा - अजीतसिंह आपके कथनानुसार यदि इस भयंकर रक्तपात को वचाने का कोई उपाय दृष्टिगोचर नहीं होता है तो फिर कृष्णाकुमारी को तुम्हें ही अपनी तलवार से मौत के घाट उतारना पड़ेगा। आप जव अग्रेजो के गवर्नर जनरल लार्ड मिन्टो और जनरल नोक्स से कलकत्ता में मिलकर आये थे, उन्होने फौजी सहायता का आपको पूर्ण आश्वासन भी दिया था। उस बात को लगभग छः महीने हो गये। वैसे अंग्रेज लोग अपने वायदे के पक्के होते हैं परन्तु मुझे आश्चर्य है कि अभी तक उनकी ओर से कोई भी नया समाचार नही आया। इधर अव मारवाड़, अमीरखां और सिंधिया की सशक्त सेनाएं जो संख्या में भी हमारी सेना से बहुत अधिक है, मेवाड को नष्ट करने के लिये बिलकुल तैयार है। अग्रेजी सेना की सहायता शीघ्र आ जाती तो यह संकट टल सकता था।

अजीतसिंह - महाराणाजी, कृष्णाकुमारी की हत्या करने का कार्य वहुत कठिन है। मेरे द्वारा होना संभव नहीं लगता है। स्वयं लार्ड मिण्टो ने मुझे शीघ्र ही अपनी सेना अमीरखां के तोपखाने की टक्कर लेने को भेजने का आश्वासन दिया था। हो सकता है, अव तक विलायत से अनुमति प्राप्त हो गई हो और सेना रास्ते में आ रही हो किन्तु निश्चयपूर्वक कुछ भी कहना या मान लेना उचित प्रतीत नही होता है।

भीमसिंह - जवानदास को तो कृष्णा के भोलेपन पर दया आ गई और वे कृष्णा पर तलवार चलाने में घवरा गये। अव महारानी से छिपाकर मैं तुम्हे आज्ञा देता हूं कि तलवार लेकर कृष्णा के चित्रकला कक्ष में शयन के समय के कुछ पश्चात् चले जाना और उसे सदा के लिए वही सुला देना ताकि गंभीर संकट से मेवाड़ में खून की नदियां वहने की स्थिति से हम वच सकें। अन्यथा मेवाड़ का विनाश निश्चित है। हमारी सेनाएं तो तोप, बन्दूकों पिस्तौलों के समक्ष अधिक समय तक ठहर ही नहीं सकती हैं। जिस राज-कुमारी के रूप और गुणों के कारण हम अपने को सौभाग्यशाली समझ,

रहे थे. परिस्थितिवश हमें ही उसकी मृत्यु की कामना करनी पड़ रही है। भविष्य में भगवान हमें इस जघन्य पाप की सजा अवश्य देगा पर हम भी तो लाचार हैं। हम अमीरखां, सिंधिया के दवाव में आकर कृष्णा का विवाह मानसिंह से नहीं कर सकते, यह हमारी वंश-परम्परा के विपरीत है। इसलिये हमें यह पाप करना ही पडेगा। तुम हिम्मत करके अपनी तलवार लेकर चित्रशाला के पास कृष्णा के शयन कक्ष मे आज रात को ही चले जाना। तुम्हे मेरी आज्ञा का पालन करना है।

अजीतसिंह - महाराणाजी! अमीरखां ने कल मुझे कहा था कि महाराणाजी व्यर्थ में जगतसिंह के दवाव में आकर कृष्णा का विवाह उनके साथ करना चाहते है किन्तु यह बात मेवाड़ के लिये अमंगलकारी सिद्ध होगी। कूटनीति यही है कि यदि मानसिंह के साथ कृष्णा का विवाह चुपचाप कर दिया जाय तो हमारी कृष्णा विशाल विस्तृत मारवाड़ राज्य की महारानी बनेगी, वर्षों तक राजसुख का उपभोग करती रहेगी। यदि मानसिंह के साथ विवाह नही हुआ तो कृष्णा को मृत्यु के मुख में जाना ही होगा। उसके साथ हजारों मेवाड़ी वीरों को मौत के घाट उतरना पड़ेगा। इसके सिवा कोई सुगम मार्ग नही दिखाई देता।
भीमसिंह - इसलिये मैं तुम्हे कहता हूं कि कृष्णा को मार देना ही मेवाड़ के हित में है।

अजीतसिंह और महाराणा भीमसिंह बात करते हुए अपने अपने निवास स्थान पर चले जाते हैं। दूसरे दिन दोपहर पश्चात् पुनः एकान्त में मिलते हैं। उनके मिलने का स्थान जलमहल के अन्तिम छोर पर बनी हुई संगमरमर की दो कुर्सियां है। उन पर बैठे हुए बातचीत कर रहे हैं।
महाराणा - क्या हुआ अजीतसिंहजी। क्या आपने तलवार लेकर रात को कृष्णा को मारने का प्रयत्न नही किया?

अजीतसिंह - महाराणाजी! गत रात्रि को मैं स्वयं शयन कक्ष में खिड़की के मार्ग से गया। मेरा हाथ तलवार पर था, हृदय से दया को दूर करके गया था लेकिन जब गीत गाती हुई कृष्णा मेरे सामने आई और मैंने उसका गुलाब के फूल की तरह प्रफुल्लित निष्पाप मुखड़ा देखा, मुस्कराहट उसके चेहरे पर नाच रही थी, ऐसी साक्षात् पुण्य की प्रतिमा को देखकर मेरे हाथ से तलवार छूट कर भूमि पर गिर पड़ी। कृष्णा ने खुद तलवार उठाकर

मुझे दी और कहा कि यदि मेरे शरीर के वलिदान से मेवाड़ की रक्षा हो सकती है तो काकाजी मुझे जल्दी ही जान से मार डालो। मैंने फिर सारी शक्ति बटोर कर तलवार उठाई किन्तु न जाने कौन-सी दैवी शक्ति ने मुझे इतना शक्तिहीन बना दिया कि मेरी तलवार स्वतः ही हाथ से छूटकर दूर जा गिरी। फिर मैं कृष्णा को देखने, उससे दृष्टि मिलाने का साहस भी नहीं कर सका और स्वयं लज्जित होकर वहां से छिपता हुआ भागकर अपने निवास पर चला गया। किन्तु रात भर भयकर व्याकुलता तथा मानसिक परेशानी के कारण सो नही सका। अव भी मेरा पूरा शरीर थकावट से चूर चूर हो रहा है। अतः मैं इस पाप को अव नही करने की आप से प्रतिज्ञा करता हूँ। अच्छा अव मैं घर जाने की आज्ञा चाहता हूँ। तथा हाथ जोड़कर शीघ्रतापूर्वक अजीतसिंह अपनी नाव में बैठकर उदयपुर नगर मे अपने स्थान पर चले जाते हैं।

महाराणा विवशता से अव अजीतसिंह को कुछ भी कहने की स्थिति में नहीं थे। अतः उन्होंने अजीतसिंह को जाते हुए देखकर भी रोकने का प्रयत्न नही किया। महाराणा भीमसिंह इधर उधर अकेले उसी उपवन में घूमते हैं और सोचते हुए अन्तर्द्वन्द्व में कहते हैं, वैसे तो यह घोर पाप है। अपनी निर्दोष सन्तान की हत्या के लिये यह आयोजन लेकिन, कदाचित् यह कार्य विधाता को भी स्वीकार नही है। इसीलिए जवानदास और अजीतसिंह के तलवार से मारने के प्रयत्न असफल हो गये। न जाने मेवाड़ के भाग्य में क्या लिखा है? जव से मैंने महाराणा का पद संभाला, मैंने क्या सुख पाया? पूरा समय युद्ध, आर्थिक तंगाई, आपसी संघर्ष, पारिवारिक कलह आदि में ही बीत गया। राजा से तो एक गरीब लकड़हारे का जीवन ही सुखी होता है। मैंने जीवन में पहली बार वंश की परम्परा तोड़ कर अंग्रेजो से सैनिक एवं नये हथियारों की सहायता मांगी पर वे भी दुर्भाग्यवश समय पर न आ सके। केवल हमारी दुर्दशा का नाटक देखने के लिये कर्नल टाड को भेज दिया, पर वह तो इतिहास के विद्वान है। उनके पास हमारी गंभीर स्थिति से निपटने की कोई औषधि नही है। अपने ललाट को पकड़ कर बार बार सिर दर्द का ज्ञान करने का प्रयत्न करते दिखाई देते है और मन में विव्हलता, चेहरे पर उदासी लिये हुए वेचैनी से जब इधर-उधर टहलते हैं तो दूर से आती हुई कृष्णाकुमारी दिखाई देती है। उनके हृदय में पुनः विचार आता है कि कृष्णा से अव

मिलने को उनकी आत्मा गवाही नहीं देती है। वे सोचते हैं-नहीं, हम उससे भेंट नहीं करेंगे। पिता का दुर्बल हृदय अपनी कन्या की स्नेह-सलिला की पावन जल धार में पुनः बह जायगा। एक पिता द्वारा अपना उद्देश्य भूल जायगा। अतः यहाँ से हटकर उसकी नजरों की सीमा से दूर हो जाना ही लाभदायक होगा, उत्तम होगा।

यह सोचकर महाराणा तीव्र चाल से अपने व्यक्तिगत कक्ष की ओर जाने को आगे बढ़ते हैं। दो-चार कदम चलते ही कृष्णा और भी तेज गति से दौड़कर, पिताजी ! पिताजी! पुकारती हुई उनके पीछे दौड़ती है।

जब महाराणा भीमसिंह को विवशता से रुकना ही पड़ा तब कृष्णा की ओर अभिमुख होकर बोले-ओह कृष्णा ! तुम हो क्या ?

कृष्णा - पिताजी क्या आप मुझसे मिलना नहीं चाहते ? आप बिना मिले ही जा रहे हैं। क्या मेरा कोई अपराध हुआ है ? आप मुझसे क्रुद्ध क्यों हैं ? यदि कोई त्रुटि हुई हो तो मैं आपसे क्षमा चाहती हूँ। आशा है आप मुझे निश्चय ही क्षमा कर देंगे। पिताजी, क्षमा कर दीजिये।

महाराणा - तुम्हारा कोई भी अपराध नहीं है बेटी, यह तो हमारे ही कोई पूर्व जन्मों का पाप है जिससे मेवाड़ पर विनाश के बादल मंडरा रहे हैं। चारों ओर से मेवाड़ दुश्मनों की सेनाओं से घिरा हुआ है। मैं कोई आवश्यक कार्य याद आने पर शीघ्रता से जा रहा था।

कृष्णा - अच्छा पिताजी । आप चाहें तो जा सकते है किन्तु संक्षेप में कल रात्रि को देखे भयंकर स्वप्न के विषय में सुन लीजिये।

महाराणा - क्या सपना आया बेटा !

कृष्णा - पहले तो मैं अत्यन्त गहरी निद्रा में लीन थी। अनुमानतः अर्द्ध-रात्रि के पश्चात् सपने में मुझे दो राक्षसों और दो डाकिनों ने घेर लिया। पहले उन्होंने खूब चिल्ला चिल्लाकर डराया। फिर दोनों राक्षसों ने मुझ पर तलवारों से आक्रमण करके मेरी हत्या करने का प्रयत्न किया। मैं अपनी प्राण रक्षा के लिये जितना तेज दौड़ सकती थी, दौड़ी, फिर मैं गिर पड़ी। फिर राक्षस तो चले गये किन्तु उन दोनों चुड़ैलों ने मुझे पकड़ लिया। एक ने मेरे दोनों हाथ पकड़ लिये और दूसरी ने एक विष-भरा प्याला मेरे मुंह में जबरदस्ती डाल दिया। फिर मैं सो गई। पता नहीं फिर क्या हुआ !

बस पिताजी ! आपको इतनी ही बात कहनी थी। अब आप अपने काम से पधारिये । आप मेवाड़ के राजा हैं, मेवाड़ के शासक हैं। आप प्यारी मेवाड़-भूमि की रक्षा का प्रबन्ध कीजिये।

महाराणा - बेटी । सभी सपने सच नहीं होते हैं। हमारी मानसिक चिन्ताओं के कारण ऐसा होता है। तुम अपने कमरे में जाकर आराम करो। जो ईश्वर को स्वीकार होगा, वही होगा। मनुष्य को सदैव उतम बनने और मंगलमय भविष्य की कामना करना चाहिये। मैं कुछ देर से चला जाऊंगा कृष्णा। तुम्हारे मन में कोई और सन्देह हो तो मुझे दिल खोलकर कहो बेटी।

कृष्णा - सुना है पिताजी कि जयपुर और जोधपुर का युद्ध अब मेवाड़ की सीमा में भी आ गया है।

भीमसिंह - तुमने ठीक सुना है बेटी।

कृष्णा - पिताजी ! आपका स्वर निराशा में क्यों डूबा हुआ है ? आपका स्वर बहुत ठण्डा, क्षीण विदित हो रहा है। क्या बात है ? आप अत्यन्त गंभीर हैं पिताजी ? क्या आप युद्ध होने से पहले ही पराजय की चिन्ता से इतनें दुखी एवं चिन्तित है ?

भीमसिंह - (गहरी एवं ठंडी सांस लेते हुए बड़ी गंभीरता, निराशा भरे स्वर में कहते हैं) हाँ बेटी-शायद हमारे भाग्य में अब पराजय और सर्वनाश ही लिखा है। मेवाड़ का भविष्य अब अंधकारमय ही प्रतीत होता है।
कृष्णा - पिताजी। आपने अभी तक मेरी ओर देखा तक नहीं है। आप इधर उधर या पृथ्वी की ओर देखकर ही मुझसे बातें कर रहे है ? अवश्य कोई ऐसी बात है, जो आप स्पष्ट कहने में असमर्थ हैं। मुझ से माताजी भी कुछ छिपा रही है। यदि जाने अनजाने में मुझ से कोई भी अपराध हो गया हो तो मैं क्षमा-प्रार्थी हूँ। कृष्णा तुरन्त आगे बढ़कर महाराणा के समक्ष हाथ जोड़कर उनके हाथों को पकड लेती है। फिर क्षमा मांगने को उनके चरणों में झुक जाती है। व्याकुलता से रोते हुए कहती है-कहिये पिताजी, कहिये आप क्यों .........? ..........

महाराणा भीमसिंह की आँखों से अश्रु धारा बह निकली। उन्होंने झुकती हुई कृष्णा को पकड़ कर ऊपर उठाया। उसे अपनी छाती से लगा-

कर रो पड़े। उनके हृदय में, मस्तिष्क में उठे आवेग से चट्टान तोड़कर जिस प्रकार जल-धारा प्रवाहित हो जाती है, वैसे ही अश्रुधारा बह निकली। कुछ देर तक पिता पुत्री गले लगकर रोते रहे। उसी समय अचानक महारानी आ गई और उन दोनों को धीरज बंधाया। उन्हें समझाकर फिर कुछ समय विश्राम करने की बात कही। अपने पिता को इस प्रकार रोते हुए देखकर कृष्णाकुमारी ने कहा, पिताजी आप मेवाड़ के सिसोदिया वंश के महाराणा हैं, आपकी आँखों में इतने आँसू क्यों? कुछ सोचकर सिर पर हाथ लगाते हुए पुनः कहती है, अच्छा पिताजी मैं आपकी चुप्पी का, आपकी विवशता का और आपके आँसुओं की अविरल धारा का अर्थ समझ गई। जवानदासजी मुझे तलवार से मारने आये थे। वे वापस चले गये। फिर दो बार अजीतसिंह मुझे मारने आये, पर न जाने कौनसी बात हुई जिससे मुझे मारने में वे सफल नहीं हुए और वापस चले गये। इसका अर्थ यह है कि मेवाड़ की रक्षा के लिये मेरे शरीर का बलिदान अनिवार्य प्रतीत होता है। क्यों पिताजी? क्या यह सच नहीं है?

अगर आप इसे नितान्त आवश्यक मानते है कि मेरे प्राण त्याग से मेवाड़ के सिसोदिया वंश की लज्जा, मर्यादा और इसके गौरव की रक्षा होती है तो मैं आज ही प्राण देने को तैयार हूँ। मेरा शरीर मेवाड़ की मिट्टी से बना है। यहां की हवा और पानी मे मैं बड़ी हुई हूँ और मुझे युवा अवस्था भी प्राप्त हुई है। मैंने यहाँ का अन्न खाया, इसलिये यदि मेरे प्राणों का बलिदान मेवाड़ भूमि की रक्षा के लिये होता है तो मैं अपने आप को सौभाग्यशाली समझूँगी। मैं अपना शरीर छोड़ने से तनिक भी भयभीत नही होऊगी। आप निश्चिन्त रहें। साहस से काम लें, पिताजी, भगवान शंकर सब अच्छा करेंगे।

कहिये माताजी, हाँ आप इधर देखिये पिताजी! बताइये अब मेरे लिये क्या आज्ञा है?

महा. भीमसिंह - बेटी मुझे इतना अधिक कह कर अब लज्जित मत करो। मैं स्वयं ही बहुत गंभीर वेदना से आत्म-पीड़ित हो गया हूँ। मैं वास्तव में भाग्यहीन हूँ। राजा होते हुए भी मैं जनता के किसी भी व्यक्ति से अधिक दुखी और कमजोर हूँ। यह सच मानो, बेटी।

कृष्णा - आप मेरे पिता होने के साथ मेवाड़ के राजा भी हैं, शासक भी

हैं। मेरे पिता के साथ आपको एक शासक का कर्त्तव्य भी निभाना है। अतः मेरी व्यक्तिगत भलाई के साथ साथ अपने देश की, अपने राज्य की भलाई का भी अवश्य ध्यान रखियेगा, पिताजी। कृष्णा की आँखों से अश्रु धारा वह निकलती है।

बस कृष्णा के अन्तिम शब्द सुनकर महाराणा भीमसिंह छाती पर हाथ रखकर वहाँ से एकदम द्रुत गति से बाहर चले जाते हैं।

कृष्णा - जननी जन्मभूमि ! आज तुमको गृह शान्ति के लिये, मानव रक्षा-हित, भीषण रक्तपात से बचने हेतु मेरे प्राणों की आवश्यकता है। हमारे देश पर, वंश पर सकटों की काली घटाएं चारों ओर छाई हुई है। मेरे कारण जोधपुर और जयपुर (अम्बेर) के जन धन की अतुल हानि हुई है। सारा राजस्थान युद्ध की आग में झुलसने को तैयार है। मेवाड़ में जन धन की बड़ी हानि होगी। देश का पतन होगा। मेरी बलि स्वीकार करो ! मैं तो इसके लिये पहले ही तैयार हूँ।

माताजी - मुझे शर्बत में विष मिश्रित करके राधा, अनुराधा, लक्ष्मी, ललिता ने दिया किन्तु वह मेरे पेट में टिक नहीं सका। उल्टी के साथ दो बार विष बाहर आ गया। कुछ मामूली कष्ट के पश्चात् मैं पुनः स्वस्थ हो गई, कदाचित् पूर्वजों की आत्मा मेरी जीवन-रक्षा कर रही थी।

अब मेरा अन्तिम समय आ गया है। अब तो अपनी जान देकर भी जननी जन्मभूमि की रक्षा करना मेरा कर्त्तव्य है। अच्छा पिताजी ! अब आप जाकर आवश्यक कार्य अवश्य कीजिये और जहाँ भी जाना चाहें, आप पधारिये। यहाँ घर की बातें हम सब मिलकर संभाल लेंगे। आप सब समझ गये होंगे ? आप पिता के साथ ही मेवाड़ के राणा है, शासक हैं, रक्षक है और हम सब भी स्वामी भक्त है। साथ ही अपने कर्त्तव्य पर आप भी अडिग रहेगे। इसमें कोई सन्देह नहीं है कि आप मेवाड़ की जनता के पूज्य-पिता है। पिता होने के साथ आपका राज्य के प्रति रक्षात्मक तथा रचनात्मक दृष्टिकोण का होना अत्यन्त आवश्यक है। यदि देश सुरक्षित रहेगा तो हमारा परिवार भी सुखी रहेगा।

---

# छब्बीस

आज महल के दूसरे भाग में जहाँ अजीतसिंह, जवानदास और राधा एक कमरे में आपस में कृष्णा की हत्या करने के विषय में बातचीत कर रहे हैं। उनमें अब यह तय होता है कि जब तलवार कृष्णा को मारने में असफल हो गई तब राधा अनुराधा, ललिता, लक्ष्मी आदि सहेलियाँ मिलकर उसका प्राणान्त कर देंगी। इस योजना को ही अन्तिम उपाय के रूप में परस्पर स्वीकार किया।

कृष्णा अपने निजी कक्ष में बैठी मानसिक दृष्टि से संघर्षलीन है। मन लगाने के लिये यह लगातार एक गीत गाने में मस्त हो गई है। कृष्णा अपने बनाये हुए चित्रों में मीराबाई तथा शंकर के विषपान के चित्र ध्यान से देखती है। अब कृष्णा के मस्तिष्क में स्वयं ही बलिदान होने की भावना के विचार चक्कर काटने लगे। अब उसे सपनें की बातों पर विश्वास होने लगा। उसको अब अपना अन्त निकट ही दिखाई देने लगा।

कृष्णा - 'पी लूंगी, विष पी लूंगी' इस संसार में अब मेरा जीना व्यर्थ है। एक प्राण के कारण हजारों लोगों के खून की नदियां बह जाएंगी। इससे तो स्वर्ग में सदा शान्ति प्रदान करने वाले विष के प्याले को मैं अमृत का प्याला मानकर पीने को तैयार हूँ। वह विष का प्याला मुझे प्रेम रस के प्याले से अधिक सुखदायक लगेगा, इसमें तनिक भी सन्देह नहीं है। मैंने जीवन में कई गीत गाये। सत्रह बसन्त भी देखे हैं। अब मैं अपना अन्तिम गीत गा कर दादी परदादी से भी बढकर मीराबाई और महारानी पद्मिनी के पदचिन्हों पर चलूंगी, मैं उसी वंश की एक वीर युवती हूँ। भगवान एकलिंगजी तथा सभी देवी-देवता मुझे ऐसी शक्ति प्रदान करेंगे जिससे मैं अपनी इस कठिन परीक्षा में सफल हो जाऊं और हँसते हँसते अपने प्राण देशहित पर पुष्पांजलि की भांति चढ़ा दूं। यही मेरा अन्तिम निर्णय है। इसी में मेरा, मेरे वंश का, देश और समाज का, अन्य राज्यों के हजारो सैनिकों का कल्याण है।

जब कृष्णा हाथ जोड़कर भगवान शंकर को प्रणाम कर रही थी, आंखें उसकी मुंदी हुई थीं, घुटनों पर बैठे हुए वह भगवान का ध्यान कर रही थी। ठीक इसी समय पीछे के द्वार से अचानक राधा ने प्रवेश किया। राधा अजीतसिंह एवं जवानदास से परामर्श करके अपने लक्ष की ओर बढ़ने का संकल्प लेकर कृष्णाकुमारी के कक्ष में आ गई और चुपचाप खड़ी खड़ी देखती रही। कृष्णा अपनी प्रार्थना में लीन थी।

कृष्णा का व्यक्तिगत कक्ष जगमन्दिर जलमहल मे था। रात्रि का समय था। चारों ओर पूर्ण शान्ति थी। राजमहल से महाराणा और महारानी दोनों संध्या के पश्चात् सूर्यमहल में चले गये थे। जलमहल मे अब कृष्णा के प्राणों की रक्षा करने वाला कोई भी व्यक्ति नहीं था। अजीतसिंह जवानदास, चार-पांच दासियां और कुछ सैनिक उपस्थित थे, जो अजीतसिंह की प्रत्येक बात को ईश्वर की बात मानकर कार्य करते थे। कुछ नावे थीं। उनमें जलमहल के चारों ओर अमीरखां के कुछ चुने हुए सैनिक घूम रहे थे और इस बात की रखवाली कर रहे थे कि कोई कृष्णा की रक्षा के लिये इस महल में नाव द्वारा नहीं जा सके। राजमहल के निवासियों में किसी को भी यह अनुमान नही था कि आज रात्रि में क्या विशेष घटना होने वाली है। प्रतिदिन की भांति सभी लोग अपने अपने कार्य मे व्यस्त थे। महाराणाजी और महारानी ने भी भोजन किया और फिर आराम से अपने शयन-कक्ष में चले गये। सोते समय महाराणाजी के मस्तिष्क में मानसिंह और अमीरखां की चुनौती के शब्दों से चिन्ता उत्पन्न हो रही थी। महाराजा मानसिंह की सेना कई दिनों से उदयपुर के पास पड़ी हुई थी। महाराजा जगतसिंह की सेना भी उदयसागर के पास युद्धाभ्यास कर रही थी। दोनों दलों ने महाराणाजी को तीन दिन का समय दिया था, कि आगामी तीन दिनों में आप हमें अन्तिम उत्तर देने की व्यवस्था करें कि कृष्णा का विवाह हमारे साथ कर रहे है या नही। आज उस चुनौती का दूसरा दिन था। महाराणा ने इस चुनौती की बात किसी को भी नही बताई थी। यहां तक कि महारानी, कृष्णा अथवा अन्य किसी को भी इस बात की माहिती नहीं थी। महाराणा के मन मस्तिष्क में यही चुनौती बार बार चक्कर लगा रही थी। वे कुछ भी निर्णय करने में असमर्थ थे।

बहुत देर पश्चात् जब कृष्णा ने उठकर आंखे खोलकर इधर उधर जाने का विचार किया, ठीक उसी समय राधा को पीछे की खिड़की के पास

चुपचाप खड़े हुए देखा । कृष्णा ने धीरज रखते हुए पुकार कर कहा- राधा ! राधा!

राधा - हाँ राजकुमारीजी ! कहिये क्या बात है ? आप तो बहुत ध्यान से शंकर भगवान की पूजा कर रही थी, अतः मैंने आपके पूजा कार्य में व्यवधान नहीं डाला । भगवान आपका मनोरथ सफल करें। आप शीघ्र ही जोधपुर अथवा जयपुर की महारानी बनें, हमारी भी ईश्वर से यही प्रार्थना है ।

कृष्णा - अब तो मुझे अगले जन्म में महारानी बनने का सौभाग्य भले ही मिले। राधा तुम मेरी प्यारी सखी हो, मेरा एक बहुत ही आवश्यक कार्य तुम्हें करना है ? मुझे पूर्ण विश्वास है कि तुम इन्कार नहीं करोगी ।

राधा - कहिये राजकुमारी, आपकी क्या आज्ञा है ?

कृष्णा - प्रिय राधा ! शायद यह मेरी अन्तिम प्रार्थना है तुमसे । आपने इसी महल के अतिथि गृह में अतिथियों के अमल पान के लिये अफीम का घोल एक बड़े पात्र में रखा जाता है । उसमें से तू एक बड़ा प्याला भरकर ले आ । फिर उसमें अन्य विषमय पदार्थ मिलाकर कुसुम्बा बना दे । बस यही आज्ञा है ।

राधा अपना मनोरथ स्वतः ही सिद्ध होते हुए देखकर मन ही मन में प्रसन्न होती हुई अपनी मुस्कराहट छिपाने के लिये अपना निचला होंठ दाँतों से चबाते हुए कृत्रिम वाणी में कहती है, यह कुसुम्बा आप क्यों मंगवाना चाहती हो ?

कृष्णा - राधा ! अब मैं इस जीवन का स्वयं ही बलिदान करना चाहती हूँ । अब मुझे मरने में जो आनन्द आयेगा, वह जीने में नही है । राधा कल रात भी मैंने स्वयं अफीम घोलकर पी थी, किन्तु मुझे हल्का नशा आया, जो मृत्यु मैं चाहती थी, वह मुझे नही मिली । अब तू जल्दी जा और बहुत तेज विष मिलाकर कुसुम्बा बनाकर ले आ । इस अन्तिम प्रयत्न में मुझे पूर्ण आशा है कि मेरा प्राणान्त हो जायगा ।

राधा - यह बात अगर महारानीजी को मालूम हो जाय तो वह हम पर बहुत क्रोधित होंगी ।

कृष्णा - नहीं ! नही ! वह नाराज नही होंगी । मेरी मृत्यु से सबका कल्याण होगा । हजारों सैनिकों के प्राण बच जायेंगे । मेवाड़ी सेना रक्त-

पात से स्वतः ही बच जायेगी। क्योंकि कल से घमासान युद्ध की संभावना है।

राधा - फिर भी मृत्यु के मुख में जाना उचित नहीं है।

कृष्णा पुनः सिर पकड़कर बोली जब जवानदास और अजीतसिंह की तलवारें भी मुझे मारने मे असफल रही तो अब विष के अतिरिक्त अन्य कोई भी कारगर उपाय नही है। राधा !

राधा - मैं तो ऐसा नहीं चाहती हूँ (कनखियों से दूसरी ओर देखती है) फिर भी आपकी हार्दिक इच्छा है, आज्ञा है तो मैं अभी जाती हूँ। कुसुम्वा का वड़ा प्याला आपके लिये बनाकर लाती हूँ। राधा शीघ्र जवानदास और अजीतसिंह के कक्ष में जाती है और एक बड़े प्याले में अतिथि कक्ष से अफीम का घोल, तेज विष, जो अजीतसिंह और जवानदास लाये थे, उस शीशी को खोल जहर उस प्याले में मिला देती है। फिर अजीतसिंह, जवानदास, अनुराधा, लक्ष्मी, ललिता दासियां उस विष भरे प्याले के वारी-वारी से हाथ लगाकर प्रसन्नता प्रकट करते है। फिर राधा उस प्याले को लेकर अपनी अन्य तीनों सखियों के साथ कृष्णा के कक्ष में जाती है। अर्ध रात्रि का समय था। कृष्णा के लिये यह कालिमामय रात कालरात्रि थी। राधा की प्रतीक्षा करते हुए कृष्णा को कुछ कुछ नींद आने लगी। लगभग आधे घण्टे तक कृष्णा की बंद आखें अपने स्मृति पटल पर जीवन के प्रारम्भ से, जबमे होश संभाला था, एक एक करके सभी चित्रों को देखती रही। माता पिता का ममता भरा हृदय, उनकी गोद में खेलना - उनकी गोदी में बैठना, कंधों पर झूलना, भाई वहिनों के साथ खेलना, भोजन करना, तुतलाती बोली में बोलना, कुछ वड़ी होने पर सहेलियों के साथ इधर उधर घूमना, उदयपुर के प्राकृतिक दृश्यों का अवलोकन करना। कुछ और बड़े होने पर चित्तौड़, पुष्कर, अजमेर, कुंभलगढ़ रणकपुर, एकलिंगजी, नाथद्वारा आदि, नगरों के एक एक सभी चित्र दिख रहे हैं। चलचित्र की भांति उसके स्मृति पटल पर महाराजा जगतसिंह से वार्तालाप का दृश्य अन्तिम रूप से अंकित हो जाता है। तभी राधा विष का प्याला लेकर आ गई। ठीक उसी समय महाराणा के दरवार में यमराज के रूप में भयंकर वेश-भूषा मे उसें अमीरखां की तस्वीर दिखाई देती है। कृष्णा को ऐसी प्रतीत हो रहा है जैसे दो राक्षस और दो चुड़ैल उसको पकड़ लेते हैं। दोनों राक्षसों ने कृष्णा के हाथ-पैरों को पूरी शक्ति से पकड़ कर

जकड़ लिया है। उसे विस्तर पर धम से गिरा दिया है। और दोनों चुड़ैलों में से एक चुड़ैल ने उसका मुंह बलपूर्वक खोला और दूसरी चुड़ैल ने प्याला मुंह में उड़ेल दिया - कृष्णा चिल्लाई। उसी समय चारों सखियां विष का प्याला लेकर आ गई।

कृष्णा का जब स्वप्न भंग हुआ, उसने आंखें खोलीं। लावण्यमय ललाट पर पसीने की सैकड़ों बूंदें चमक रही थीं। हाथ पैरों में शिथिलता आ गई थी। राधा विष का पूरा भरा हुआ बड़ा प्याला एक थाली के बीच में रेशमी कपड़े से ढका हुआ लेकर आई और जहां कृष्णाकुमारी अपने पलंग पर तकिये का सहारा लेकर सो रही थी, सखियों के साथ पहुंची।

कृष्णा - ले आई राधा ? कुसुम्बा बनाकर ले आई ?

राधा - हां! राजकुमारीजी। मैंने आपकी आज्ञा से उत्तम से उत्तम कुसुम्बा बनाया है। ऐसा कुसुम्बा मैंने न तो किसी के लिये विगत समय में बनाया था, न भविष्य में भगवान किसी के लिये बनाने का अवसर देवे। यह विशेष मादक वस्तुओं के मिश्रण से बना है। इसके पीते ही आपको आराम की नींद आ जावेगी। (मन ही मन विहंसते हुए कि सदा के लिये आपको नींद आ जावेगी।)

कृष्णा - लाओ राधा लाओ। बस अब मैं भी जी कर क्या करूंगी ? मेरे कारण ही मेरी मातृभूमि, मेरे परिवार के लोग संकट में पड़ गये है। अविवेकी लोग मेरे तन से विवाह करने के लिये बड़ी बड़ी सेनाए लेकर आये है। कितनी विचित्र बात है ? साधारण लड़कियों के लिये बारात सज धज कर आती है किन्तु मेरे लिये बाराती हथियारों से, तोप गोलों से सज कर आये है। अभी मुझे सपने में मीराबाई और पद्मिनी ने दर्शन दिये हैं। भगवान शंकर त्रिशूल लिये हुए दिखाई दिये है। माता पार्वती आगे बढ़कर मुझे गोद में बिठाने के लिये अपने हाथ बढाती हुई दिखाई दी है। राधा लाओ। बस अब इसे पी लूं। मुझसे जाने अनजाने में त्रुटि हुई हो तो मुझे आप सब सखियां क्षमा कर देना। सबके आगे कृष्णा हाथ जोड़ती है। कुछ शान्त रहने के पश्चात् पुनः कहती है - महारानीजी महाराणाजी और रमा से कह देना, मेरी मृत्यु के पश्चात् कोई दुख नहीं मनावें - मेरा इतना ही अन्नजल थी, भगवान ने सभवतः मुझे इतने ही

समय के लिये पृथ्वी पर भिजवाया था। मेरा काम पूरा हो गया है - बस ...... लाओ प्याला लाओ - कुसुम्बा लाओ। राधा और अनुराधा दोनों प्याले को थाली में से उठाती है - ललिता और लक्ष्मी ने कृष्णा के दोनों ओर से हाथ पकड़ लिये और राधा ने अपने दोनों हाथों से प्याला पकड़ कर कृष्णा के कोमल होठों से लगा दिया। कृष्णा ने पुनः भगवान शंकर-पार्वती, मीरा के चित्र के पास प्याला रखा। और पिताजी को याद कर जोर से चिल्लाकर पुकारा, हे भगवान। मुझे शक्ति दो और फिर एक दम आँखे मींच कर दोनों हाथों से कुसुम्बा का पूरा प्याला पीते समय एक दो बार बीच में सांस ली। गले में तीव्र जलन का अनुभव हुआ। सारे शरीर में विद्युत की लहरों की भाँति स्पन्दन होने लगा। उसे कुछ अजीब-सा अनुभव हो रहा था। उसके होठों पर धीरे धीरे कुछ शब्द उभरे-पी लिया, मां पी लिया। अब विष का प्याला पी लिया। माँ ! विष का प्याला - पी ...... पी लिया।

बस जब अन्तिम शब्दों का उच्चारण हो रहा था, अचानक रमा ने प्रवेश किया। रमा को जब इस अर्धरात्रि के कुछ पीछे की अवधि में एक भयंकर सपना आया तो वह एक दम उठ बैठी और सीधी दौड़ती हुई राजकुमारी कृष्णा के कक्ष की ओर आई। उसने देखा, लक्ष्मी और ललिता ने कृष्णा के दोनों हाथों को पकड़ रखा है। कृष्णा सोई हुई है। राधा और अनुराधा ने विष के खाली प्याले को पुनः कपड़े से ढक कर उसी कक्ष के कोने में रख दिया था और कृष्णा के पलंग पर पैरों की तरफ बैठे कृष्णा से बातें करने लगीं। कुछ देर बाद राधा चली गई। रमा को देख कृष्णा विव्हलता से बोली - आओ बहिन रमा ! आओ। मेरे पास आओ। मैं तुम्हारी गोदी में अपना सिर रखना चाहती हूं। रमा भी चिन्तत-सी वहाँ जाकर उसके सिरहाने बैठ जाती है। फिर कृष्णा की इच्छानुसार उसका सिर अपनी गोदी में लेकर बैठ जाती है उसके ललाट पर हाथ फेरती है। राधा और अनुराधा कृष्णा के पैरों को सहलाती हैं। कृष्णा आराम से बिस्तर पर लेटी हुई है। रमा को विषपान की घटना का बिलकुल ज्ञान नही हो पाया था। अतः रमा कहती है, आज तो मेरी गोदी में सिर रखकर सो जा कृष्णा। कल रात अपने स्वामी की गोद में सिर रखकर लेटने का स्वर्णावसर तुम्हें अवश्य मिलेगा -- राजकुमारजी।

यह कह रमा मुस्कराती है। दूर से किसी की आवाज सुनाई देती है- 'अटक गया रानी का बजरा, नाव लगी उस पार'

कृष्णा आखें मीचे हुए ही कहती है, रमा तू कालिया की आवाज सुन रही है ? वह गा रहा है - अटक गया रानी का बजरा - नाव लगी उस पार। कितना अच्छा गीत गा रहा है वह। रमा उसके गीत में कितनी सच्चाई है - रमा उसे (कालिया को) यहां शीघ्र बुलवा लाओ। मैं उससे मिलना चाहती हूं। उसकी आवाज में कितना आकर्षण है - रमा।

रमा - राजकुमारजी ! कालिया एक कहार का लड़का है, उसे यहां बुलाने से महारानीजी बहुत नाराज होंगी और अभी तो आधी रात ही बीती है। प्रातः काल होने दो फिर बुला देंगे।

कृष्णा - नहीं रमा। अभी बुला दे। अब अधिक समय मेरे पास नहीं है। मैं तो अब 'अमर-यात्रा' पर जा रही हूँ। जिन गरीबों धोबी, कुम्हार चमार, कहारों से मिल नहीं सकी, अब तो मिल लूं। राजकुमारी होने का क्या यही अभिशाप है ? मनुष्य-मनुष्य सब समान हैं। जन्म के समय अमीर और गरीब एक ही प्रकार से पैदा होते हैं, आते समय कोई भी व्यक्ति कुछ साथ नहीं लाता है। मृत्यु के पश्चात् कोई भी व्यक्ति अपने साथ कुछ नहीं ले जाता है। मनुष्य के जीवन और मृत्यु के बीच में असमानता बढ़ाने वाले समाज और शासन के लोग ही उत्तरदायी हैं। ईश्वर प्रदत्त सभी वस्तुएं अमीर गरीब को समान रूप से प्राप्त होती है। सूरज की धूप, चन्द्रमा की चांदनी, वर्षा आदि सबके लिये समान है। ये भेदभाव हमारे समाज के विकास में बाधक है। इनको बढ़ाने वाले पापी है, अपराधी हैं। रमा जाओ और अब शीघ्र कालिया को बुला लाओ। यह राजकुमारी की आज्ञा हैं। मैं उसका गीत अन्तिम बार सुनना चाहती हूँ।

रमा चुपचाप वहां से हटकर जाने लगती है। राधा इस बीच बाहर से पुन: कृष्णा के सामने आती है। कृष्णा उसको अपने पास पलंग पर सामने बैठने को कहती है। राधा बैठ जाती है।

कृष्णा - राधा, मानलो यदि मैं तुमसे विष का प्याला नहीं मांगती तो भी क्या तू मुझको विष दे देती ?

राधा - (धीरे से) - हां।

कृष्णा - क्या मेरे प्राण लेने में तुम्हें संकोच नही होता ?

राधा - बिलकुल नहीं।

कृष्णा - क्यों ? ऐसी क्या बात है ?

राधा - आप ऊंची जाति की लड़की हैं। आप अमीर बाप की बेटी हैं - राजकुमारीजी। आपकी मृत्यु से बहुत से उच्च वश के धनवान नर नारियों को हार्दिक दुःख होगा, इसीलिये।

कृष्णा - क्या दूसरों को दुखी देखकर तुझे आनन्द प्राप्त होता है ? सुख मिलता है ?

राधा - हां, क्योंकि धनवानों से, उच्च वर्ग के लोगों से बदला लेने की भावना मुझमें है।

कृष्णा - राधा ! क्या तू मुझे भी उन्ही धनवानों में से समझती है ? क्या मुझसे भी तू उतना ही वैर रखती है ?

राधा - आपसे व्यक्तिगत कोई वैर नही है। लेकिन मैं कह चुकी हू कि आपकी मृत्यु से सैकड़ों उच्च-वंशीय और धनवान लोगो के हृदय घायल हो जाएंगे जिनके प्रति मेरा मन विद्रोही है। जिन उच्च वंशाभिमानियों ने हमें नीच समझा, जिन्होंने हमें निर्धन समझा, हमारी छाया से भी वे अपवित्र हो जाते हैं, हमें आराम से जीने का कोई अधिकार नही देते। ससार में प्राप्त सभी सुखों को भोगने के विलासिता करने के एकछत्र अधिकारी है, और हम चाहे कितने भी सच्चरित्र हों, कितने ही परिश्रमी हो, कितने ही ईमानदार हों, सत्यवादी और धर्मात्मा हों, फिर भी समाज के ठेकेदार, मनु महाराज के औरस पुत्र हमें बराबर बैठने का आसन भी नही देते हैं। हमें मानव के समान जीने का, सुख सुविधा मागने का कोई अधिकार ही नही है। इसी के कारण जब ऊची जाति वालों पर संकट आता है, वे दुख-दर्द व सांसारिक यातना से तड़पते हैं, रोते-चिल्लाते हैं तब हमें वास्तव में पैशाचिक आनन्द प्राप्त होता है राजकुमारीजी।

रमा का सहसा प्रवेश होता है। वह पलंग पर बैठ जाती है। कृष्णा पूछती है-क्या हुआ बहिन रमा, कालिया नही मिला ?

रमा - इस समय कालिया कही नही मिला, न जाने कहां चला गया ?

कृष्णा - रमा बहिन मैं चाहती थी कि मरते समय संसार के उन सब लोगों से थोड़ा संपर्क कर लूं जिनके साथ मेलजोल रखना राजमहल की

अनुमति नहीं देती है, पर क्या करूं ? क्या करूं ...... बहिन रमा । (फिर अपनी छाती को दोनों हाथों से थामकर) अब मेरा बस नही चलता, रमा। बड़ा कष्ट हो रहा है, मेरा दर्द अब बढ़ रहा है। रमा कृष्णा का सिर पुनः अपनी गोद में लेकर पूछती है, कहां दर्द हो रहा है राजकुमारजी ? तुम्हें क्या हो गया बहिन ? अरे ! यह क्या ? तुम्हारे तो होठ नीले पड़ रहे हैं ।

कृष्णा - रमा बहिन ! मैंने खुद ही विषपान कर लिया है। अब मैं कुछ ही क्षणों की मेहमान हूँ । अभी न जाने महाराज जगतसिंह कहां हैं ? रमा जब भी तुझे मिलें, उनको मेरा प्रणाम कहना और कहना कि इस जन्म में तो मैं तुमसे नहीं मिल सकी, आगामी जन्म में अपना मंगलमय मिलन अवश्य होगा।

बड़ी बेचैनी से कृष्णा सखियों की ओर देखकर कहती है सखियों, तुम सब शीघ्र मेरी चित्रशाला में जाओ और वहां से मीराबाई के विषपान का, पद्मिनी की जौहर ज्वाला तथा भगवान शंकर के विषपान के चित्र लाकर मेरी दृष्टि के सामने की दीवाल पर लगा दो अब मैं उनका अन्तिम दर्शन करना चाहती हूँ ।

राधा, अनुराधा और ललिता तीनों चित्रों को लाकर सामने की दीवाल पर टांग देती हैं ।

रमा - तुमने विषपान क्यों किया ! क्या वैद्यजी को बुलाकर लाऊँ ?
कृष्णा - पागल हो गई हो क्या ? अब मुझे शान्ति से मरने दो । अब तो विष मेरी नस नस में व्याप्त हो गया है। मेरे सारे शरीर में आन्तरिक हलचल तीव्र गति से हो रही है। सनसनाहट और झनझनाहट से मेरा सारा शरीर मृत्युंजय वाद्य की तरह ध्वनिमय स्पन्दन कर रहा है। अब मुझे ससार का कोई वैद्य बचा नही सकता। स्वर्ग से मुझे लेने के लिये वह देखो विमान आ रहा है। विस्तृत नीले आकाश में वह विमान चक्कर लगा रहा है रमा। क्या तुझे वह विमान दिख नही रहा है ? रमा के नेत्रों मे अश्रुधारा प्रवाहित हो रही है। वह कृष्णा के चेहरे पर हाथ फेर रही है।

इधर जब कृष्णा ने कुसुम्बा का प्याला पिया, उसी समय महा-राणाजी की नीद एकदम उचट गई। वे अपने पलंग पर एकदम उठ बैठे।

उन्हें नींद में भयंकर अपशकुन हुआ । उधर महारानीजी नींद में हृदय-विदारक दृश्य कृष्णा की मृत्यु का देखकर व्याकुलता से चिल्लाने लगी । महारानी की सखियों ने उन्हें संभाला । वे चिल्ला रही थी, मुझे कृष्णा के पास जल्दी ले चलो । उसे किसी ने मार दिया है । महाराणाजी, जल्दी कीजिये । शीघ्र जलमहल में अभी चलिये ।

शूरवीरसिंहजी और महाराणाजी जलमहल चलने को पहले से ही तैयार थे । रात को लगभग तीन वजे थे । विशेष नाव मे बैठकर महाराणा, महारानी ठाकुर शूरवीरसिंह, दौलतसिंह जलमहल में आ गये । सभी लोग धीरे धीरे कृष्णाकुमारी के कमरे की ओर आ गये, जहां अजीतसिंह जवान-दास ने उसे कल लाकर धोखे से बन्दी के समान वना दिया था । महारानी ने आगे वढ़कर कृष्णा को देखा । उसको गोद में ले लिया, मेरी वेटी । मेरी कृष्णा तुझे यह क्या हो गया आँखें खोल वेटी, आँखे खोल वेटी ! बोल वेटी । रमा तू वता, वेटी कृष्णा को क्या हो गया । वता वेटी, जल्दो वता......

रमा - महारानीजी बड़ा अनर्थ हो गया ? रमा खड़ी हो जाती है फिर कहती है महारानीजी क्या बताऊं, कृष्णा ने जहर का प्याला पी लिया है । बहुत तेज जहर । देखो इसका शरीर नीला पड़ रहा है ।

महारानी - हाय वेटी, हाय मेरी कृष्णा ! तूने यह क्या किया वेटी ? महा-राणाजी अश्रु विव्हल नेत्रों से कृष्णा पर झुक गये । चिल्लाकर-हाय वेटी कृष्णा तूने यह क्या किया ? मेरी आंखों की ज्योति रूठ गई ? सिसोदिया वंश का प्रकाश कहां गया ? राजगृह की शोभा तू कहाँ चली गई ? कृष्णा के सिर पर हाथ फेरते है । कृष्णा धीरे धीरे अपनी आँखें खोलकर सबको देखती है । आँखों से आँसू बहने लगते हैं ।

शूरवीरसिंह - प्यारी वेटी कृष्णा तूने यह क्या किया वेटी ? तूने सिसोदिया वश के वीरों की भुजाओं पर अविश्वास किया ? महाराणाजी मैं अभी जाकर अपने सर्वोच्च वैद्य को बुलाकर लाता हूँ । वेटी तनिक हिम्मत रखो तुम अच्छी हो जाओगी । अभी कुछ नहीं विगड़ा है ।

कृष्णा मन्द स्वर में साहसपूर्वक कहती है, माताजी, पिताजी कोई मेरी भूल हो तो मुझे क्षमा कर देना । ठाकुर संग्रामसिंहजी की ओर ध्यान से कृष्णा ने देखा फिर कहने लगी काकाजी, अव वैद्यराज का कुछ काम नहीं

है। दाहिने हाथ को आकाश को ओर फैलाकर उंगली से संकेत कर कहती है देखो पिताजी, उधर देखो माताजी, स्वर्ग से विमान बहुत देर से नील-गगन में चक्कर लगा रहा है। स्वयं यमराज मुझे लेने आ रहे हैं। अब मैं शीघ्र ही आप लोगों से अक्षय अवकाश लेकर जा रही हू। जब तक जीवित हूँ तब तक आप सब लोगों से कुछ और बातें कर सकूं, बस यही अभिलाषा है। यही मेरी अन्तिम इच्छा है। बस यही कामना है।

महाराणा अपने रूमाल से अश्रु पोंछते हुए कहते हैं, बेटी वह पत्र अजीत-सिंह ने मुझसे धोखे से लिखवा लिया था। तूने इतनी जल्दी क्यों की प्यारी बेटी कृष्णा ?

कृष्णा - पिताजी ! जन्म से अभी तक आपने अपने हृदय का सम्पूर्ण प्यार, सम्पूर्ण स्नेह मुझे सुधा-स्वरूप प्रदान किया और आपने मुझसे बदले मे कुछ भी नहीं चाहा। और देखो, देखो माताजी अपने वंश की गौरव रक्षा के लिये, मेवाड़ की मर्यादा की रक्षा के लिये आप लोगों की आबरू रखने के लिये अब मेरी ओर से कुछ देने का अवसर आया तो क्या मुझे आपने इतना कायर समझा है कि मैं कुछ भी बलिदान नहीं कर सकूं, क्यों ? माताजी

महारानी - लेकिन मैंने तुझे कहा था, बेटी कि जब तक मेवाड़ का एक भी राजपूत जीवित है, कृष्णा को मरने या मारने की कोई आवश्यकता नही है। तूने बहुत जल्दी की बेटी। हमारी सेना की वीरता पर तुमने विश्वास नहीं किया बेटी।

कृष्णा - मुझे बहुत दुख है माताजी कि अन्तिम समय में मैंने आपकी आज्ञा का पालन नहीं किया क्योंकि आपकी आज्ञा में मोह तथा ममता का पुट था। उधर देखो माताजी। हाथ से चित्रों की ओर संकेत करते हुए कहती है, अपनी ही पूर्वज भक्त मीरांबाई में कितनी शक्ति थी ! ससार के लोगों के दिये हुए विष को पीकर अमर हो गई। अपनी परदादी पद्मिनीजी ने अपने सौन्दर्यमय शरीर को जौहर ज्वाला में भेंट करके अपने मेवाड़ के बाप्पा-रावल वंश की कीर्ति को अनश्वर बनाया। पिताश्री, माताजी आपकी प्यारी सन्तान कृष्णा इतनी महान नही है कि हजारों वीरों के रक्तपात को बचाने के लिये, राजस्थान के राजाओं में परस्पर व्याप्त विष बेल को, वैमनस्य के सागर को नष्ट करने के लिये राजस्थान की एकता के लिये, मानवता की महिमा वृद्धि के लिये उसके तुच्छ प्राणों का मोह किया जाय। मैं वीरों की सन्तान हूँ और वीरता पूर्वक हो अपने प्राण अर्पण करूँगी।

मेरे इस अकिंचन शरीर के लिये जयपुर, मारवाड़ और मेवाड़ के हजारों वीर योद्धा पुरुष व्यर्थ में अपने बहुमूल्य प्राणों का वलिदान करें, यह मेरी आत्मा ने स्वीकार नहीं किया। बस (कराहती हुई करवट बदलती है) इसीलिये मैंने विषपान कर लिया है।

महाराणा - बेटी तुम्हारी अन्तिम इच्छा है ?

कृष्णा - पिताजी ! मेरी यही इच्छा है कि मैं अपने वलिदान से तीनों राज्यों की युद्धाग्नि को शान्त करूंगी। मैं भले ही इस संसार से चली जाऊं, लेकिन जननी-जन्मभूमि का मान सुरक्षित रह सके। मेरी मृत्यु से इन विवेकहीन आक्रमणकारियों और सौन्दर्य के पिपासुओं, वासनामय विलासियों को शिक्षा मिल जाएगी। अन्त समय में सुख प्राप्त करने की कितनी प्रभावशाली दवाई मैंने पी ली है। संसार के सब प्रकार के दुखों से छुटकारा पाने का कैसा सुन्दर साधन मैंने प्राप्त कर लिया है। पिताजी, माताजी मेरे लिये यह विष नहीं, अमृत है।

महाराणा - बेटी ! मैं तुम्हारे विना अब कैसे जीवित रह सकूँगा ?

कृष्णा - पिताजी ! आपको मेवाड़ की जनता की भलाई के लिये जीवित रहना होगा। आप केवल मेरे पिता ही नहीं मेवाड़ के लाखों नागरिक आपके बेटे बेटी, भाई-बहिनों के समान है। आपने पिता का कर्त्तव्य बहुत अच्छी तरह निभाया है। अब आपको शासक का कर्त्तव्य आजीवन पूर्ण शक्ति और सक्षमतापूर्वक निभाना है। भगवान शंकर के चित्र की ओर हाथ का संकेत करते हुए कहती है-अपने वंश के इष्टदेव एकलिंग, शिवशंकर जी अब नीलकंठ महादेव बन गये हैं। आप भी इनसे प्रेरणा लेकर संसार के दुख का कालकूट (गरल) कण्ठ में रखकर संसार का उपकार कीजिये। दूसरों के दुखों से बचाने के लिये ही हलाहल पीना पड़ता है। इसी में मानवता का कल्याण है। इसी में मानवता की पूजा है।

ठाकुर शूरवीरसिंह - बेटी कृष्णा ! तुमने बहुत जल्दी की। हमें अपनी वीरता दिखाने का अवसर ही नहीं दिया। हमारी सामरिक शक्ति, अदम्य वीरता पर तुमने अविश्वास किया। तुझे ऐसा नहीं करना चाहिये था।

कृष्णा - (अन्त में कुछ मुस्कराकर) काकाजी, मैं जानती थी कि अब आप विध्वंस का सन्देश लेकर मेवाड़ में पुनः आ गये हैं। आपकी वीरता के भयंकर आघात से खून की नदियां बहने वाली हैं। सारा मेवाड़ रक्त

सागर में डूबने वाला है। केवल मेवाड़ ही नहीं, सम्पूर्ण राजस्थान विनाश के कगार पर खड़ा है। मानवता का वेड़ा गर्क होने वाला है। काकाजी मैं इतना बड़ा पाप अपनी आत्मा पर, अपने अकिंचन शरीर पर नहीं लेना चाहती थी। बस इसलिये मैंने यह मार्ग चुना है।

महारानी जोर जोर से रोकर-बेटी ! क्या फूलों-सा कोमल शरीर इसीलिये पाया था ?

कृष्णा - माताजी शरीर नश्वर है। मानवता की भलाई के लिये यदि मेरा शरीर बलिदान हो जाय, तो इस शरीर की सुगंध से युग युग तक मेरा नाम अमर हो जाएगा। किसी बड़े उद्देश्य की सफलता में यदि छोटे तन का विनाश भी हो जाय तो सर्वोत्तम है और अपने वंश का गौरव अक्षुण्ण रखने के लिये हजारों वीरांगनाओं ने क्षत्राणियों ने जौहर ज्वाला को अपनाना अपना सौभाग्य समझा, मैं भी सिसोदिया वंश की हूँ, महाराणा प्रताप के वंश की सन्तान हूँ, आपकी पुत्री हूँ, मैं भी उच्च उद्देश्य के लिये बलिदान होना अपना सौभाग्य समझती हूँ। अच्छा मां ! बस ! अब कोई यह नहीं कहेगा, आपकी पुत्री कृष्णा ने आपके दूध को लजाया है। मैं अपने बलिदान से राजपूत कुल का मस्तक ऊंचा करने जा रही हूँ। मुझे आशीर्वाद दो माँ, अब मैं जा रही हूँ। अन्तिम प्रणाम। आँखें धीरे धीरे स्वतः बन्द हो जाती है।

इस समय सूर्य की किरणें पूर्व दिशा के आकाश में लालिमा लिये चारों ओर फैल रही है। पिछोला सागर लाल हो रहा था। उस समय जब कृष्णा उक्त अन्तिम शब्दों को उच्चारण कर रही थी, कि अचानक उस स्थान पर दौलतसिंहजी जोधपुर महाराजा मानसिंह तथा जयपुर नरेश जगतसिंहजी को साथ लेकर आ गये।

दौलतसिंह - क्या हाल है बेटी। यह क्या कर रही हो ?

कृष्णा – पुनः कुछ सचेत होकर-आप भी आ गये ताऊजी।

दौलतसिंह - आ गया हूँ बेटी और मुझे हार्दिक प्रसन्नता है कि मैंने महाराजा जगतसिंह और महाराजा मानसिंह में मेलजोल समझौता करवा दिया है। उन्हें भी साथ लाया हूँ, अब तेरी भांवरे ठीक मुहूर्त में शान्ति-पूर्वक निर्विघ्नता से पड़ेंगी बेटी-कृष्णा।

कृष्णा - परन्तु ! ताऊजी इस जीवन में तो मेरा मंगलमय विवाह संभव नहीं है। मेरी भाँवरें तो मुहूर्त से पहले ही मृत्यु से पड़ चुकी है। उधर

देखिये, यमराज की डोली-इन्द्र का विमान मुझे लेने आ गया है। मैं जा रही हूँ। आप सब मुझे आशीर्वाद दें। राजकुमारी कृष्णा अपने स्वर्णाभामय मुखमण्डल पर हाथ फेरकर चारों ओर सबको देखकर दोनों हाथ जोड़कर प्रणाम करती है और अन्त में पूर्ण शक्ति से कहती है-जय मेवाड़। जय राजस्थान। 'जय भारत माता।'
और उसके प्राण पखेरू उड़ जाते हैं।'

——

## सत्ताईस

जैसे ही कृष्णाकुमारी का प्राणान्त हुआ, उदयपुर के राजमहलों मे जलमहल, जगमन्दिर, जगनिवास ही क्या सारे मेवाड में शोक की लहर विद्युत गति से फैल गई। महाराणा भीमसिंह, महारानी चावडीजी, दौलतसिहजी, महाराजा मानसिंह, जगतसिंह, जवानदास, अजीतसिंह आदि प्रमुख व्यक्तिगण महल में उपस्थित थे, जब कृष्णा ने अपने प्राणों का वलिदान किया था। जैसे ही कृष्णा ने अन्तिम सांस ली, महारानी चावड़ी-जी जोर जोर से छाती कूट कूट कर चिल्लाने लगी - हाय कृष्णा, मेरी प्यारी वेटी ! वे कृष्णा को गोद लिये हुए वार-वार उसका मुख चूमने लगी। अपनी ममता का तीव्र प्रवाह प्रवाहित करते हुए इतना विलाप, इतना रुदन करने लगी कि सुनने वाले का पाषाण हृदय भी पिघलने लगता था। सभी लोगों ने कृष्णा के शव को एक पलंग पर रखकर बड़ी नाव में रखा फिर सावधानी से नाव खेते हुए सूर्यमहल के नीचे बने हुए पिछोला के घाट पर ले जाया गया। सूर्यमहल में जहां महारानीजी के निवास का वड़ा कमरा था, उसमें शव को ढक कर रखा गया।

शव के दर्शन करने के लिये महल में रहने वाले तथा बड़े ठाकुर जागीरदारों की महिलाएं महल में आने लगीं। सारे सूर्यमहल में कोलाहल मच गया। चारों ओर रोने-चिल्लाने, विलाप करने की ध्वनि सुनाई पड़ रही थी। महारानीजी का विलाप हृदय-विदारक था। महाराणाजी से जो भी राजा ठाकुर मिलने आते, उन्हें धैर्य वंधाते थे। महाराणाजी भी अपनी विवशता के आंसू वहाते थे।

रनिवास में हाहाकार मच रहा था। समस्त नर-नारी सिर पीटने लगे। महारानी तथा अन्य सैंकड़ों महिलाओं के हृदय भेदी रुदन से आकाश गूंजने लगा।

महारानी को बहुत दिनों से कृष्णा की अकाल मृत्यु की आशंका थी। वह सच हो गई। वह अपने पति की कायरता, अजीतसिंह के षड्यन्त्र, जवानदास की धोखेबाजी, राधा की गद्दारी से बहुत दु:खी थी।

महाराजा मानसिंह तथा महाराजा जगतसिंह भी सूर्यमहल में आये- कृष्णा के तेजस्वी नीलकमल के समान मुख मण्डल के उन्होंने अन्तिम दर्शन किये - उस समय दोनों की आँखों से अश्रु धारा बह निकली। दोनों ने एक दूसरे को देखा। घोर पश्चात्ताप की अग्नि में जलने लगे। मेवाड़ की चकाचौंध करने वाली कीर्ति-मय ज्योति के भव्य प्रकाशमय लम्बे इतिहास का आज काला दिवस था। स्वर्णाक्षरों में लिखे जाने वाले इतिहास का यह अंश कालिख से लिखा गया।

अपनी श्रद्धांजलि जब ये अर्पित कर रहे थे, ठीक उसी समय सूर्य-महल में लगभग सात बजे पठान सरदार अमीरखां भी आ गये। जब अमीर खां ने कृष्णा के मृतक शरीर को देखा तो उन का कठोर हृदय भी पिघल गया, उन्हें भी अपने कुकृत्य पर पश्चात्ताप हुआ। जब अजीतसिंह को मुंह लटकाये हुए खड़े देखा, तब अमीरखां से कुछ कहे बिना रहा हीं नहीं गया - वह जोश में इतने क्रुद्ध हो गये और सशक्त स्वर में बोले - महाराणा और महारानीजी, मैं आपके वंश की गौरवमय परम्परा का आदर करता हूँ पर आपका चूण्डावत सरदार यह दुराचारी-दुष्ट-अजीत-सिंह ही कृष्णा की मृत्यु का जिम्मेदार है। इसने ही मुझे लालच देकर यह बुरा काम करने पर जोर दिया था। अजीतसिंह ही नीच और दगा-बाज़ है। दुर्भाग्य से इसको महाराणाजी ने अपना दीवान बना रखा है। क्या असली राजपूत के लायक यही तुम्हारा काम है? पुराने सम्बन्धों को लात मारते हुए लाल आँखों से अजीतसिंह की ओर देखकर अमीर खां ने उसे बहुत ही धिक्कारा - जी भर कर बुरा भला कहा। भविष्य में ऐसे नर पिशाच से सावधान रहने को अमीरखां ने महाराणा को चेतावनी दी। महाराजा मानसिंह, जगतसिंह और अमीरखां ने अपनी ओर से हार्दिक दु:ख प्रकट किया और सबने अपने अपने कार्य कलापों पर पश्चाताप प्रकट

किया। महाराणा की ओर से दौलतसिंहजी ने दोनों महाराजाओं और अमीरखां को सम्मानपूर्वक महलों के बाहर तक विदा किया।

महाराजा मानसिंह और जगतसिंह ने भविष्य में युद्ध न करने तथा मिल-जुल कर अपने अपने राज्यों में उत्तम कार्य करने पर विचार विमर्श किया। अमीरखां का भी इस हत्याकाण्ड से मन उचट गया। उन्होंने भी भविष्य में ऐसे कार्यो में भाग नही लेने का निश्चय किया। इस प्रकार उदयपुर से मानसिंह की समस्त सेना, अमीरखां की सेना, तोपखाना आदि कुंभलगढ़, सादड़ी, पाली मारवाड़ होती हुई वापस जोधपुर चली गई, फिर महाराजा मानसिंह शान्तिपूर्वक जोधपुर में राज्य करने लगे।

इतिहास साक्षी है कि महाराजा मानसिंह के कई वर्षो पश्चात् एक लड़का उत्पन्न हुआ। जब वह सात-आठ वर्ष का हो गया, उसको शिक्षा दीक्षा देकर उत्तम वीर योद्धा, विद्वान् बनाने के विचार से अच्छा प्रशिक्षण दिया जा रहा था। बालक भी बड़ा होनहार, सुन्दर और बोलचाल का शिष्ट था। दुःख की बात है कि मारवाड़ के शासन के दावेदार राजपूतों ने षड्यंत्र और धोखेबाजी से महाराजा मानसिंह के पुत्र को एक संघर्ष में हत्या कर दी। अपने भाई महाराजा भीमसिंह के पुत्र की निर्मम हत्या का फल उन्हें इस रूप में अवश्य मिल गया। कुछ वर्षो पश्चात् महाराजा मानसिंह की भी मृत्यु हो गई। इस प्रकार मानसिंह के शासन और क्रियाकलापों का अन्त हुआ।

उधर महाराजा जगतसिंह भी पश्चाताप करते हुए धीरे-धीरे जयपुर आ गये और अपना राज-काज संभालने लगे। वह पुनः अपनी प्रेयसी रसकपूर और केसरबाई के साथ आनन्दपूर्वक अपना जीवन व्यतीत करने लगे।

अमीरखां भी अब मेवाड़, जोधपुर, जयपुर के राजाओं का पीछा छोड़कर इन्दौर के राजा यशवन्तराव होलकर से मेलजोल रखने लगे।

राजस्थान में अंग्रेजों ने धीरे-धीरे अपने पांव जमाये। यहाँ के राजाओं से कई संधियां की। अमीरखां की महान् शक्ति से प्रभावित होकर होकर अंग्रेजों ने उसे स्थायी रूप से एक स्थान का नवाब बनाने पर राजी कर लिया, उन्हें वर्तमान टोंक, छबड़ा, निम्बाहेड़ा, सिरोंज, पिड़ावा, अलीगढ़, टोंक राज्य के भू भाग देकर स्थायी रूप से शासन करने का अवसर

दे दिया। तीन पिंडारो डाकुओं में अमीरखां सर्वोच्च शक्तिशाली था। वितू नाम के डाकू को जंगल में चीता खा गया। तीसरे डाकू को अंग्रेजों ने रतलाम के पास जावरा राज्य दे दिया और उसको वहां का नवाब बनाकर सद्‌मार्ग पर लगा दिया।

कृष्णा की अर्थी बनाकर मेवाड़ निवासियों ने फूलों से भी कोमल कन्या कृष्णाकुमारी को चन्दन की चिता पर सजाकर उसकी कुन्दन सी देह का अन्तिम संस्कार उदयपुर में आयड़ के पास राजवंश के शमशान घाट पर किया। राज्य में एक महीने का शोक घोषित किया गया।

कृष्णाकुमारी की मृत्यु के चार माह पूर्व वीर शक्तावत सरदार संग्रामसिंहजी का अजीतसिंह ने तिरस्कार किया था, इसलिये वह पुनः मेवाड़ के बाहर मालवा के नीमच नगर में विश्राम कर रहे थे। जैसे ही कृष्णाकुमारी की मृत्यु का समाचार सुना, उनसे वहां रहा नहीं गया। वे तुरन्त अपने साथियों सहित उदयपुर आ गये। आते ही महाराणा, महारानी से मिलने के लिये रनिवास में गये। कृष्णा के विषपान द्वारा प्राणान्त पर गहरा दुःख प्रकट किया। उन्होंने बाप्पारावल के वंश के गौरव पर कालिख पोतने पर उन्हे बुरा भला कहा। भीमसिंहजी ने अपनी विवशताओं का वर्णन किया और कहा कि तीनों फौजों और अमीरखां के तोपखाने के विध्वंसकारी विनाश से बचने का इससे उत्तम उपाय उन्हे दूसरा दिखाई नही दिया।

राज सभा लगी हुई थी। उसमें जब अजीतसिंह ने प्रवेश किया, संग्रामसिंहजी को एकदम जोश आ गया। वे अपने आपे से बाहर हो गये। उन्होंने अजीतसिंहजी को सम्बोधित कर कहा, हाय! कायर! तुमने सिसोदिया वंश के निर्मल और पवित्र यश मंडित मस्तक पर कृष्णा की हत्या द्वारा धूल डाली है। सैकडों वर्षो से चले आ रहे बाप्पारावल के रुधिर को तुमने दूषित किया है। बिना अपराध के राजस्थान की सर्वोच्च सुन्दरी राजकमलिनी सरला कृष्णा का निर्ममता से वध करके घोर पाप किया है। इसका दण्ड तुम्हें ईश्वर द्वारा अवश्य मिलेगा। आज मेवाड़ के इतिहास में और वीरवर महाराणा प्रताप के पवित्र कुल मे जिस गंभीर कलंक की काली स्याही लगी है, युग युग तक किसी के भी द्वारा छुड़ाई नही जा सकेगी। अजीतसिंह नीचा सिर करके सुनते रहे। संग्रामसिंहजी

ने फिर उधर देखकर कहा-अब कोई भी सिसोदिया वीर अपना मस्तक गौरव से ऊंचा उठा कर नहीं चल सकेगा। हाय विधाता ने क्षत्रीय कुल को निर्मूल करने की क्या प्रतिज्ञा करली है? आज उसके कठोर लेख से क्षत्रियों की दुर्दशा इतनी निकट आ पहुंची है। वाप्पारावल ने अपनी भुजाओं की महान शक्ति से मेवाड़ राज्य की स्थापना की थी, जिसे इसी वश के राजाओं ने अपने रक्त से सींच कर इसकी बेल को अमर वेल बनाने का प्रयास किया था, उसी वश की शक्ति का आज इतना लोप हो गया कि बजाय तलवार लेकर रणभूमि में लड़ने के, अपनी ही कन्या का विषपान कराके वध कर दिया। यह कितने शर्म की बात है।

महाराणा राज्यसभा में वीरवर संग्रामसिंहजी की सत्य वीरोचित वाणी सुनकर बिलकुल शान्त रहे। एक भी शब्द उनके मुंह से उत्तर में नहीं निकला। केवल अपनी आंखों से निकलने वाली अश्रुधारा को रोकने का प्रयत्न करते रहे। सारे सभासद् दुखी मन से संग्रामसिंहजी की बातें सुन रहे थे।

कुछ समय पश्चात् संग्रामसिंह ने पाखंडी अजीतसिंह की ओर पुनः उन्मुख होकर हाथ से उनकी ओर संकेत करके वज्र गंभीर वाणी में गर्जना करते हुए कहा, अरे सिसोदिया कुलकलंक! तुममें राजपूतों का पवित्र रुधिर नहीं है। तुमने अमीरखां और मानसिंह से मिलकर कृष्णा की हत्या कराके क्षत्रीय वश को कलंकित किया है - दूषित किया है। ईश्वर करे तूं निःसंतान ही मरे। तुम्हारे सिर पर खाक पड़े और तुझ पापी के शरीर में कीड़े पड़ें। तेरे जैसे पापी जीवन का लोप तेरे जीवन के साथ ही हो जाय। यह वश की नाशकारी शीघ्रता तुमने क्यों की? क्या अमीरखां ने राजधानी पर आक्रमण कर दिया था? महाराणा प्रताप के वंशज होकर तुमने कायरता दिखाई है। क्या महाराजा मानसिंह और जगतसिंह ने मेवाड़ के रनिवास की पवित्रता को भ्रष्ट करने का प्रयत्न किया था। मान लो, उनकी ऐसी इच्छा थी भी, तो क्या अपने बड़े-बूढ़ों, वीर राजपूतों की भांति तुम अपने रनिवास की महिलाओं की लाज की रक्षा के लिये तलवार चलाने की हिम्मत नहीं रखते थे। अपने प्राणों का उत्सर्ग करने से घबराते थे? फिर इस कुल में जन्म ही क्यों लिया था? पहले के राजपूतों ने क्या इसी प्रकार यश को अर्जित किया था? क्या हमारा वंश इसी बल पर संसार में विख्यात हुआ था? क्या

वे इसी प्रकार राजाओं की गति को रोका करते थे ? क्या तू चित्तौड़ में महारानी पद्मिनी द्वारा जौहर ज्वाला में अपनी लज्जा की रक्षा के लिये हजारों महिलाओं द्वारा दिया गया बलिदान भूल गया ? केवल एक बार ही नहीं, तीन-तीन चार-चार बार जौहर की धधकती ज्वाला में हजारों महिलाओं ने अपने प्राणों का बलिदान करके भी वंश के गौरव की रक्षा की और तुम तथाकथित मर्द होकर भी डर गये और भोली कृष्णा के खून से अपनी प्यास बुझाई।

महाराणाजी ! आपको भी उचित तो यह था कि यदि उदयपुर पर आक्रमण भी हो जाता तो यथाशक्ति आक्रमण का उत्तर देना चाहिये। यदि तलवार भाले आदि हथियारों से दुश्मनों की सेनाओं का मुकाबला करते हुए रणभूमि में मर भी जाते तो तुम्हारा नाम इतिहास में अमर हो जाता और सर्वशक्तिमान ईश्वर बाप्पा रावल के वंश की कीर्ति की अनन्त-काल तक रक्षा करते रहते। परन्तु यह घिनौना और कायरता का कार्य करके भी जीवित रहने की इच्छा करते हो ? धिक्कार है - जिस शका से तुम्हारा हृदय धड़क रहा था, उस विपत्ति के आने तक तो ठहरे होते। भय और कायरता ने तुम्हारे सदगुणों पर पानी फेर दिया। नहीं तो किस कारण तुमने बाप्पा रावल के रुधिर की मर्यादा को, सम्मान को, नीचे गिराने का अशोभनीय कार्य किया है।

महाराणा और विश्वासघाती कुल कलंक अजीतसिंह बिलकुल चुप रहे। संग्रामसिंहजी की किसी भी बात का उत्तर नहीं दे सके। सभा समाप्त हुई। सब अपने अपने स्थानों पर चले गये। रनिवास में महारानीजी कृष्णा की मृत्यु के बाद से ही बहुत बीमार रहने लगीं और कुछ महीनों के अन्दर ही उन का देहान्त हो गया। कुछ समय बाद संग्रामसिंह भी इस संसार से चले गये।

वीरवर संग्रामसिंह का कथन अक्षरशः पूरा हुआ महाराणा के सब मिलाकर 95 (पिच्चानवें) लड़के लड़कियां उत्पन्न हुए थे। कृष्णाकुमारी की मृत्यु के चार पांच वर्ष में ही धीरे धीरे सभी की मृत्यु गोद में चले गये। महाराणा भीमसिंह के वंश में एक दासी पुत्र जवानदास बचा। महाराणा भीमसिंह को इसी पुत्र से कुछ आशा थी। जवानदास ने भी कृष्णा को पहले तलवार से मारने का प्रयत्न किया था। फिर चार बार

राधा से जहर दिलवाकर उसका प्राणान्त किया था। उसका पाप प्रकट हुआ और जवानदास जब भयंकर रूप से बीमार हुआ, तब अंग्रेजी सरकार के प्रतिनिधि के रूप में उदयपुर में एक वर्ष से कर्नल टाड उपस्थित थे। जवानदास के विषय में स्वयं कर्नल टाड ने लिखा है, मेवाड़ में सबसे पहले विशुचिका रोग से जवानदास पीड़ित हुआ था। वह अपनी बीमारी के मध्य मौत के मुंह तक चला गया था, उसका इलाज करवाया जा रहा था। आगे लिखते हैं कि मैं जवानदास के बिस्तर के पास कई घण्टों तक बैठा रहता था। जवानदास को अपनी बीमारी से कुछ आराम मिला। आनन्द की निद्रा उन्होंने प्राप्त की। आंखें खुलने पर जिस कृतज्ञता भरी दृष्टि से मुझे देखा था, मैं आजीवन भूल ही नहीं सकूंगा। बाद में जवानदास बीमारी से धीरे धीरे अच्छा हो गया था।

कुछ समय बाद इस राजकुमार जवानदास का मंत्री शिरजी मेहता भी विशुचिका रोग से पीड़ित हुआ और मर गया। कर्नल टाड ने लिखा है कि जवानदास को कपट जाल फैलाने में विशेष पारदर्शी यह शिरजी मेहता थे जो सदैव ही जवानदास को बुरी राय देते थे। ऐसा विदित होता था कि षड्यंत्र और छल कपट की शिक्षा तो उन्होंने मां के दूध के साथ प्राप्त की थी। ऐसे चाल-चलन के आदमी जब तक मेवाड़ से दूर नहीं होंगे तब तक मेवाड़ का भविष्य मंगलमय, सुखकारी नहीं होगा।

महाराणा भीमसिंह की केवल दो पुत्रियां जीवित रहीं जिन में ज्ञानकुंवर का विवाह जैसलमेर के राजकुमार से और रूपकुंवर का बीकानेर के राजकुमार से हुआ था।

अजीतसिंह के पांच सन्तानें थी। धीरे धीरे बीमार होकर सभी मर गईं। अजीतसिंह को भी पारिवारिक दृष्टि से जीवन के अन्तिम दिनों में सुख-शान्ति नहीं मिली। उसे अपने पापों का फल इसी जीवन में मिल गया। जो जैसा करता है, भगवान उसे वैसा फल देता है यह बात सत्य प्रमाणित होती है।

अन्त में महाराणा भीमसिंह ने अमीरखां, दौलतराव सिंधिया, यशवन्तराव होलकर तथा जोधपुर, जयपुर के राजाओं से संघर्ष नही करते

की इच्छा से अंग्रेजों से संधि कर ली। 12 जनवरी 1818 को मिस्टर चार्ल्स थिआसोफिल्स मेटकाफे तथा ठाकुर अजीतसिंह द्वारा महाराणा के प्रतिनिधित्व में हस्ताक्षरों के हो जाने से संधि सम्पन्न हुई। आजीवन भीमसिंह, अजीतसिंह शान्तिपूर्वक राज्य करते रहे। यही महिमा-मण्डित मेवाड़ के सुख दुःख की अमर कहानी है।